दृष्टि
The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

मार्च, 2020

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

फोन: 8750187501

ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- COVID-19 और भारत की तैयारी 5
- राजद्रोह कानून 7
- न्यायिक पारदर्शिता: एक ज्वलंत मुद्दा 9
- चुनाव सुधार वर्तमान आवश्यकता 12
- महिला पुलिस का प्रतिनिधित्व: विचारणीय तथ्य 16
- न्यायिक निष्पक्षता का सवाल 18
- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग: भूमिका व प्रभावकारिता 21
- न्याय की लंबी प्रक्रिया: एक चिंताजनक स्थिति 23
- उच्च शिक्षा में पुनर्संरचना की आवश्यकता 26
- भारत में लॉकडाउन 28

आर्थिक घटनाक्रम **31**

- बैंकिंग संकट: कारण और समाधान 31
- संकट का दौर और आर्थिक सहायता 33

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **37**

- अमेरिका-तालिबान समझौता और भारत 37
- क्रूड ऑयल प्राइज़ वॉर 40
- प्रवासी भारतीय: बढ़ती भूमिका 42
- जल संकट: कारण और समाधान 45
- कोरोना वायरस: अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का निर्धारक 48

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी **51**

- सतत विकास के लिये नवीकरणीय ऊर्जा एक बेहतर विकल्प 51
- जलवायु परिवर्तन: चुनौतियाँ और समाधान 54

सामाजिक न्याय **58**

- घरेलू हिंसा: कारण और समाधान 58
- सांप्रदायिक हिंसा: कारण और समाधान 60
- लैंगिक असमानता: कारण और समाधान 63
- शहरीकरण से उपजते संकट 65
- जनगणना कार्यक्रम का स्थगन: कारण व प्रभाव 68

आंतरिक सुरक्षा **72**

- नक्सलवाद: कारण और निवारण 72

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

COVID-19 और भारत की तैयारी

संदर्भ

COVID -19 वायरस आज भारत समेत दुनिया भर में स्वास्थ्य और जीवन के लिये गंभीर चुनौती बनकर खड़ा है। अब पूरी दुनिया में इसका असर भी दिखने लगा है। वैश्वीकरण के इस दौर में जहाँ आवागमन और संचार व्यवस्था सुगम हुई है, वहीं आपसी संपर्क बढ़ने से पूरा विश्व किसी गंभीर बीमारी के प्रति सुभेद्य हो गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation-WHO) के अनुसार, लगभग 70 देशों में 95000 से अधिक लोग कोरोना वायरस से संक्रमित पाए गए हैं।

दुखद बात यह है कि पूरे विश्व में इस संक्रमण से लगभग 3221 लोगों की मृत्यु हो चुकी है। जनसंख्या घनत्व, गरीबी और अशिक्षा जैसे कारकों के साथ भारत का अपर्याप्त स्वास्थ्य बुनियादी ढाँचा भारत को COVID -19 के लिये अत्यधिक संवेदनशील बनाता है। भारत ने अब तक COVID -19 संक्रमण के 28 पॉज़िटिव मामलों की सूचना दी है। स्वास्थ्य मंत्रालय अपने एकीकृत रोग निगरानी कार्यक्रम (Integrated Disease Surveillance Programme-IDSP) नेटवर्क के माध्यम से उन लोगों का पता लगाने का प्रयास कर रहा है जो उन 28 लोगों के संपर्क में आए हैं। चूँकि COVID -19 एक श्वसन आधारित वायरस है, इसलिये यह कुछ ही समय में फैल सकता है और महामारी में बदल सकता है। इस आलेख में कोरोना वायरस से बचाव और भारत सरकार द्वारा की गई तैयारियों का विश्लेषण किया जाएगा।

पृष्ठभूमि

- कोरोना वायरस (COVID -19) का प्रकोप तब सामने आया जब 31 दिसंबर, 2019 को चीन के हुबेई प्रांत के वुहान शहर में अज्ञात कारण से निमोनिया के मामलों में हुई अत्यधिक वृद्धि के कारण विश्व स्वास्थ्य संगठन को सूचित किया गया।
- तत्पश्चात विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा इसे वैश्विक स्वास्थ्य आपातकाल घोषित किया गया। शीघ्र ही यह बीमारी चीन और दुनिया के बाकी हिस्सों में फैल गई। पहले इस वायरस को SARS-CoV-2 नाम दिया गया, जिसका बाद में COVID-19 नाम से आधिकारिक नामकरण किया गया।
- पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन (Polymerase Chain Reaction-PCR) टेस्ट COVID-19 वायरस के लिये पहला परीक्षण है, जिसके तहत सभी संदिग्ध रोगियों का परीक्षण किया जाता है।
- यदि इस टेस्ट में परिणाम सकारात्मक रहता है तो पुष्टि के लिये नमूना पुणे स्थित राष्ट्रीय विषाणु विज्ञान संस्थान (National Institute of Virology-NIV) को भेजा जाता है, जो कि वर्तमान में जीनोम अनुक्रमण करने वाली एकमात्र सरकारी प्रयोगशाला है।

क्या है COVID-19

- WHO के अनुसार, COVID-19 में CO का तात्पर्य कोरोना से है, जबकि VI विषाणु को, D बीमारी को तथा संख्या 19 वर्ष 2019 (बीमारी के पता चलने का वर्ष) को चिन्हित करता है।
- WHO द्वारा इसका नामकरण वैश्विक एजेंसी विश्व पशु स्वास्थ्य संगठन (World Organisation for Animal Health) और खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organization) द्वारा वर्ष 2015 में जारी दिशा-निर्देशों के अंतर्गत किया गया है।

चीन क्यों है वायरस के प्रति अति संवेदनशील ?

- ऐसे स्थान जहाँ मनुष्यों और जानवरों में अनियमित रक्त और अन्य शारीरिक संपर्क जैसा संबंध स्थापित होता है, वहाँ पर इस वायरस का अधिक प्रसार होता है।
- चीन के पशु बाज़ार ऐसे ही स्थलों के उदाहरण हैं जहाँ जानवरों से मनुष्यों में वायरस के संचरण की अधिक संभावना है।

नोट :

- चीन के बाज़ारों में कई जानवरों का माँस बिकने के कारण ये बाज़ार मानव में वायरस की प्रायिकता को बढ़ा देते हैं।
- जब एक बड़ा मानव समुदाय इस वायरस के संचरण शृंखला में शामिल हो जाता है तो उत्परिवर्तन (Mutation) की स्थिति उत्पन्न होती है जो कि मानव समुदाय के लिये घातक सिद्ध होती है।

वायरस के प्रति भारत की सुभेद्यता

- दुनिया भर से आने वाले लोगों की बड़ी संख्या के कारण किसी भी बीमारी के प्रति भारत स्थित हवाई अड्डे एक हॉटस्पॉट के रूप में हो सकते हैं।
- भारत की आबादी का एक बड़ा वर्ग सार्वजनिक परिवहन का प्रयोग करता है, जो COVID-19 के प्रसार को तेज़ कर सकता है।
- हवाई अड्डों और बंदरगाहों पर लगे थर्मल स्क्रीनिंग जैसे उपकरण भी COVID-19 वायरस से संक्रमित व्यक्तियों की पहचान नहीं कर पा रहे हैं क्योंकि संक्रमित व्यक्ति में ऊष्मायन अवधि (Incubation Period) के दौरान इसके लक्षण प्रकट नहीं हो रहे हैं।
- COVID-19 वायरस की जाँच के लिये किया जा रहा आणविक परीक्षण भी संदेहास्पद है क्योंकि इसके अधिकांश परिणाम गलत रहे हैं।
- भारत में भौतिक और मानवीय संसाधन के स्तर पर स्वास्थ्य अवसंरचना अपर्याप्त है।
- लोगों में स्वास्थ्य व स्वच्छता के प्रति जागरूकता का अभाव है।

वायरस के लक्षण

- इसके सामान्य लक्षणों में खाँसी, बुखार और श्वसन क्रिया में रुकावट मुख्य लक्षण हैं।
- वहीं गंभीर संक्रमण में निमोनिया, किडनी का फेल होना शामिल है जिससे मनुष्य की मृत्यु तक हो सकती है।

संक्रमण रोकने हेतु उपाय

- कच्चे या अधपके पशु उत्पादों के सेवन से बचना।
- यदि बुखार, खाँसी और साँस लेने में कठिनाई हो रही है तो जल्दी से चिकित्सक से संपर्क करना और अपने स्वास्थ्य सेवा प्रदाता के साथ पिछली यात्रा के बारे में जानकारी साझा करना।
- बुखार और खाँसी से प्रभावित किसी भी व्यक्ति के निकट संपर्क से बचना।
- खाँसते या छींकते समय मुँह और नाक को ढकना।
- अल्कोहल-आधारित साबुन और पानी का उपयोग करके हाथ साफ करना।
- सभी लोगों को भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर जाने से बचना चाहिये।

क्या यह वायरस महामारी का रूप ले चुका है?

- विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अब तक इसे महामारी घोषित नहीं किया है। WHO के अनुसार, यदि कोई बीमारी जो पूरे विश्व में फैल जाती है, तभी उसे महामारी के अंतर्गत रखा जाता है। पर जिस तरह से यह बीमारी चीन के बाहर भी अपने पैर पसार रही है, वह निश्चित ही चिंता का विषय है।
- चूँकि यह बीमारी कमज़ोर इम्यून सिस्टम (प्रतिरक्षा तंत्र) वाले लोगों, बच्चों और बुजुर्गों को आसानी से अपना शिकार बनाती है, इसलिये इससे घबराने की जगह इससे बचाव किया जाना बेहतर विकल्प है।
- इस बीमारी से बचा जा सकता है। दुनिया भर में करीब 51,000 लोग इस बीमारी से ठीक हो चुके हैं। जो इस बात का स्पष्ट सबूत है कि इससे निपटा जा सकता है।

सरकार द्वारा उठाए जाने वाले संभावित कदम

- अभी तक COVID -19 के विरुद्ध कोई निश्चित इलाज या वैक्सीन उपलब्ध नहीं है। इसलिये सरकार की प्रतिक्रिया रणनीति निस्संदेह जोखिम के संचार, स्वास्थ्य शिक्षा, सामाजिक गड़बड़ी, और घर के अलगाव जैसे बुनियादी उपायों पर निर्भर करती है।
- प्राकृतिक या मानवजनित बड़ी आपदाओं से निपटने के लिये बनाए गए राष्ट्रीय संकट प्रबंधन समिति (National Crisis Management Committee-NCMC) के माध्यम से सामाजिक संगठनों, विभिन्न मंत्रालयों और विभागों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिये।

नोट :

- एक समर्पित वेब पोर्टल स्थापित किया जाना चाहिये, जिसमें प्रमुख संकेतक, रोग की पहचान संबंधी दिशा-निर्देश, जोखिम संचार सामग्री और उपायों की कार्ययोजना शामिल हो।
- सरकार को अधिक-से-अधिक अत्याधुनिक उपकरणों से लैस प्रयोगशालाओं को स्थापित करना चाहिये, ताकि व्यक्ति में संक्रमण की पूरी तरह से पुष्टि हो सके।
- सरकार को आइसोलेशन वार्ड की सुविधा के साथ, सेपरेशन किट, मास्क इत्यादि की व्यवस्था करनी चाहिये।
- सरकार द्वारा सभी हवाई अड्डों और बंदरगाहों पर विदेश से आने वाले सभी व्यक्तियों की गहन जाँच की व्यवस्था करनी चाहिये।
- स्वास्थ्य मंत्रालय को ट्रैवल एडवाइज़री भी ज़ारी करना चाहिये।

आगे की राह

- कोरोना वायरस से बचाव की तैयारी न केवल सरकार का उत्तरदायित्व है बल्कि सभी संस्थानों, संगठनों, निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों, यहाँ तक कि सभी व्यक्तियों को आकस्मिक और अग्रिम तैयारी योजनाएँ बनाना चाहिये।
- बड़े पैमाने पर व्यवहार परिवर्तन एक सफल प्रतिक्रिया की आधारशिला होगी। इसके लिये उचित जोखिम उपायों और सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के प्रति एक नवीन एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।
- सही जानकारी ही बचाव का बेहतर विकल्प है, इसलिये सरकार, सामाजिक संगठनों तथा लोगों को सही दिशा-निर्देशों का प्रसार करना चाहिये।

राजद्रोह कानून

संदर्भ

'राजद्रोह' इन दिनों चार अक्षरों का यह शब्द हर जगह चर्चा का विषय बना हुआ है। देश के बड़े राजनीतिक दल से लेकर स्थानीय स्तर के राजनीतिक संगठन तक इस विषय पर बहस कर रहे हैं। आम से लेकर खास तक हर कोई राजद्रोह शब्द के अलग-अलग मायने निकाल रहा है। हाल ही में नागरिकता संशोधन अधिनियम पारित होने के बाद पुलिस के द्वारा कई व्यक्तियों पर राजद्रोह कानून के अंतर्गत कार्यवाई की गई। इस कड़ी में कर्नाटक के बीदर स्थित एक स्कूल के प्रधानाचार्य व बच्चों के अभिभावकों पर भी राजद्रोह का मुकदमा दर्ज़ करने का मामला सामने आया है।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार, नागरिकता कानून पारित होने के बाद राजद्रोह के 194 मामले दर्ज़ किये गए। आँकड़े यह भी बताते हैं कि पिछले चार वर्षों में राजद्रोह के मुकदमों की संख्या में वृद्धि हुई है, परंतु केवल चार मामलों में ही दोष सिद्ध हो पाया है। वस्तुत: भारत में इस कानून की नींव रखने वाले देश इंग्लैंड ने भी वर्ष 2009 में अपने यहाँ राजद्रोह कानून को खत्म कर दिया। जो लोग इस कानून के पक्ष में नहीं हैं, उनकी सबसे बड़ी दलील है कि इसे अभिव्यक्ति की आजादी के विरुद्ध इस्तेमाल किया जाता रहा है। क्या वाकई इस दलील में दम है ? चलिये इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिये इस आलेख में भारत की स्वतंत्रता से पहले और बाद के कुछ मामलों पर नज़र डालते हैं और इसकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन करते हैं।

क्या है राजद्रोह ?

- देश में राजद्रोह को भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code-IPC) की धारा 124A में परिभाषित किया गया है।
- भारतीय दंड संहिता की धारा 124A के अनुसार, जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरूपण द्वारा भारत में विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा या अवमान पैदा करेगा या पैदा करने का प्रयत्न करेगा या अप्रीति प्रदीप्त करेगा या प्रदीप्त करने का प्रयत्न करेगा, उसे आजीवन कारावास या तीन वर्ष तक की कैद और ज़ुर्माना अथवा दोनों से दंडित किया जाएगा। इस धारा के अंतर्गत 3 स्पष्टीकरण दिये गए हैं, जो इस प्रकार हैं-
  - स्पष्टीकरण 1- अप्रीति (Disaffection) पद के अंतर्गत अभक्ति और शत्रुता की समस्त भावनाएँ आती हैं।
  - स्पष्टीकरण 2- घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किये बिना या प्रदीप्त करने का प्रयत्न किये बिना, सरकार के कामों के प्रति विधिपूर्ण साधनों द्वारा उनको परिवर्तित कराने की दृष्टि से अननुमोदन प्रकट करने वाली टीका-टिप्पणियाँ इस धारा के अधीन अपराध नहीं हैं।

नोट :

- स्पष्टीकरण 3- घृणा, अवमान या अप्रीति को प्रदीप्त किये बिना या प्रदीप्त करने का प्रयत्न किये बिना, सरकार की प्रशासनिक या अन्य क्रिया के प्रति अननुमोदन प्रकट करने वाली टीका-टिप्पणियाँ इस धारा के अधीन अपराध कारित नहीं करती।

- भारत में राजद्रोह एक संज्ञेय अपराध है अर्थात् इसके तहत गिरफ्तारी के लिये वारंट की आवश्यकता नहीं होती है, साथ ही इसके तहत दोनों पक्षों के मध्य आपसी सुलह का भी कोई प्रावधान नहीं है।
- इसके अनुसार, सरकार या प्रशासन के विरुद्ध किसी भी प्रकार की आलोचनात्मक टिप्पणी करना अपराध नहीं है।

पृष्ठभूमि

- 17वीं शताब्दी में इंग्लैंड में राजद्रोह कानून को अधिनियमित किया गया, क्योंकि वहाँ के तत्कालीन कानूनविदों का मानना था कि सरकार और साम्राज्य के विरुद्ध कोई भी नकारात्मक विचार या टिप्पणी सत्ता के लिये हानिकारक हो सकती है।
- भारत में राजद्रोह कानून की उत्पत्ति 19वीं शताब्दी के वहाबी आंदोलन से जुड़ी है।
- मूल रूप से यह कानून वर्ष 1837 में ब्रिटिश इतिहासकार और राजनीतिज्ञ थॉमस मैकाले द्वारा तैयार किया गया था, लेकिन वर्ष 1860 में IPC लागू करने के दौरान इस कानून को उसमें शामिल नहीं किया गया।
- वर्ष 1870 में सर जेम्स स्टीफन ने स्वतंत्रता सेनानियों के विचारों का दमन करने के लिये एक विशिष्ट खंड की आवश्यकता महसूस हुई तो उन्होंने भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1870 के अंतर्गत धारा 124A को IPC में शामिल किया।
- ब्रिटिश सरकार ने इस कानून का उपयोग कई स्वतंत्रता सेनानियों को दोषी ठहराने और उन्हें सज़ा देने के लिये किया।

राजद्रोह से जुड़े चर्चित वाद

- महारानी बनाम जोगेंद्र चंद्र बोस, 1891- सर्वप्रथम इस कानून का प्रयोग वर्ष 1891 में एक अखबार के संपादक जोगेंद्र चंद्र बोस के विरुद्ध किया गया, क्योंकि उन पर आरोप था कि उन्होंने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लेख लिखा था।
- महारानी बनाम बाल गंगाधर तिलक, 1897- बाल गंगाधर तिलक पर 3 बार (वर्ष 1897, 1908 और 1916) में राजद्रोह के मुकदमे चलाए थे। उन पर भारत में ब्रिटिश सरकार की 'अवमानना ' करने के आरोप लगे थे। ये आरोप उनके अखबारों में लिखे व्याख्यान और भाषणों को आधार बनाते हुए तय किए गए थे।
- महारानी बनाम मोहनदास करमचंद गाँधी, 1922- महात्मा गांधी पर वर्ष 1922 में यंग इंडिया नामक पत्रिका में राजनीतिक रूप से 'संवेदनशील' लेख लिखने के कारण राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उन पर आरोप लगे कि उनके लेख ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध असंतोष पैदा करने वाले थे और उन्हें 6 वर्ष के कारावास की सजा भी सुनाई गई।
- केदार नाथ सिंह बनाम बिहार राज्य,1962- यह मामला स्वतंत्र भारत के किसी न्यायालय में राजद्रोह का पहला मामला था। इस मामले में पहली बार देश में राजद्रोह के कानून की संवैधानिकता को चुनौती दी गई और मामले की सुनवाई करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने देश और देश की सरकार के मध्य अंतर को भी स्पष्ट किया। बिहार में फॉरवर्ड कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य केदार नाथ सिंह पर तत्कालीन सत्ताधारी सरकार की निंदा करने और क्रांति का आह्वान करने हेतु भाषण देने का आरोप लगाया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने केदारनाथ वाद में निर्णय देते हुए कहा कि- ' 'किसी नागरिक को सरकार की आलोचना करने और उसके विरुद्ध बोलने का पूरा हक है, जब तक कि वह हिंसा को बढ़ावा ना दे रहा हो।''
- बलवंत सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य, 1984- पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या वाले दिन (31 अक्टूबर 1984) चंडीगढ़ में बलवंत सिंह नाम के एक शख्स ने अपने साथी के साथ मिलकर 'खालिस्तान जिंदाबाद' तथा के नारे लगाए थे। इस मामले में इन दोनों पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय ने इन लोगों को राजद्रोह के तहत सज़ा देने से इनकार कर दिया था।
- उपर्युक्त मामलों के अतिरिक्त असीम त्रिवेदी, अरविन्द केजरीवाल, अरुण जेटली पर भी राजद्रोह के मामले दर्ज़ हुए परंतु विभिन्न न्यायालयों के द्वारा इन मामलों को खारिज़ कर दिया गया।

राजद्रोह कानून के पक्ष में तर्क

- राजद्रोह कानून के पक्ष में बुद्धिजीवियों के एक वर्ग का मानना है कि IPC की धारा 124A सरकार को राष्ट्र विरोधी, अलगाववादी और आतंकवादी तत्त्वों का मुकाबला करने की शक्ति प्रदान करता है।

नोट :

- यह लोकतांत्रिक रूप से चुनी हुई सरकार को हिंसा और अवैध तरीकों से उखाड़ फेंकने के प्रयासों से बचाता है। विदित है कि कानून द्वारा स्थापित सरकार का स्थायी अस्तित्व राज्य की स्थिरता की एक अनिवार्य शर्त है।
- विचारकों के अनुसार, यदि न्यायालय की अवमानना के लिये दंडात्मक कार्रवाई सही है, तो फिर सरकार की अवमानना करने पर भी दंडात्मक कार्रवाई होनी चाहिये।
- आज विभिन्न राज्य माओवादी विद्रोह का सामना कर रहे हैं और इनसे निपटने के लिये यह कानून आवश्यक है।

राजद्रोह कानून के विपक्ष में तर्क

- राजद्रोह कानून की आलोचना करने वाले विचारकों का मानना है कि यह गांधी दर्शन के मूल सिद्धांत- असंतोष का अधिकार की अवहेलना करता है।
- राजद्रोह कानून अनिवार्य रूप से सरकार के लिये अलोकप्रिय स्वतंत्र भाषण और स्वतंत्र विचार को दबाने का एक उपकरण है।
- धारा 124A औपनिवेशिक विरासत का एक अवशेष है एवं भारतीय लोकतंत्र में अनुपयुक्त है। यह संविधान द्वारा प्रदत्त विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रश्नचिह्न खड़ा करता है।
- एक जीवंत लोकतंत्र के लिये आवश्यक है कि उसमें सरकार की आलोचना और उसके प्रति असंतोष को भी स्थान दिया जाए, परंतु कई बार इस कानून का गलत प्रयोग ऐसा संभव नहीं होने देता।
- दरअसल धारा-124A में जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है, उनकी स्पष्टता को लेकर सवाल उठते रहे हैं। धारा-124A में स्पष्टता न होने के कारण इस क़ानून के दुरुपयोग की संभावनाएँ भी बढ़ जाती हैं। कानून व्यवस्था के राज्य सूची में होने के कारण इस कानून का राज्य स्तर पर गलत इस्तेमाल किये जाने के मामले ज़्यादा देखे जाते हैं।
- इस कानून को लागू करने वाले देश इंग्लैंड ने भी अपने देश में इस कानून को समाप्त कर दिया है, जिसके कारण हमारे पास कोई भी कारण नहीं बचता कि हम इस वर्षों पुराने औपनिवेशिक कानून के बोझ को आज भी ढोते रहें।
- कई बार देश में राजद्रोह कानून के अनुचित प्रयोग की बात भी सामने आई है। प्राय: इसका प्रयोग सरकार की आलोचना को दबाने तथा राजनैतिक प्रतिशोध की भावना से किया जाता है।

आगे की राह

- वर्तमान में राजद्रोह की परिभाषा अति व्यापक है। अत: इस परिभाषा को संकीर्ण करना आवश्यक है और इसमें केवल भारत की क्षेत्रीय अखंडता और देश की संप्रभुता जैसे विषय ही शामिल करने चाहिये।
- कानून का अनुपालन सुनिश्चित कराने वाली एजेंसियों को राजद्रोह के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के दिशा-निर्देशों की जानकारी प्रदान करना आवश्यक है।
- अंत में गाँधी जी के शब्दों में- "कानून के ज़रिए तंत्र के प्रति समर्पण पैदा नहीं किया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति को तंत्र या सरकार के प्रति असंतोष है तो उस व्यक्ति को असंतोष व्यक्त करने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिये, जब तक कि वह हिंसा का कारण न बने।"

न्यायिक पारदर्शिता: एक ज्वलंत मुद्दा

संदर्भ

किसी भी लोकतांत्रिक देश की न्यायिक व्यवस्था में पारदर्शिता व न्याय तक पहुँच प्रत्येक नागरिक का अधिकार है तथा इसे सुनिश्चित करना राज्य का उत्तरदायित्व होता है। भारत में न्यायिक व्यवस्था व न्यायिक प्रक्रिया दोनों जटिल हैं। न्यायिक व्यवस्था में पारदर्शिता व न्याय तक पहुँच जनता के एक बड़े वर्ग के लिये अभी भी दुर्लभ है। हाल ही में न्याय के अनुपालन में पारदर्शिता व पहुँच सुनिश्चित करने के लिये दायर मुख्य सूचना आयुक्त बनाम गुजरात उच्च न्यायालय वाद पर सुनवाई करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने दुर्भाग्यपूर्ण रूप से, नागरिकों को सूचना के अधिकार अधिनियम (Right to Information- RTI) के अंतर्गत न्यायालय के रिकॉर्ड की सूचना प्राप्त करने से रोक दिया है। हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि पूर्व की भाँति संविधान के अनुच्छेद 225 द्वारा प्रत्येक उच्च न्यायालय के नियमों के अधीन रहते हुए न्यायालय के रिकॉर्ड की सूचना प्राप्त की जा सकती है।

नोट :

सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि न्यायपालिका RTI के दायरे में न तो पहले आती थी और न अब। किंतु न्यायपालिका का न्यायिक प्रशासन सार्वजनिक प्राधिकरण होने के कारण RTI के अंतर्गत आता है। ऐसे में प्रश्न उठता है कि RTI अधिनियम के महत्त्व को रेखांकित कर उसके दायरे को विस्तारित करने वाली न्यायपालिका आखिर क्यों स्वयं को RTI अधिनियम के दायरे से बाहर रखने का प्रयास करती है। इस आलेख में हम इन प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयत्न करेंगे।

पृष्ठभूमि

- तीन जजों की खंडपीठ ने मुख्य सूचना आयुक्त बनाम गुजरात उच्च न्यायालय व अन्य के मामले में कहा कि न्यायालय के दस्तावेज़ों की प्रमाणित प्रतियाँ प्राप्त करने के लिये संविधान के अनुच्छेद 225 के अंतर्गत प्रत्येक उच्च न्यायालय के नियमों के अधीन आवेदन किया जाना चाहिये।

अनुच्छेद 225 में उल्लिखित प्रावधान

- इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए और इस संविधान द्वारा समुचित विधान-मंडल को प्रदत्त शक्तियों के आधार पर उस विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी विद्यमान उच्च न्यायालय की अधिकारिता और उसमें प्रशासित विधि तथा उस न्यायालय में न्याय प्रशासन के संबंध में उसके न्यायाधीशों की अपनी-अपनी शक्तियाँ, जिनके अंतर्गत न्यायालय के नियम बनाने की शक्ति तथा उस न्यायालय और उसके सदस्यों की बैठकों का चाहे वे अकेले बैठें या खंड न्यायालयों में बैठें विनियमन करने की शक्ति है, वहीं होंगी जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले थीं।

[परंतु राजस्व संबंधी अथवा उसका संग्रहण करने में आदिष्ट या किए गए किसी कार्य संबंधी विषय की बाबत उच्च न्यायालयों में से किसी की आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग, इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले, जिस किसी निर्बंधन के अधीन था, वह निर्बंधन ऐसी अधिकारिता के प्रयोग को ऐसे प्रारंभ के पश्चात लागू नहीं होगा।]

- खंडपीठ ने इस संबंध में नवंबर 2019 में भारत के मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय को RTI अधिनियम में शामिल करने के निर्णय को आधार नहीं बनाया बल्कि दिल्ली उच्च न्यायालय के वर्ष 2017 के फैसले का संदर्भ दिया, जिसमें न्यायालय ने एक याचिकाकर्त्ता को इस बात की जानकारी देने से इनकार कर दिया था कि उसकी याचिका क्यों खारिज की गई।
- पीठ ने गुजरात उच्च न्यायालय के नियम 151 की वैधता को बरकरार रखा।
- इस नियम के अनुसार, निर्धारित कोर्ट फीस के साथ आवेदन दाखिल करने पर वादी को दस्तावेज़ों/निर्णयों आदि की प्रतियाँ प्राप्त करने का अधिकार है।
- सर्वोच्च न्यायालय ने अपने आदेश में कहा कि गुजरात उच्च न्यायालय और RTI अधिनियम की धारा 22 के प्रावधानों के मध्य किसी भी प्रकार की असंगतता नहीं है। यदि असंगतता होती तो निसंदेह RTI अधिनियम की धारा 22 के प्रावधान स्वत: लागू होते।

निर्णय का प्रभाव

- सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के परिणामस्वरूप अब उच्च न्यायालय के रिकॉर्ड संबंधी दस्तावेज़ केवल उस वाद से जुड़े पक्षकारों को ही प्राप्त हो सकते हैं।
- यदि किसी तीसरे पक्ष को उच्च न्यायालय के रिकॉर्ड संबंधी दस्तावेज़ चाहिये तो उसे अपनी आवश्यकता की प्रासंगिकता को न्यायालय के सम्मुख साबित करना होगा।

पारदर्शिता से तात्पर्य

- पारदर्शिता का अर्थ है - खुलापन, सूचना की आसानी से प्राप्ति और उत्तरदायित्व। किसी भी लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था में जवाबदेही और पारदर्शिता बुनियादी मूल्य हैं। सरकार हो या नौकरशाही, राजनीतिक दल हो या न्यायिक तंत्र सभी से आशा की जाती है कि वे लोगों के प्रति जवाबदेह और पारदर्शी होंगे। न्यायिक पारदर्शिता के अंतर्गत न्यायिक नियुक्तियों में खुलापन, न्यायिक दस्तावेज़ों तक जनता की सुगम पहुँच तथा जनता के प्रति न्यायालय का उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार इत्यादि शामिल हैं।

न्यायिक पारदर्शिता के पक्ष में तर्क

- न्यायालयों द्वारा दिये गए निर्णय नागरिकों के व्यक्तिगत जीवन को प्रभावित करते हैं, इसलिये न्यायिक दस्तावेज़ों तक नागरिकों की पहुँच सुगम होनी चाहिये।

नोट :

- न्यायिक दस्तावेज़ों का प्रयोग शैक्षिक संस्थानों में शोध व अनुसंधान के लिये, विभिन्न समाचार चैनलों के संवाददाताओं तथा गैर सरकारी संगठनों द्वारा किया जाता है।
- आपराधिक मामलों में पुलिस की कार्य प्रणाली की न्यायालय में जाँच की जाती है तथा न्यायालय में दायर रिट याचिकाओं पर सुनवाई की जाती है। न्यायिक पारदर्शिता के द्वारा ही हमें इस संदर्भ में जानकारी प्राप्त होती है।
- राज्य के शक्तिशाली अंगों के रूप में किसी भी अन्य निकाय की तरह न्यायालयों का कामकाज भी पारदर्शी और सार्वजनिक जाँच के लिये खुला होना चाहिये। न्यायालयों की वैधता सत्यापित तथ्यों और कानून के सिद्धांतों के आधार पर उचित आदेश प्रदान करने की उनकी क्षमता पर आधारित है।
- उच्च न्यायपालिका में कानूनी दलीलों का परीक्षण पहले दिये जा चुके निर्णयों या एक ही न्यायालय की बड़ी बेंचों के निर्णयों के आधार पर किया जाता है। इसलिये पारदर्शी व्यवस्था को न अपनाने का कोई कारण नहीं है।
- न्यायपालिका में न्यायालयों का एक पदानुक्रम (Hierarchy) होता है। ट्रायल कोर्ट से लेकर अपीलीय कोर्ट तक पहुँचते-पहुँचते तथ्यों और कानून का विभिन्न चरणों में परीक्षण हो जाता है।
- न्यायालयों का RTI अधिनियम से पूर्णत: छूट खुले न्याय (Open Justice) के मूल सिद्धांत को खत्म करने के लिये पर्याप्त है।

न्यायिक पारदर्शिता के विपक्ष में तर्क

- कॉलेजियम व्यवस्था के संबंध में न्यायालय ने स्पष्ट किया कि कॉलेजियम में सूचनाओं को दो रूपों में देखा जा सकता है - प्रथम 'इनपुट' एवं दूसरा 'आउटपुट'। कॉलेजियम का 'आउटपुट' न्यायाधीशों के चयन से संबंधित अंतिम निर्णय है जो सार्वजनिक होती है किंतु 'इनपुट' के अंतर्गत न्यायाधीशों की विभिन्न सूचनाओं का डेटा होता है जिसे सार्वजनिक नहीं किया जा सकता है क्योंकि इससे न्यायाधीशों की निजता के अधिकार का हनन होगा।
- न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि RTI के अंतर्गत न्यायाधीशों की संपत्ति आदि की जानकारी सार्वजनिक नहीं की जा सकती है क्योंकि इससे न्यायाधीशों के निजता का अधिकार प्रभावित होगा।
- न्यायालय ने कहा है कि प्रत्येक RTI के अंतर्गत 'मोटिव' या 'उद्देश्य' को ध्यान में रखना होगा। अगर कहीं जनहित में सूचनाओं की मांग हो, वहीं दूसरी ओर स्वतंत्र न्यायपालिका की अवधारणा हेतु किसी मामले में गोपनीयता की आवश्यकता होगी तो गोपनीयता को वरीयता दी जाएगी।
- स्वतंत्र न्यायपालिका की अवधारणा को केशवानंद भारती मामले में "संविधान के आधारभूत ढाँचे" के अंतर्गत रखा गया था। अत: किसी भी रूप में इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने इसे ध्यान में रखते हुए स्पष्ट किया कि पारदर्शिता के नाम पर न्यायपालिका की गोपनीयता को भंग नहीं किया जा सकता है।

पारदर्शिता की राह में बाधाएँ

- न्यायपालिका में जनता का भरोसा बनाए रखने के लिये खुले न्यायालयों (Open Courts) का सिद्धांत महत्त्वपूर्ण है। प्रसिद्ध दार्शनिक जेरेमी बेंथम ने खुले न्यायालयों के महत्त्व को कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है- "गोपनीयता के अंधेरे में, तमाम तरह के क्षुद्र स्वार्थ और बुरी नीयतें खुलकर सामने आ जाती हैं। प्रचार-प्रसार के माध्यम से ही न्यायिक अन्याय पर अंकुश लग सकता है। जहाँ सूचना का प्रसार न हो, वहाँ न्याय भी नहीं हो सकता है। प्रचार ही न्याय की आत्मा है।"
- पिछले दशक में, खुले न्यायालयों के सिद्धांत पर न्यायपालिका की ओर से ही सबसे अधिक हमले हुए हैं। यह कई तरह से होता है जैसे- सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय में आम आदमी के प्रवेश को सुरक्षा का हवाला देकर रोक दिया जाता है, संवेदनशील मामलों में न्यायिक कार्यवाही की रिपोर्टिंग से रोकने वाले आदेश, सरकार से सीलबंद लिफाफे में जवाब मंज़ूर करना, न्यायपालिका को RTI अधिनियम के दायरे से बाहर रखना इत्यादि।
- इसके अतिरिक्त भारत उन चुनिंदा देशों में से एक है, जहाँ न्यायाधीशों को कॉलेजियम तंत्र के माध्यम से न्यायिक नियुक्तियों पर अंतिम अधिकार प्राप्त है। कॉलेजियम तंत्र का उल्लेख संविधान में कहीं भी नहीं किया गया है और यह अपने आप में एक अति गोपनीय व्यवस्था भी है।
- न्यायिक नियुक्तियाँ अक्सर तदर्थ और मनमाने तरीके से की जाती हैं ऐसा मानने वालों की संख्या भी तेज़ी से बढ़ोतरी हो रही है।

नोट :

- जजों की नियुक्ति में पारदर्शिता नहीं होने और इनमें परिवारवाद को वरीयता देने का मुद्दा समय-समय पर चर्चा में रहा है, इसे अंकल सिंड्रोम कहते हैं। इसमें होता यह है कि जब जज बनाने के लिये अधिवक्ताओं के नाम प्रस्तावित किये जाते हैं तो किसी भी स्तर पर किसी से कोई राय नहीं ली जाती। इनमें जिन लोगों का नाम प्रस्तावित किया जाता है उनमें से कई पूर्व न्यायाधीशों के परिवार से होते हैं या उनके संबंधी होते हैं।

पारदर्शिता में वृद्धि हेतु सर्वोच्च न्यायालय के पूर्ववर्ती निर्णय

- विदित है कि नवंबर 2019 को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक निर्णय में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय को सार्वजनिक प्राधिकरण (Public Authority) बताते हुए इसे RTI के दायरे में ला दिया है। इस निर्णय के बाद अब RTI के तहत आवेदन देकर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय से सूचना मांगी जा सकती है।
- दरअसल न्यायिक व्यवस्था के दो पक्ष होते हैं- एक न्यायपालिका दूसरा न्यायपालिका का प्रशासन। अब न्यायपालिका का न्यायिक प्रशासन सार्वजनिक प्राधिकरण होने के कारण RTI के अंतर्गत आता है।

क्या है सार्वजनिक प्राधिकरण ?

- सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 2(h) के तहत सार्वजनिक प्राधिकरण से तात्पर्य निम्नलिखित संस्थाओं से है-
  - जो संविधान या इसके अधीन बनाए गए किसी अन्य विधान द्वारा निर्मित हो;
  - राज्य विधानमंडल द्वारा या इसके अधीन बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा निर्मित हो;
  - केंद्र या राज्य सरकार द्वारा जारी किसी अधिसूचना या आदेश द्वारा निर्मित हो;
  - पूर्णत: या अल्पत: सरकारी सहायता प्राप्त हो।
- वर्ष 2018 में सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायिक पारदर्शिता को बढ़ावा देने के लिये संवैधानिक महत्त्व वाले मामलों में की जाने वाली न्यायिक कार्यवाही की लाइव स्ट्रीमिंग को अनुमति दे दी है।
- कॉलेजियम पद्धति की गोपनीयता बरकरार रखते हुए इसमें पारदर्शिता लाने के लिये अब उच्च न्यायालयों के जजों को नियमित करने, उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों की पदोन्नति, उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों/न्यायाधीशों के स्थानांतरण और सर्वोच्च न्यायालय में उनकी नियुक्तियों के बारे में कॉलेजियम द्वारा लिये गए निर्णय कारण सहित उस समय शीर्ष अदालत की वेबसाइट पर डाले जाने लगे हैं।

आगे की राह

- न्यायिक कदाचार के मामलों से निपटने और न्यायिक जवाबदेही के विचार को बाधित करने वालों के लिये न्यायपालिका के भीतर एक पारदर्शी प्रणाली का होना अनिवार्य है। इसका एकमात्र तरीका न्यायपालिका के आवरण को थोड़ा खोलना है।
- जजों की नियुक्ति और स्थानांतरण जैसे महत्त्वपूर्ण मामलों को न्यायिक परिवार के सीमित दायरे से बाहर निकालकर उसमें आम लोगों को भागीदार बनाने के लिये कॉलेजियम व्यवस्था की निर्णय प्रक्रिया में और अधिक पारदर्शिता लाने की बेहद आवश्यकता है।
- न्यायाधीशों को बिना किसी संकोच के निजता का अधिकार नामक आवरण से बाहर निकल कर स्वयं को RTI अधिनियम के दायरे में लाना चाहिये।
- न्यायिक उत्तरदायित्व तय करने के लिये कानून बनाने की आवश्यकता है ताकि न्यायिक प्रणाली पर लोगों का भरोसा बना रहे और न्यायिक भ्रष्टाचार की प्रभावी जाँच हो सके।
- अंत में लॉर्ड वुल्फ के शब्दों में- "न्यायपालिका की स्वतंत्रता न्यायपालिका की संपत्ति नहीं है, बल्कि न्यायपालिका द्वारा जनता के विश्वास के लिये रखी जाने वाली एक वस्तु है।"

चुनाव सुधार वर्तमान आवश्यकता

संदर्भ

हम अक्सर अपनी राजनीतिक प्रणाली को वर्तमान हालात के लिये दोषी करार देते हैं, लेकिन क्या यह प्रणाली भाव-शून्यता में काम कर रही है ? जानकारों की माने तो इस समस्या में समाज की भी स्पष्ट भागीदारी है। हमारी राजनीतिक प्रणाली का व्यवहार समाज के प्रति उनकी प्रतिक्रिया है। इस राजनीतिक प्रणाली को सुधारने के लिये समाज और उसके तंत्रों में सुधार की आवश्यकता है। यहीं से चुनावी सुधार महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

नोट :

भारत जैसे जीवंत लोकतंत्र में यह आवश्यक है कि देश में सुशासन के लिये सबसे अच्छे नागरिकों को जन प्रतिनिधियों के रूप में चुना जाए। इससे जनजीवन में नैतिक मूल्यों को बढ़ावा मिलता है, साथ ही ऐसे उम्मीदवारों की संख्या भी बढ़ती है जो सकारात्मक वोट के आधार पर चुनाव जीतते हैं। लोकतंत्र की इस प्रणाली में मतदाता को उम्मीदवार चुनने या अस्वीकार करने का अवसर दिया जाना चाहिये जो राजनीतिक दलों को चुनाव में अच्छे उम्मीदवार उतारने पर मजबूर करे। कोई भी लोकतंत्र इस आस्था पर काम करता है कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष होंगे। यह चुनाव प्रक्रिया ही है जो चुने गए लोगों को गुणवत्ता और उनके प्रदर्शन के माध्यम से हमारे लोकतंत्र को प्रभावी बनाती है।

इस आलेख में न केवल चुनाव प्रणाली की दरारों एवं ख़ामियों पर चर्चा की जाएगी बल्कि चुनाव सुधार की दिशा में 'वर्क इन प्रोग्रेस' के छद्म आवरण से बाहर निकल कर ठोस समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाएगा।

चुनाव सुधार की आवश्यकता क्यों ?

- राजनीति के जटिल आंतरिक चरित्र और गठबंधन की अंतहीन संभावनाओं के चलते भारत के चुनाव का अनुमान लगाना बेहद कठिन है। भारत के मतदाता संसद या लोकसभा के 543 सदस्यीय निचले सदन के लिये सांसदों का चुनाव करते हैं। क्षेत्र के हिसाब से दुनिया के सातवें बड़े और दूसरी सबसे अधिक आबादी वाले देश में चुनाव कराना बेहद जटिल कार्य है।
- निर्वाचन अधिकारियों पर अनुचित रूप से राजनीतिक दबाव डाले जाते हैं। फलस्वरूप वे निष्पक्ष रूप से अपना कार्य नहीं कर पाते हैं।
- भारतीय चुनाव में सत्तारुढ़ दल द्वारा सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग आम बात हो गई है। दलीय लाभों के लिये प्रशासनिक तंत्र के दुरुपयोग के विरुद्ध विपक्षी दल हमेशा आवाज़ उठाते रहे हैं। परंतु दुर्भाग्य की बात यह है कि जब भी विपक्षी दल सत्तारुढ़ हुआ तो वह भी इस दोष से मुक्त नहीं हो पाया है।
- भारतीय चुनाव प्रणाली की सबसे बड़ी खामी यह है कि चुनाव से पूर्व तक मतदाता सूची अपूर्ण रहती है। परिणामस्वरूप अनेक नागरिक अपने मताधिकार का प्रयोग करने से वंचित रह जाते हैं।
- निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या में बहुलता भी चुनावी प्रणाली की एक बड़ी समस्या है। प्राय: निर्दलीय उम्मीदवारों का प्रयोग वोट काटने के लिये किया जाने लगा है।
- इसके अतिरिक्त जाली व फर्ज़ी मतदान की बढ़ती प्रवृत्ति, निर्वाचन आयोग के पास अपने स्वतंत्र कर्मचारी न होना, डाक द्वारा प्राप्त होने वाले मतों के संदर्भ में पर्याप्त अवसंरचना का अभाव इत्यादि हैं।

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव को प्रभावित करने वाले कारक

- प्राय: उम्मीदवार अपने आपराधिक रिकॉर्ड का ब्यौरा नहीं देते हैं। वे अपनी संपत्ति, देनदारियों, आय तथा शैक्षिक योग्यता का विवरण नहीं देते हैं।
- चुनाव में धन की बढ़ती भूमिका हमारी चुनाव व्यवस्था का गंभीर दोष है। चुनाव में पैसा पानी की तरह बहाया जाता है। अत्यधिक चुनावी व्यय के कारण सामान्य व्यक्ति निर्वाचन को प्रक्रिया से दूर होता जा रहा है।
- पिछले कुछ वर्षों में कानून-सम्मत और असल खर्चों के बीच अंतर काफी बढ़ा है।
- चुनाव जीतने के लिये उम्मीदवार बाहुबल का प्रयोग करते हैं। हिंसा, धमकी और बूथ कैप्चरिंग में बाहुबल की बड़ी भूमिका होती है। यह समस्या पहले अमूमन देश के उत्तरी भागों में हुआ करती थी पर अब बाकी प्रांतों में भी फैल रही है।
- अपराधी व्यक्ति अपना रसूख और जनता में पैठ बनाने के लिये राजनीति में प्रवेश करते हैं और पुरजोर कोशिश करते हैं कि उनके खिलाफ मामलों को समाप्त कर दिया जाए या उन पर कार्यवाही न की जाए।
- इसमें उनकी मदद कुछ राजनीतिक दल करते हैं जो धन और रसूख के लिये इन्हें चुनाव मैदान में उतारते हैं और बदले में इन्हें राजनीतिक संरक्षण और सुरक्षा प्रदान करते हैं।
- किसी भी मज़बूत उम्मीदवार के खिलाफ प्रतिद्वंद्वियों द्वारा बड़े पैमाने पर निर्दलीय उम्मीदवारों को उतारा जाता है ताकि उसके वोट काटे जा सकें।
- ऐसे कई राजनीतिक दल हैं जो विशेष जाति या समूह से आते हैं। ये जाति, समूह पार्टियों पर भी दबाव डालते हैं कि उन्हें क्षेत्रीय स्वायत्तता और जाति की संख्या के मुताबिक टिकट दिये जाएँ।
- जाति आधारित राजनीति देश की बुनियाद और एकता पर प्रहार कर रही है और आज जाति चुनाव जीतने में एक प्रमुख कारक बनी हुई है तथा अक्सर उम्मीदवारों का चयन उपलब्धियों, क्षमता और योग्यता के आधार पर न होकर जाति, पंथ और समुदाय के आधार पर होता है।

नोट :

- स्वतंत्रता के बाद सांप्रदायिकता और धार्मिक कट्टरवाद की राजनीति ने देश के तमाम हिस्सों में आंदोलनों को जन्म दिया। साथ ही सांप्रदायिक ध्रुवीकरण ने बहुलवाद और पंथ निरपेक्षता के संघीय ढ़ांचे के लिये गंभीर खतरा पैदा कर दिया है।

चुनाव सुधार से संबंधित समितियाँ एवं आयोग

विभिन्न समितियों एवं आयोगों ने हमारी चुनाव प्रणाली तथा चुनावी मशीनरी के साथ-साथ चुनाव प्रक्रिया की जाँच की है और सुधार के सुझाव दिये हैं। ये समितियाँ एवं आयोग निम्नलिखित हैं-

- तारकुंडे समिति (वर्ष 1974-75)
- चुनाव सुधार पर दिनेश गोस्वामी समिति (वर्ष 1990)
- राजनीति के अपराधी करण पर वोहरा समिति (वर्ष 1993)
- चुनावों में राज्य वित्तपोषण पर इंद्रजीत गुप्ता समिति (वर्ष 1998)
- चुनाव सुधारों पर विधि आयोग की रिपोर्ट (वर्ष 1999)
- चुनाव सुधारों पर चुनाव आयोग की रिपोर्ट (वर्ष 2004)
- शासन में नैतिकता पर वीरप्पा मोइली समिति (वर्ष 2007)
- चुनाव कानूनों और चुनाव सुधार पर तनखा समिति (वर्ष 2010)

उपरोक्त समितियों एवं आयोगों की अनुशंसाओं के आधार पर चुनाव प्रणाली, चुनाव मशीनरी और चुनाव प्रक्रिया में कई सुधार किये गए हैं। निम्नलिखित दो कालखंडों में बाँट कर इनका अध्ययन किया जा सकता है।

- वर्ष 2000 से पूर्व चुनाव सुधार
- वर्ष 2000 के बाद चुनाव सुधार

वर्ष 2000 से पूर्व चुनाव सुधार

- संविधान के 61वें संशोधन अधिनियम, 1989 के तहत अनुच्छेद 326 में संशोधन करके मतदान की आयु 21 से घटाकर 18 वर्ष की गई।
- चुनाव कार्यों में लगे अधिकारी, कर्मचारियों को चुनाव की अवधि के दौरान चुनाव आयोग में प्रतिनियुक्ति पर माना जाएगा।
- इस अवधि में ये कर्मी चुनाव आयोग के नियंत्रण में रहेंगे।
- नामांकन पत्रों को लेकर प्रस्तावकों की संख्या में 10 फीसदी का इज़ाफा किया गया।
- राष्ट्रीय सम्मान अधिनियम, 1971 का अपमान करने पर 6 साल तक चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध लगाना।
- दो से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों से चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध लगाना और उम्मीदवार की मौत पर चुनाव स्थगित न होना।
- इस चरण में अब तक के सबसे बड़े चुनाव सुधारों में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) का प्रचलन में आना शामिल है। इसका लक्ष्य चुनावी प्रक्रिया को निष्पक्ष, सटीक और पारदर्शी बनाना है जिससे प्राप्त परिणामों को स्वतंत्र रूप से सत्यापित किया जा सके।
- अत: सार्वजनिक क्षेत्र के दो उपक्रमों भारतीय इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड (बंगलुरू) और इलेक्ट्रॉनिक्स कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (हैदराबाद) के सहयोग से भारत के चुनाव आयोग द्वारा EVM को तैयार किया गया।
- दिसंबर 1988 में संसद द्वारा कानून में संशोधन किया गया और जन प्रतिनिधित्व कानून 1951 में एक नई धारा जोड़ी गई जिसमें आयोग को EVM मशीनों के उपयोग का अधिकार दिया गया।
- प्रयोग के तौर पर EVM का पहली बार उपयोग वर्ष 1998 में राजस्थान, मध्य प्रदेश और दिल्ली के चुनावों के दौरान किया गया था।
- वर्ष 1999 में गोवा विधानसभा चुनाव में पहली बार EVM का पूरे राज्य में प्रयोग हुआ।

वर्ष 2000 के बाद चुनाव सुधार

1. एक्ज़िट पोल पर प्रतिबंध

- जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 के तहत चुनाव आयोग ने मतदान की शुरूआत होने से लेकर मतदान समाप्त होने के आधे घंटे बाद तक एक्ज़िट पोल को प्रतिबंधित कर दिया है।
- लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में चुनाव के दौरान एक्ज़िट पोल के परिणाम प्रकाशित करने पर दो वर्ष का कारावास या जुर्माना अथवा दोनों सज़ा हो सकता है।

नोट :

2. चुनावी खर्च पर सीलिंग

- लोकसभा सीट के लिये चुनावी खर्च की सीमा को बढ़ाकर बड़े राज्यों में 70 लाख रुपए कर दिया गया है वहीं छोटे राज्यों में यह सीमा 28 लाख रुपए तक है।

3. पोस्टल बैलेट के माध्यम से मतदान

- सरकारी कर्मचारियों और समस्त बलों को चुनाव आयोग की सहमति के बाद पोस्टल बैलेट के माध्यम से मतदान करने की अनुमति है।
- विदेशों में रहने वाले ऐसे भारतीय नागरिकों को मतदान का अधिकार है जिन्होंने किसी अन्य देश की नागरिकता हासिल नहीं की है और उनका नाम किसी भी निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता सूची में दर्ज हो।

4. जागरूकता और प्रसार

- युवा मतदाओं को चुनावी प्रक्रिया में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करने हेतु भारत सरकार हर वर्ष 25 जनवरी को राष्ट्रीय मतदाता दिवस के रूप में मनाती है। यह सिलसिला वर्ष 2011 से शुरू हुआ।
- 20,000 रुपए से अधिक राजनीतिक चंदे की जानकारी चुनाव आयोग को देना।

5. नोटा

- वर्ष 2013 से नोटा व्यवस्था लागू करना एक अहम चुनाव सुधार माना जाता है। नोटा का मतलब है उपरोक्त में से कोई नहीं। यानी नन ऑफ द एबव (None of the above)।
- यह व्यवस्था मतदाता को किसी भी उम्मीदवार के पक्ष में वोट नहीं देने और मतदाता की पंसद को रिकॉर्ड करने का विकल्प देती है।
- पहले जब कोई मतदाता किसी उम्मीदवार को वोट नहीं देने का फैसला करता था तो मतदाता को बूथ के पीठासीन अधिकारी को यह बताना होता था और एक रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना होता था। लेकिन इससे मतदाता के वोट आफ सिक्रेट बैलेट के अधिकार को नुकसान पहुँचता था।

6. मतदाता निरीक्षण पेपर ऑडिट ट्रायल

- यह EVM से जुड़ी एक स्वतंत्र प्रणाली है, जो मतदाताओं को अनुमति देती है कि वे यह सत्यापित कर सकते हैं कि उनका मत उक्त उम्मीदवार को पड़ा है जिसके पक्ष में उसने मत डाला है।
- जब मत पड़ता है तो एक मुद्रित पर्ची निकलती है जिस पर उस उम्मीदवार का नाम रहता है जिसे मत दिया गया है।

7. तकनीकी का प्रयोग

निर्वाचकों के लिये कंप्यूटरीकृत डेटाबेस का निर्माण, व्यापक फोटो इलेक्टोरल सेवा, फर्जी और डुप्लीकेट इंट्री को खत्म करने के लिये डी-डुप्लीकेशन तकनीक लाना। मतदान प्रक्रिया की विडियो रिकॉर्डिंग कराना।

आयोग ने ऑनलाइन संचार यानी कोमेट नाम की एक प्रणाली विकसित की है, इससे चुनाव के दिन प्रत्येक मतदान केंद्र की निगरानी करना संभव हो गया है।

GPS का उपयोग कर मतदान केंद्रों की अब रियल टाइम निगरानी भी की जा रही है।

चुनाव आयोग ने चुनाव के दौरान आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन की रिपोर्ट दर्ज़ करने में नागरिकों को सक्षम बनाने के लिये 'सीविजिल' एप लॉन्च किया है।

भारतीय निर्वाचन पद्धति की आलोचना

- भारत में फर्स्ट पास्ट द पोस्ट विधि से जनप्रतिनिधि चुने जाते हैं। अर्थात हर सीट पर सबसे ज्यादा वोट पाने वाला उम्मीदवार विजयी होता है। इसलिये जिन राजनीतिक दलों के वोट बिखरे हुए हैं, उन्हें कुल मिलाकर अच्छा-खासा वोट मिलने के बावजूद मुमकिन है कि उसके प्रतिनिधि जीतकर न आएँ।
- ये राजनीतिक दल जिन सामुदायिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं, उन समूहों की आवाज़ सदन में अनसुनी रह सकती है। उदाहरण के तौर पर वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव में बहुजन समाजवादी पार्टी को यूपी में लगभग 20% और देश में 4.1% वोट मिले। परिणामस्वरूप वह देश की तीसरी सबसे बड़ी पार्टी बनी, फिर भी लोकसभा में उसका कोई प्रतिनिधि नहीं था।
- इसी प्रकार वर्ष 2019 के लोकसभा चुनाव में राष्ट्रीय जनता दल को बिहार में 15% वोट मिले, लेकिन उसका एक भी सदस्य चुनाव नहीं जीत पाया। यह प्रणाली भारत की निर्वाचन पद्धति का एक प्रमुख दोष है।

नोट :

आगे की राह

- साफ-सुथरे चुनावों और राजनीतिक पारदर्शिता से ही लोकतंत्र को वैधता मिलती है। ऐसे में महत्त्वपूर्ण चुनावी सुधारों को लागू कराना बहुत ज़रूरी है ताकि लोकतांत्रिक भारत भ्रष्टाचार और आपराधिक माहौल से मुक्त होकर विकास और समृद्धि की ओर अग्रसर हो सके।
- चुनाव के दौरान नेताओं के धार्मिक स्थलों पर जाने और धार्मिक नारे लगाए जाने पर रोक लगनी चाहिये तथा इसका सख्ती से पालन होना चाहिये।
- पेड न्यूज़ और फेक न्यूज़ पर सख्ती से रोक लगनी चाहिये। इनके ज़रिये जनमत को प्रभावित करने की कोशिश होती है, जिसका असर चुनावों पर होता है।
- सोशल मीडिया प्लेटफार्मों के विनियमन के लिये आचार संहिता निर्मित करने की आवश्यकता है।
- 'वन नेशन वन इलेक्शन' के मुद्दे पर व्यापक विचार-विमर्श आयोजित करने की आवश्यकता है।

महिला पुलिस का प्रतिनिधित्व: विचारणीय तथ्य

संदर्भ

देश में कानून व्यवस्था लागू करवाने और अमन-चैन को बनाए रखने के लिये पुलिस की भूमिका बेहद अहम होती है। दुर्भाग्य यह है कि जब आपका और हमारा सामना पुलिस से होता है तो ज़्यादातर लोग पुलिस की कार्यशैली और उसके व्यवहार पर सवाल खड़े करते हैं या फिर संतुष्ट नज़र नहीं आते हैं। पुलिस की इसी कार्यशैली और व्यवहार को संवेदनशील व जन अनुकूल बनाने के लिये पुलिस विभाग में महिला कर्मियों की अधिक से अधिक नियुक्ति करने का लगातार प्रयास किया जा रहा है। इस दिशा में कार्य करते हुए सरकार ने वर्ष 2009 में केंद्रीय पुलिस बल व राज्य पुलिस बल में स्वीकृत कुल पदों में 33% पद महिला पुलिस कर्मियों द्वारा भरे जाने का निर्देश दिया। आज हम देख रहे हैं कि महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दे रही हैं, परंतु पुरुष प्रतिनिधित्व वाले पुलिस बल में वर्ष 2019 तक 10% से भी कम महिला पुलिस कर्मियों की नियुक्ति की गई है। आशाजनक बात यह है कि सात राज्यों तमिलनाडु, बिहार, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, गुजरात और सिक्किम में महिला पुलिस कर्मियों का प्रतिनिधित्व 10% से अधिक है।

पुलिस विभाग में महिला पुलिस कर्मियों की संख्या में वृद्धि नि:संदेह पुलिस सुधार की दिशा में मील का पत्थर साबित हो सकती है। इस आलेख में महिला पुलिस कर्मियों की भूमिका को केंद्र में रखते हुए पुलिस सुधार की आवश्यकता व सरकार द्वारा इस संबंध में किये जा रहे प्रयासों की समीक्षा की जाएगी।

पुलिस व्यवस्था से तात्पर्य

- पुलिस बल राज्य द्वारा गठित आधिकारिक व्यक्तियों का एक निकाय है, जो राज्य द्वारा निर्मित कानूनों को लागू करने, संपत्ति की रक्षा और नागरिक अव्यवस्था को सीमित रखने का कार्य करता है
- पुलिस को प्रदान की गई शक्तियों में बल का वैध उपयोग भी शामिल है। पुलिस बल को राज्य की रक्षा में शामिल सैन्य या अन्य संगठनों से अलग बल के रूप में परिभाषित किया जाता है। हालाँकि, सच्चाई यह है कि वर्तमान समय में पुलिस व्यवस्था अपना उदात्त स्वरूप खो चुकी है।

पुलिस सुधार महिलाओं के अनुकूल आवश्यक क्यों ?

- महिला पुलिसकर्मियों को मुख्य रूप से महिलाओं के विरुद्ध अपराधों से निपटने के लिये नियुक्त किया जाता है। इसके साथ ही इन्हें महिला कैदियों से जुड़े दायित्वों के लिये नियुक्त करने की अवधारणा भी इनके हितों के विरुद्ध काम करती है क्योंकि यह उन्हें पुलिसिंग के मुख्य कार्यों से अलग करती है।
- महिला पुलिसकर्मियों के लिये अलग शौचालयों की व्यवस्था न होना, महिलाओं के लिये पृथक आरामगृह की कमी, महिलाओं के लिये अलग आवास और अन्य सुविधाओं एवं बच्चे की देखभाल की उचित व्यवस्था का अभाव आदि के कारण पुलिस विभाग निरंतर और व्यापक रूप से लैंगिक पूर्वाग्रह के साथ-साथ लैंगिक उदासीनता से भी ग्रस्त है।
- वर्तमान आँकड़ों से पता चलता है कि पुलिस में ज्यादातर महिलाएँ निचले पायदान पर कार्यरत हैं जो मुख्य कार्यकारी पदों पर महिलाओं की कमी को दर्शाता है।

नोट :

- महिलाओं की तैनाती के निर्णय लैंगिक रूढ़िवाद से युक्त हैं जो महिलाओं को अग्रणी भूमिका निभाने से रोकते हैं। यह पूर्वाग्रह केवल पुरुष सहकर्मियों तक ही सीमित नहीं है अपितु कभी-कभी वरिष्ठ महिला अधिकारी भी उन्हें कमज़ोर, काम करने के कम इच्छुक और कम कठोर मानती हैं।
- महिलाओं को शारीरिक रूप से कम दुष्कर या डेस्क ड्यूटी के कार्य स्थानांतरित कर अथवा केवल महिलाओं के विरुद्ध अपराधों पर कार्यवाही के लिये नियुक्त कर उन्हें दरकिनार करने की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है।
- किसी भी प्रगतिशील और आधुनिक पुलिस एजेंसी में सभी स्तरों पर महिलाओं का निम्न प्रतिनिधित्व कानून प्रवर्तन एजेंसियों की संस्कृति और परिचालन दक्षता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है विशेष रूप से उस समुदाय या देश में जहाँ यह व्यापक स्तर पर है।

पुलिस विभाग में महिलाओं की स्थिति

- भारत में राष्ट्रीय स्तर पर पुलिस बलों में महिलाओं की संख्या बढ़ी है परंतु यह पुलिस विभाग की कुल संख्या बल का केवल 7% तक सीमित है।
- राज्य पुलिस विभाग में महिलाओं की नियुक्ति के लिये आरक्षण की व्यवस्था अपनाते हैं, जो पर्याप्त नहीं है क्योंकि विभाग में सृजित सभी स्तर के पदों के लिये यह व्यवस्था प्रयोग में नहीं लाई जाती है।
- केरल व कर्नाटक जैसे राज्यों में आरक्षण की व्यवस्था केवल कांस्टेबल के पद तक तो वहीं आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात और झारखंड में यह कांस्टेबल और उपनिरीक्षक के पद तक सीमित है।
- इसके साथ ही प्रत्येक राज्य में बहुत कम महिलाएँ राजपत्रित अधिकारी की रैंक पर नियुक्त हैं।
- राज्यों के मध्य व्यापक रूप से भिन्नता है जिसमें तमिलनाडु पुलिस बल में 12 प्रतिशत महिलाएँ हैं, जबकि असम में यह 1 प्रतिशत से भी कम है। यह स्थिति इस तथ्य के बावजूद बनी हुई है जब 12 राज्यों के पुलिस बल में महिलाओं के लिये 30% या अधिक का आरक्षण निर्धारित करने वाले नियम वर्षों से हैं।
- भारतीय पुलिस में महिलाओं की भागीदारी 70 के दशक की शुरुआत में प्रारंभ हुई जब महिलाएँ सुरक्षा बलों में शामिल होने लगीं। उस दशक के दौरान हजारों महिलाएँ कांस्टेबल से लेकर उच्चाधिकारी रैंक तक सभी स्तरों पर सुरक्षा बलों में नियुक्त हुईं।
- पिछले दशक में भारत में पुलिस बलों द्वारा महिलाओं की एक अच्छी संख्या में भर्ती की गई है लेकिन व्यावसायिक परिधि के भीतर महिलाओं को पुरुषों के 'समान भागीदार' के रूप में स्वीकार्यता और आत्मसात करने की दिशा में वांछित कार्य नहीं किये गए हैं।
- यदि इसी दर से पुलिस विभाग में महिला पुलिस कर्मियों की नियुक्ति की जाती रही तो गृह मंत्रालय द्वारा निर्धारित 33% के लक्ष्य को प्राप्त करने में 50 वर्ष से भी अधिक समय लग जाएगा।

पुलिस विभाग में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने हेतु उपाय

- भौगोलिक व क्षेत्रीय विविधता को सुनिश्चित करने के लिये पुलिस/ सुरक्षा विभाग को प्रत्येक ज़िले में विशेष भर्ती अभियान चलाना चाहिये जिसमें महिलाओं के न्यूनतम 33 प्रतिशत स्थान का आरक्षित होना आवश्यक है।
- वर्ष 2013 में गृह मंत्रालय के दिशा-निर्देशों के अनुसार, प्रत्येक थाने में तीन महिला पुलिस उप निरीक्षकों की नियुक्ति जाँच अधिकारी के रूप में करना आवश्यक है।
- पुलिस को मीडिया और शैक्षणिक संस्थानों के माध्यम से महिलाओं के लिये पुलिस विभाग में उपलब्ध अवसरों के बारे में जागरूकता फैलानी चाहिये।
- पुलिस में महिलाओं को अपने पुरुष समकक्षों के साथ प्रत्येक प्रकार से समानता बनाए रखने के लिये आवश्यक प्रशिक्षण, समर्थन और विश्वास प्राप्त करना चाहिये।
- एक सामान्य लैंगिक-तटस्थ कैडर को सभी रैंकों के लिये बनाने की आवश्यकता है जिससे उन्नति के अवसर समान रूप से उपलब्ध हों।
- परामर्श के लिये संसाधन केंद्र, अवसरों और संभावनाओं के बारे में जागरूकता फैलाना, कॅरियर योजना और प्रशिक्षण तथा कार्यस्थल पर चुनौतियों का सामना करने में मदद करना आवश्यक है।
- महिलाओं के खिलाफ अपराधों से निपटने के लिये प्रशिक्षण की कमी और सामान्य रूप से पुलिस बल के संवेदीकरण हेतु महिला पुलिस कर्मियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है इसलिये उन्हें केवल महिला अपराधों से निपटने तक ही सीमित नहीं होना चाहिये।

नोट :

- अधिकांश राज्य पुलिस विभागों ने महिलाओं के लिये अलग शौचालय और चेंजिंग रूम उपलब्ध कराने, सभी पुलिस स्टेशनों और इकाइयों में महिलाओं के लिये संलग्न शौचालय युक्त अलग आवास बनाने हेतु राज्य पुलिस बल आधुनिकीकरण योजना के अंतर्गत धन प्राप्त किया है। पुलिस विभागों को इस कोष का सर्वोत्तम उपयोग सुनिश्चित करना चाहिये।
- महिलाओं की कुछ विशेष आवश्यकताएँ होती हैं जैसे गर्भावस्था के दौरान और उसके बाद की स्थिति, जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। उन्हें गैर-कार्यकारी पोस्टिंग के लिये नहीं हटाया जाना चाहिये। पुलिस बल को अधिक महिलाओं को क्षेत्र में नियुक्त करने के लिये प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।
- अंतर्राष्ट्रीय शोध से पता चलता है कि महिला पुलिस और प्रवर्तन अधिकारी एक अलग स्त्री सुलभ पुलिसिंग शैली का उपयोग करते हैं जैसे- शारीरिक बल प्रयोग पर कम निर्भरता और संचार कौशल पर अधिक जोर। इस शैली को अपनाने से संभावित हिंसक या संघर्ष की स्थितियों को नियंत्रित करने की संभावना बढ़ जाती है।
- महिला पुलिस मॉडल का निर्माण महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने की दिशा में मील का पत्थर साबित हो सकता है।

महिला पुलिस मॉडल

- संगठन में बेहद अहम भूमिका रखने वाली महिला पुलिस कर्मियों को पुलिस सुधार की मुख्यधारा में लाने का एक तरीका 'महिला पुलिस मॉडल' नीति विकसित करना है जो इस संस्था में गहरी जड़ें जमा चुके पितृसत्तात्मक वर्चस्व को चुनौती देगा।
- मॉडल नीति में यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाएगा कि महिलाओं की तैनाती पर निर्णय लिंग रूढ़िता से मुक्त हो, ताकि महिलाओं को अग्रणी, मुख्य एवं नेतृत्वकारी भूमिका में लाया जा सके।
- महिला पुलिस मॉडल के द्वारा पुलिस विभाग के प्रत्येक स्तर पर लैंगिक समानता लाने हेतु महिला पुलिस कर्मियों के लिये कार्य के समान अवसर सृजित करने का प्रयास किया जाएगा।
- मॉडल नीति के अंतर्गत पुलिस विभाग को महिलाओं के लिये सुरक्षित कार्य स्थान सुनिश्चित करना होगा। साथ ही विभाग से यह अपेक्षा की जाती है कि महिलाओं के लिये पुलिसिंग को एक व्यवहार्य कैरियर विकल्प बनाने के लिये भेदभाव और उत्पीड़न के प्रति शून्य-सहिष्णुता की नीति अपनानी चाहिये।

आगे की राह

- विभाग को कार्यस्थल पर महिला यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 का कड़ाई से पालन करना चाहिये।
- पुलिस बल में महिलाओं का एकीकरण करना भारत में पुलिस सुधार की प्रक्रिया का एक अनिवार्य घटक होना चाहिये जिससे वे परिवर्तन के अग्रदूत बन सकें।

न्यायिक निष्पक्षता का सवाल

संदर्भ

'I Will See You In Court' यह केवल एक वाक्य नहीं बल्कि न्यायिक व्यवस्था पर भारत की जनता के भरोसे का प्रतीक है। देश में कहीं भी जब दो लोगों के बीच कोई विवाद की स्थिति उत्पन्न होती है तो वे न्याय निर्णयन के लिये न्यायालयों का रुख करते हैं। परंतु वह स्थिति कैसी होगी जब न्यायपालिका स्वयं न्यायिक निष्पक्षता के कटघरे में खड़ी हो? वर्तमान में कुछ ऐसी ही परिस्थितियाँ देश के सामने समस्या के रूप में खड़ी हैं। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय के निवर्तमान मुख्य न्यायाधीश के राज्यसभा सदस्य के रूप में मनोनयन की घोषणा से न्यायिक निष्पक्षता पर प्रश्नचिह्न लगना स्वाभाविक है। पूर्व मुख्य न्यायाधीश ने राजनीतिक रूप से संवेदनशील मामलों (असम राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर, सबरीमाला, अयोध्या मंदिर विवाद , राफेल विवाद , केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो) की अध्यक्षता की है जिसमें सरकार एक पक्षकार के रूप में उपस्थित थी।

पूर्व मुख्य न्यायाधीश की सेवानिवृत्ति के चार माह बाद ही राज्यसभा सदस्य के लिये मनोनयन के निर्णय से यह प्रश्न उठता है कि क्या न्यायाधीशों पर सेवानिवृत्त हो जाने के बाद कम से कम कुछ वर्षों के लिये राजनीतिक पदों को स्वीकार करने पर प्रतिबंध लगा देना चाहिये, क्योंकि इस तरह के पदों को स्वीकार करना न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कमजोर कर सकता है। इस आलेख में भारत के न्यायिक व्यवस्था की संरचना तथा उसकी स्वतंत्रता के विधिक और संवैधानिक प्रावधानों को भी जानने का प्रयास किया जाएगा।

नोट :

भारत की न्यायिक व्यवस्था

- भारतीय संविधान ने एकीकृत न्यायिक व्यवस्था की स्थापना की है, जिसमें शीर्ष स्थान पर सर्वोच्च न्यायालय व उसके अधीन राज्य स्तर पर उच्च न्यायालय की व्यवस्था है।
- प्रत्येक उच्च न्यायलय के अधीन अधीनस्थ न्यायालयों की श्रेणियाँ हैं। अधीनस्थ न्यायालयों के अंतर्गत ज़िला एवं सत्र न्यायालय, परिवार न्यायालय तथा मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय आते हैं।
- भारतीय संविधान के भाग-5 में अनुच्छेद 124 से 147 तक सर्वोच्च न्यायालय के गठन, स्वतंत्रता, न्यायक्षेत्र, शक्तियाँ प्रक्रिया आदि का उल्लेख है, तो वहीँ संविधान के भाग-6 में अनुच्छेद 214 से 231 तक उच्च न्यायालयों के गठन, स्वतंत्रता, न्यायक्षेत्र, शक्तियाँ प्रक्रिया आदि का उल्लेख है। इस समय देश में 25 उच्च न्यायालय कार्यरत हैं।
- भारतीय संविधान के भाग-7 में अनुच्छेद 233 से 237 तक अधीनस्थ न्यायालयों का गठन किया गया है।

स्वतंत्र न्यायपालिका की व्यवस्था

- न्यायपालिका की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था का आधार स्तंभ है। इसमें तीन आवश्यक शर्तें निहित हैं-
  - न्यायपालिका को सरकार के अन्य विभागों के हस्तक्षेप से उन्मुक्त होना चाहिये।
  - न्यायपालिका के निर्णय व आदेश कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका के हस्तक्षेप से मुक्त होने चाहिये।
  - न्यायाधीशों को भय या पक्षपात के बिना न्याय करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये।
- सर्वोच्च न्यायालय व उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति कोलेज़ियम की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। यह व्यवस्था सुनिश्चित करती है कि न्यायिक नियुक्ति राजनीति से प्रेरित नहीं हैं।
- न्यायाधीशों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान की गई है। वे राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण नहीं करते हैं अर्थात् उन्हें नियुक्त किये जाने के बाद सरकार द्वारा मनमाने ढंग से नहीं हटाया जा सकता है, संविधान के अनुच्छेद 124(4) के प्रावधान के अनुसार, 'साबित कदाचार या असमर्थता' के आधार पर संसद के दोनों सदनों के विशेष बहुमत से पारित महाभियोग प्रस्ताव के द्वारा ही उन्हें पद से हटाया जा सकता है।
- सर्वोच्च न्यायालय व उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते, अवकाश, विशेषाधिकार तथा पेंशन का निर्धारण समय- समय पर संसद द्वारा किया जाता है। इनमें वितीय आपातकाल के अलावा किसी भी परिस्थिति में प्रतिकूल रूप से परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
- महाभियोग प्रस्ताव के अतिरिक्त संविधान के द्वारा न्यायाधीशों के आचरण पर संसद में या राज्य विधानमंडल में बहस करने पर प्रतिबंध लगाया गया है।
- सर्वोच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त न्यायाधीश भारत के किसी भी न्यायलय में वकालत नहीं कर सकते हैं जबकि उच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालय के अतिरिक्त कहीं भी वकालत नहीं कर सकते हैं। ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिये किया गया है कि वह निर्णय देते समय भविष्य की चिंता न करें।
- न्यायालयों को अपनी अवमानना पर दंड देने की शक्ति भी प्रदान की गई है।
- सर्वोच्च न्यायालय व उच्च न्यायलय के मुख्य न्यायाधीश को बिना कार्यकारी हस्तक्षेप के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को नियुक्त करने का अधिकार है।
- संसद को न्यायालयों के न्यायक्षेत्र एवं शक्तियों में कटौती का अधिकार नहीं है। हालाँकि संसद इसमें वृद्धि कर सकती है।
- संविधान में न्यायपालिका को कार्यपालिका व विधायिका से पृथक करने की व्यवस्था की गई है।

सेवानिवृत्ति के बाद नियुक्तियों के संबंध में संविधान सभा का विचार

- संविधान सभा में, के.टी. शाह ने सुझाव दिया कि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को सरकार के साथ कार्यकारी संबंध नहीं स्थापित करना चाहिये, "ताकि किसी न्यायाधीश को अधिक से अधिक परिलब्धियों, या प्रतिष्ठा के लिये प्रलोभन न दिया जा सके, क्योंकि ऐसे प्रलोभन किसी भी न्यायाधीश की स्वतंत्रता को प्रभावित कर सकते हैं "।
- हालाँकि, इस सुझाव को प्रारूप समिति के अध्यक्ष बी.आर. अंबेडकर ने खारिज़ कर दिया। उनके अनुसार, "न्यायपालिका जिन मामलों पर निर्णय करती है, उनमें सरकार की विशेष रूचि नहीं हैं, यदि किसी वाद में सरकार पक्षकार है भी तो इसका संबंध आम नागरिक के मुद्दों से नहीं है।"

नोट :

- स्वतंत्रता के बाद न्यायपालिका निजी विवादों के न्याय निर्णयन में व्यस्त थी, उस दौरान सरकार व नागरिकों के मध्य शायद ही किसी भी प्रकार का विवाद सामने आया हो।
- परिणामस्वरूप बी.आर. अंबेडकर ने यह माना कि, "सरकार द्वारा न्यायपालिका के एक सदस्य के आचरण को प्रभावित करने की संभावना अति न्यून है"।
- हालाँकि वर्तमान में यह विचार प्रासंगिक नहीं रह गया है क्योंकि अब न्यायपालिका में सरकार के विरुद्ध ही सर्वाधिक वाद दायर किया जा रहे हैं।

न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति के बाद नियुक्ति के उदाहरण

- स्वतंत्रता के बाद से ही सेवानिवृत्त न्यायाधीशों को राजनीतिक पदों पर नियुक्त किया गया है।
- वर्ष 1952 में जस्टिस फज़ल अली को सर्वोच्च न्यायालय से सेवानिवृत्त होने के तुरंत बाद उड़ीसा का राज्यपाल नियुक्त किया गया था।
- वर्ष 1958 में मुख्य न्यायाधीश एम.सी. चांगला ने प्रधानमंत्री नेहरू के निमंत्रण पर अमेरिका में भारत का राजदूत बनने के लिये बॉम्बे उच्च न्यायालय से त्यागपत्र दे दिया था।
- वर्ष 1967 में मुख्य न्यायाधीश सुब्बा राव ने राष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने के लिये त्यागपत्र दे दिया था।
- वर्ष 1998 में सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश रंगनाथ मिश्र को कांग्रेस पार्टी के टिकट पर राज्यसभा सदस्य बनाया गया था।
- वर्ष 2014 में मुख्य न्यायाधीश पी. सताशिवम को केरल का राज्यपाल नियुक्त किया गया था।

संबंधित तथ्य

- संविधान के अनुच्छेद 124(7) के अनुसार, कोई व्यक्ति जिसने सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में पद धारण किया है, भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी न्यायालय में या किसी प्राधिकारी के समक्ष वकालत नहीं कर सकता है।
- इस प्रकार न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति के बाद की नियुक्ति न्यायिक स्वतंत्रता को समाप्त या कम कर सकती है। ऐसा इसलिये है क्योंकि कुछ न्यायाधीशों को सरकार द्वारा सेवानिवृत्ति के बाद नियुक्ति की पेशकश नहीं की जाती है।
- अक्सर यह आशंका व्यक्त की जाती है कि यदि कोई न्यायाधीश जो सेवानिवृत्ति के करीब है, सरकार के विरुद्ध दायर विभिन्न वाद पर इस तरह निर्णय कर सकता है जिससे सरकार को लाभ प्राप्त हो।
- यदि कोई न्यायाधीश सरकार के पक्ष में अत्यधिक विवादास्पद मामलों पर निर्णय करता है और फिर सेवानिवृत्ति के बाद कोई शासकीय पद स्वीकार करता है तो इससे जनता के बीच यही संदेश जाता है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता से समझौता किया गया है, भले ही यह 'क्विड प्रो क्वो' (लाभ के बदले लाभ प्राप्त करना) का मामला न हो।

विधि आयोग की अनुशंसा का उल्लंघन

- वर्ष 1958 में विधि आयोग ने अपनी 14वीं रिपोर्ट में कहा कि सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश दो प्रकार के कार्यों में संलग्न थे:
  - प्रथम, "चैंबर प्रैक्टिस" (पक्षकार को राय देना और निजी विवादों में मध्यस्थ के रूप में सेवा प्रदान करना) और दूसरा, "सरकार के अंतर्गत महत्त्वपूर्ण पदों को धारण करना"।
  - विधि आयोग ने चैंबर प्रैक्टिस की व्यवस्था पर नाराज़गी व्यक्त की, लेकिन इसके उन्मूलन की सिफारिश नहीं की।
  - हालाँकि विधि आयोग ने सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये सेवानिवृत्ति के बाद शासकीय पदों की धारण करने की प्रथा पर प्रतिबंध लगाने की ज़ोरदार सिफारिश की क्योंकि सरकार के विरुद्ध न्यायालयों में बड़ी संख्या में वाद दायर किये जा रहे थे।

सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीशों की राय

- मुख्य न्यायाधीश वाई. वी. चंद्रचूड़ ने महसूस किया कि कुछ न्यायाधीश सेवानिवृत्ति के बाद शासकीय पदों के प्रलोभन में सरकार के हित में निर्णय लिख रहे थे।
- मुख्य न्यायाधीश आर.एस. पाठक का मानना था कि सर्वोच्च न्यायालय में छोटे कार्यकाल वाले न्यायाधीश सेवानिवृत्ति के बाद उपयुक्त शासकीय पदों के प्रलोभन में थे, उनके दृष्टिकोण में सरकार समर्थक होने की प्रवृत्ति अधिक थी।

नोट :

आगे की राह

- प्रशासनिक निकायों में कई सेवानिवृत्त हुए व्यक्तियों की नियुक्तियों के लिये कूलिंग ऑफ पीरियड की आवश्यकता होती है ताकि हितों के टकराव की संभावना या संदेह को समाप्त किया जा सके। इस कूलिंग ऑफ पीरियड को भारतीय न्यायपालिका तक बढ़ाया जाना चाहिये।
- पूर्व मुख्य न्यायाधीश आर. एम. लोढ़ा ने कम से कम 2 साल की कूलिंग ऑफ पीरियड की सिफारिश की है।
- न्यायिक शुचिता को बरकरार रखने के लिये सेवानिवृत्त न्यायाधीशों को शासकीय पद धारण करने के किसी नही प्रलोभन से स्वयं को दूर रखना चाहिये।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग: भूमिका व प्रभावकारिता

संदर्भ

मानव के विकास के लिये कुछ अधिकार समान रूप से सभी को उपलब्ध होने चाहिये। लेकिन दुनिया में कई ऐसे लोग हैं जो इन अधिकारों अर्थात मानवाधिकारों से वंचित हैं। हम अक्सर यह सुनते आए हैं कि दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में लोगों के मानवाधिकारों का हनन होता रहता है। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण द्वितीय विश्वयुद्ध है। विश्वयुद्ध के दौरान जहाँ व्यापक जन-धन की हानि हुई वहीँ मानवाधिकारों का भी व्यापक उल्लंघन हुआ। लाखों लोग शरणार्थी जीवन जीने के लिये विवश हो गए। सभ्य समाज का हिस्सा होने के नाते प्रत्येक व्यक्ति के मानवाधिकारों का संरक्षण बेहद ज़रूरी है।

इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिये 10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणापत्र जारी किया। 16 दिसंबर, 1966 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 'नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता' तथा 'आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौते' का प्रारूप प्रस्तुत किया जिस पर भारत भी एक हस्ताक्षरकर्त्ता देश है। इस आलेख में मानव अधिकार अधिनियम की विशेषताएँ, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की संरचना, उद्देश्य, कार्य, शक्तियों और आवश्यक सुधारों पर चर्चा की जाएगी।

मानव अधिकार क्या है ?

- संयुक्त राष्ट्र की परिभाषा के अनुसार, ये अधिकार जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, भाषा, धर्म या किसी अन्य आधार पर भेदभाव किये बिना सभी को प्राप्त हैं।
- मानवाधिकारों में मुख्यत: जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार, गुलामी और यातना से मुक्ति का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार और काम एवं शिक्षा का अधिकार, आदि शामिल हैं।
- कोई भी व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के इन अधिकारों को प्राप्त करने का हक़दार होता है।
- मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 के प्रावधानों के तहत 12 अक्टूबर, 1993 को राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग (National Human Rights Commission-NHRC) की स्थापना की गई।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की संरचना

- NHRC एक बहु-सदस्यीय संस्था है। इसके अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली उच्चस्तरीय समिति, जिसमें प्रधानमंत्री सहित लोकसभा अध्यक्ष, राज्यसभा का उप-सभापति, संसद के दोनों सदनों के मुख्य विपक्षी नेता तथा केंद्रीय गृहमंत्री शामिल होते हैं, की सिफारिशों के आधार पर की जाती है।
- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष या 70 वर्ष की आयु (जो भी पहले हो) तक निर्धारित है। इसके अतिरिक्त ये पुनर्नियुक्ति के भी पात्र होंगे।
- राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष पद पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के साथ-साथ उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीश भी नियुक्त किये जा सकते हैं।
- एक सदस्य उच्चतम न्यायालय में कार्यरत अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश, एक सदस्य उच्च न्यायालय का कार्यरत या सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश होना चाहिये।

नोट :

लोकतंत्र का चौथा स्तंभ

- भारतीय लोकतंत्र तीन स्तंभों के मध्य शक्ति के पृथक्करण सिद्धांत पर आधारित है।
- ये तीन स्तंभ विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका हैं। इनमें प्रत्येक स्तंभ एक-दूसरे के साथ 'चेक एंड बैलेंस' के सिद्धांत के रूप में कार्य करते हैं।
- हालाँकि, वर्तमान में शासन और प्रशासन की जटिलताओं के कारण स्वतंत्र निकायों की आवश्यकता है, जो निरीक्षण जैसे महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिये विशेषज्ञता प्राप्त हैं।
- इन स्वतंत्र निकायों को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता है।
- प्राय: मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है, परंतु राष्ट्र-राज्य की आधुनिक अवधारणा में संवैधानिक और वैधानिक (निर्वाचन आयोग, नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक, केंद्रीय व राज्य सूचना आयोग, केंद्रीय व राज्य मानव अधिकार आयोग) निकायों को भी लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाने लगा है।
- तीन अन्य व्यक्तियों को मानवाधिकारों से संबंधित जानकारी अथवा कार्यानुभव होना चाहिये। इसमें कम-से-कम एक महिला सदस्य का होना आवश्यक है।
- इन पूर्णकालिक सदस्यों के अतिरिक्त आयोग में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC), राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग (NCST), राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW), राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC), राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग के अध्यक्ष तथा दिव्यांग व्यक्तियों के कार्यालय के मुख्य आयुक्त को भी NHRC का सदस्य नियुक्त किया गया है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के कार्य और शक्तियाँ

- मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित कोई मामला यदि NHRC के संज्ञान में आता है या शिकायत के माध्यम से लाया जाता है तो NHRC को उसकी जाँच करने का अधिकार है।
- इसके पास मानवाधिकारों के उल्लंघन से संबंधित सभी न्यायिक मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है।
- आयोग किसी भी जेल का दौरा कर सकता है और जेल के बंदियों की स्थिति का निरीक्षण एवं उसमें सुधार के लिये सुझाव दे सकता है।
- NHRC संविधान या किसी अन्य कानून द्वारा मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु प्रदान किये गए रक्षोपायों की समीक्षा कर सकता है और उनमें बदलावों की सिफारिश भी कर सकता है।
- NHRC मानव अधिकार के क्षेत्र में अनुसंधान का कार्य भी करता है।
- आयोग प्रकाशनों, मीडिया, सेमिनारों और अन्य माध्यमों से समाज के विभिन्न वर्गों के बीच मानवाधिकारों से जुड़ी जानकारी का प्रचार करता है और लोगों को इन अधिकारों की सुरक्षा के लिये प्राप्त उपायों के प्रति भी जागरूक करता है।
- आयोग के पास दीवानी अदालत की शक्तियाँ हैं और यह अंतरिम राहत भी प्रदान कर सकता है।
- इसके पास मुआवज़े या हर्जाने के भुगतान की सिफ़ारिश करने का भी अधिकार है।
- NHRC की विश्वसनीयता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसके पास हर साल बहुत बड़ी संख्या में शिकायतें दर्ज़ होती हैं।
- यह राज्य तथा केंद्र सरकारों को मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिये महत्त्वपूर्ण कदम उठाने की सिफ़ारिश भी कर सकता है।
- आयोग अपनी रिपोर्ट भारत के राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करता है जिसे संसद के दोनों सदनों में रखा जाता है।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की सीमाएँ

- NHRC के पास जाँच करने के लिये कोई भी विशेष तंत्र नहीं है। अधिकतर मामलों में यह संबंधित सरकार को मामले की जाँच करने का आदेश देता है।
- NHRC के पास किसी भी मामले के संबंध में मात्र सिफारिश करने का ही अधिकार है, वह किसी को निर्णय लागू करने के लिये बाध्य नहीं कर सकता।

नोट :

- NHRC उन शिकायतों की जाँच नहीं कर सकता जो घटना होने के एक साल बाद दर्ज कराई जाती हैं और इसलिये कई शिकायतें बिना जाँच के ही रह जाती हैं।
- अक्सर सरकार या तो NHRC की सिफारिशों को पूरी तरह से खारिज कर देती है या उन्हें आंशिक रूप से ही लागू किया जाता है।
- राज्य मानव अधिकार आयोग केंद्र सरकार से किसी भी प्रकार की सूचना नहीं मांग सकते, जिसका सीधा सा अर्थ यह है कि उन्हें केंद्र के तहत आने वाले सशस्त्र बलों की जाँच करने से रोका जाता है।
- आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति वाली चयन समिति में राजनीतिक पृष्ठभूमि के लोगों का प्रतिनिधित्व होता है, जिससे हितों का टकराव होने की आशंका होती है। इसके अतिरिक्त नियुक्ति के मापदंडों का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है।

प्रमुख सुझाव

- NHRC को सही मायनों में मानवाधिकारों के उल्लंघन का एक कुशल प्रहरी बनाने के लिये उसमें कई सुधार किये जाने की आवश्यकता है। सरकार द्वारा आयोग के निर्णयों को पूरी तरह से लागू करके उसकी प्रभावशीलता में वृद्धि की जा सकती है।
- NHRC की संरचना में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता है तथा इसमें आम नागरिकों और सामाजिक संगठनों के प्रतिनिधियों को भी शामिल किया जाना चाहिये।
- आयोग के अध्यक्ष व सदस्यों की नियुक्ति वाली चयन समिति में राजनीतिक पृष्ठभूमि के लोगों के अतिरिक्त सिविल सोसायटी के सदस्य भी शामिल किये जाने चाहिये, ताकि आयोग पर किसी भी प्रकार का राजनीतिक दबाव न डाला जा सके।
- NHRC को जाँच के लिये उचित अनुभव वाले कर्मचारियों का एक नया काडर तैयार कर प्रदान किया जाना चाहिये ताकि सभी मामलों की स्वतंत्र जाँच की जा सके।
- मानव अधिकार आयोग किसी भी मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच नहीं कर सकता है, अगर शिकायत घटना के एक वर्ष बाद की गई हो। इस तरह का प्रावधानों को निरसित कर देना चाहिये।
- सरकार द्वारा मानव अधिकार आयोग को सशस्त्र बलों के खिलाफ मानव अधिकार के उल्लंघन की स्थिति में जाँच करने की शक्ति प्रदान करनी चाहिये।
- सरकार द्वारा आयोग के निर्णयों को पूरी तरह से लागू करके उसकी प्रभावकारिता में वृद्धि की जा सकती है।
- भारत में मानव अधिकार की स्थिति को सुधारने और मज़बूत करने के लिये राज्य अभिकर्त्ताओं और गैर-राज्य अभिकर्त्ताओं (State & Non-state Actors) को एक साथ मिलकर काम करना होगा।

निष्कर्ष: 21वीं सदी मानवाधिकारों की सदी है। किसी भी व्यक्ति, सरकार या प्राधिकरण को इन अधिकारों के उपयोग पर प्रतिबंध लगाने या इन्हें सीमित करने का कोई अधिकार नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति जाति, पंथ, नस्ल, लिंग, संस्कृति, सामाजिक और आर्थिक स्थिति की भिन्नता के बावजूद इन अधिकारों को समान रूप से प्राप्त करता है। मानवाधिकारों और इनके उल्लंघन से जुड़े मुद्दों के प्रति पूरी गंभीरता प्रदर्शित करते हुए भारत में भी इसके संरक्षण के लिए प्रभावशाली कदम सतत रूप से उठाए जाते रहने चाहिये और राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को अधिक सशक्त बनाना ऐसे उपायों की श्रृंखला में एक महत्त्वपूर्ण चरण होगा।

न्याय की लंबी प्रक्रिया: एक चिंताजनक स्थिति

संदर्भ

प्रसिद्द दार्शनिक जॉन राल्स ने अपनी कृति 'A Theory of Justice' में यह माना है कि 'न्याय सामाजिक संस्थाओं का प्रथम एवं प्रधान सद्गुण है अर्थात सभी सामाजिक संस्थाएँ न्याय के आधार पर ही अपनी औचित्यपूर्णता को सिद्ध कर सकती हैं।' भारत में भी न्यायिक व्यवस्था का अपना अलग महत्त्व है। यदि भारतीय न्यायिक व्यवस्था का छिद्रान्वेषण करें तो हम पाते हैं कि न्यायाधीशों की कमी, न्याय व्यवस्था की खामियाँ और लचर बुनियादी ढाँचा जैसे कई कारणों से न्यायालयों में लंबित मुकदमों की संख्या बढ़ती जा रही है तो वहीँ दूसरी ओर न्यायाधीशों व न्यायिक कर्मचारियों पर काम का बोझ बढ़ता जा रहा है। न्याय में देरी अन्याय कहलाती है लेकिन देश की न्यायिक व्यवस्था को यह विडंबना तेज़ी से घेरती जा रही है। देश के न्यायालयों में लंबित पड़े मामलों को आँकड़ा लगभग 3.5 करोड़ पहुँच गया है। इनका प्रत्यक्ष उदाहरण निर्भया केस है। वर्ष 2012 में निर्भया के साथ हुए जघन्य अपराध के विचारण में सात वर्ष से अधिक समय लगा, जो न्याय व्यवस्था की लचर कार्यप्रणाली को उज़ागर करता है।

नोट :

इस आलेख में न्याय व्यवस्था की लचर कार्यप्रणाली के कारणों और इस समस्या के समाधान के लिये संभावित उपायों पर विमर्श किया जाएगा।

न्यायिक प्रणाली की समस्याएँ

- भारतीय न्यायिक प्रणाली दुनिया की सबसे पुरानी न्यायिक प्रणालियों में से एक है। भारतीय न्यायिक प्रणाली 'सामान्य प्रणाली' के साथ नियामक कानून और वैधानिक कानून का पालन करती है।
- भारतीय न्यायिक प्रणाली की निम्नलिखित समस्याएँ हैं-
  - न्यायालय में लंबित मामले- सरकारी आँकड़ों के अनुसार, उच्चतम न्यायालय में 58,700 तथा उच्च न्यायालयों में करीब 44 लाख और ज़िला एवं सत्र न्यायालय तथा अधीनस्थ न्यायालयों में लगभग तीन करोड़ मुकदमे लंबित हैं। इन कुल लंबित मामलों में से 80 प्रतिशत से अधिक मामले ज़िला और अधीनस्थ न्यायालयों में हैं। इसका मुख्य कारण भारत में न्यायालयों की कमी, न्यायाधीशों के स्वीकृत पदों का कम होना तथा पदों की रिक्तता का होना है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर देश में प्रति 10 लाख लोगों पर केवल 18 न्यायाधीश हैं। विधि आयोग की एक रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी कि प्रति 10 लाख जनसंख्या पर न्यायाधीशों की संख्या तकरीबन 50 होनी चाहिये। इस स्थिति तक पहुँचने के लिये पदों की संख्या बढ़ाकर तीन गुना करनी होगी।
  - पारदर्शिता का अभाव- भारत में न्यायिक व्यवस्था से जुड़ी एक मुख्य समस्या पारदर्शिता का अभाव है। न्यायालयों में नियुक्ति, स्थानांतरण में पारदर्शिता को लेकर सवाल उठते रहे है। वर्तमान में कॉलेजियम प्रणाली के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं उनका स्थानांतरण किया जाता है। कॉलेजियम प्रणाली में उच्चतम न्यायालय के संबंध में निर्णय के लिये मुख्य न्यायाधीश सहित 5 वरिष्ठतम न्यायाधीश होते है। वहीं उच्च न्यायालय के संबंध में इनकी संख्या 3 होती है। इस प्रणाली की क्रियाविधि जटिल और अपारदर्शी होने के कारण सामान्य नागरिक की समझ से परे होती है। ऐसी स्थिति में इस प्रणाली को पारदर्शी बनाने के लिये संसद द्वारा राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के माध्यम से असफल प्रयास किया जा चुका है। भारत के संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रावधान है, जिसमें जानने का अधिकार भी शामिल है। इसको ध्यान में रखते हुए कोई भी ऐसी प्रणाली जो अपारदर्शी हो उसको नागरिकों के अधिकारों की पूर्ति के लिये पारदर्शी बनाया जाना चाहिये।
  - न्यायालयों में भ्रष्टाचार- किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जवाबदेहिता एक आवश्यक पक्ष होता है। इसको ध्यान में रखते हुए सभी सार्वजनिक पदों पर स्थित व्यक्तियों का उत्तरदायित्व निश्चित किया जाता है। भारत में भी विधायिका और कार्यपालिका के संबंध में कई कानूनों एवं चुनावी प्रक्रिया द्वारा उत्तरदायित्व सुनिश्चित किये गए हैं, लेकिन न्यायपालिका के संदर्भ में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटाने का एक मात्र उपाय सिर्फ महाभियोग ही होता है। ज्ञात हो कि अभी तक किसी भी न्यायाधीश पर महाभियोग की कार्यवाही नहीं की गई है। हालाँकि अभी कुछ समय पहले ही में भारत के मुख्य न्यायाधीश ने एक न्यायाधीश को जाँच में कदाचार का दोषी पाए जाने के बाद उसे पद से हटाने के लिये प्रधानमंत्री से अनुरोध करने संबंधी मामला चर्चा में रहा है। न्यायालय के संबंध में ऐसी कोई माध्यमिक व्यवस्था नहीं है, जिससे न्यायालय स्वयं ही न्यायाधीशों से जुड़े कदाचार के मामले में उचित कार्यवाही कर सके।
  - विचाराधीन कैदियों की समस्या- भारत के सभी न्यायालयों में लगभग 3.5 करोड़ मामले लंबित है, इनमें से कई मामले लंबे समय से लंबित हैं। मामलों का लंबित होना पीड़ितों और ऐसे लोगों, जो किसी मामले के चलते जेल में कैद है किंतु उनको दोषी करार नहीं दिया गया है, दोनों के दृष्टिकोण से अन्याय को जन्म देता है। पीड़ितों के मामले में कुछ ऐसे संदर्भ भी रहे हैं जब आरोपी को दोषी ठहराए जाने में 30 वर्ष तक का समय लगा, हालाँकि तब तक आरोपी की मृत्यु हो चुकी थी। तो वहीं दूसरी ओर भारत की जेलों में बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विचाराधीन कैदी बंद है, जिनके मामले में अब तक निर्णय नहीं दिया जा सका है। कई बार ऐसी स्थिति भी आती है जब कैदी अपने आरोपों के दंड से अधिक समय कैद में बिता देते है। साथ ही इतने वर्ष जेल में रहने के पश्चात् उसे न्यायालय से आरोप मुक्त कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति न्याय की दृष्टि से अन्याय को जन्म देती है। इस स्थिति में त्वरित सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

समस्याओं का कारण

- देशभर के न्यायालयों में न्यायिक अवसंरचना का अभाव है। न्यायालय परिसरों में मूलभूत सुविधाओं की कमी है।
- भारतीय न्यायिक व्यवस्था में किसी वाद के सुलझाने की कोई नियत अवधि तय नहीं की गई है, जबकि अमेरिका में यह तीन वर्ष निर्धारित है।

नोट :

- केंद्र एवं राज्य सरकारों के मामले न्यायालयों में सबसे ज्यादा है। यह आँकड़ा 70% के लगभग है। सामान्य और गंभीर मामलों की भी सीमाएँ तय होनी चाहिये।
- न्यायालयों में लंबे अवकाश की प्रथा है, जो मामलों के लंबित होने का एक प्रमुख कारण है।
- न्यायिक मामलों के संदर्भ में अधिवक्ताओं द्वारा किये जाने वाला विलंब एक चिंतनीय विषय है, जिसके कारण मामलें लंबे समय तक अटके रहते हैं।
- न्यायिक व्यवस्था में तकनीकी का अभाव है।
- न्यायालयों तथा संबंधित विभागों में संचार की कमी व समन्वय का अभाव है, जिससे मामलों में अनावश्यक विलंब होता है।

सुधार की आवश्यकता क्यों?

- उच्च व निचली अदालतों में भी नियुक्ति में देरी होने के कारण न्यायिक अधिकारियों की कमी हो गई है, जो कि बहुत ही चिंताजनक है। इसी कारण, मामलों के लंबित रहने का अनुपात बढ़ता जा रहा है और यह पूरे भारतीय न्यायिक तंत्र को जकड़ चुका है।
- छोटे कार्यकाल और कार्य के भारी दबावों के कारण उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को कानून को उत्कृष्ट बनाने और आवश्यक परिपक्वता अर्जित करने का अवसर ही नहीं मिल पाता है।
- न्याय अभी भी देश के बहुसंख्यक नागरिकों की पहुँच के बाहर है, क्योंकि वे वकीलों के भारी खर्च वहन नहीं कर पाते हैं और उन्हें व्यवस्था की प्रक्रियात्मक जटिलता से होकर गुजरना पड़ता है।
- न्यायाधीशों को मनोनीत करने के लिये न तो कोई मापदंड निर्धारित किये गए हैं और न ही नियुक्ति के लिये प्रस्तावित किये गए नामों का किसी मापदंड पर रीतिबद्ध मूल्यांकन किया जा सकता है। प्राय: कहा जाता है कि न्यायिक तंत्र में भाई-भतीजावाद की प्रवृत्ति काफी बढ़ गई है, जिसके चलते यह अकुशलताओं से गुजर रहा है।

संभावित सुधार के उपाय

- वर्तमान में 10 लाख लोगों पर सिर्फ 18 न्यायाधीश ही है। ऐसे में किसी भी न्यायपालिका से समय पर न्याय देने की उम्मीद करना उचित नहीं हो सकता है। विधि आयोग की सिफारिश के अनुसार इन पदों की संख्या में वृद्धि किया जाना चाहिये।
- विशेष श्रेणी के मामलों के समाधान के लिये समय-सीमा तय की जानी चाहिये तथा लोक अदालतों और ग्राम न्यायालयों की स्थापना की जानी चाहिये। इससे न केवल विचाराधीन मामलों की संख्या में आनुपातिक कमी आएगी बल्कि न्यायपालिका के मूल्यवान समय की बचत होगी।
- अधीनस्थ न्यायालयों के स्तर पर सर्वोत्तम उपलब्ध प्रतिभा को आकर्षित करने के लिये अखिल भारतीय न्यायिक सेवा का गठन किया जा सकता है। यह जजों की योग्यता व गुणवत्ता में सुधार करेगा।
- सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के कुशलतापूर्वक उपयोग से न्यायिक डेटाबेस बनाया जा सकता है। इसके द्वारा जजों के अलग-अलग प्रदर्शनों का आकलन किया जा सकेगा तथा एक संस्था के रूप में न्यायालय के समग्र प्रदर्शन का आकलन भी किया जा सकेगा।
- अधिवक्ता अधिनियम, 1961 में आवश्यक संशोधन करके अधिवक्ताओं के लिये आचार संहिता के अनुपालन को प्रभावी बनाया जाना चाहिये ताकि मामलों को जानबूझकर विलंबित न किया जा सके।
- विधिज्ञ परिषद की होने वाली अनावश्यक हड़तालों पर भी प्रतिबंध आरोपित करना चाहिये।
- न्यायालय में दायर अधिकांश मुकदमों में सरकार एक पक्षकार है। न्यायालय सरकार को समझौते के लिये प्रोत्साहित कर सकती है ताकि लंबित वादों की संख्या में कमी लाई जा सकें।

निष्कर्ष

उपर्युक्त सभी बातों को देखते हुए स्पष्ट है कि भारतीय न्याय तंत्र में विभिन्न स्तरों पर सुधार की दरकार है। यह सुधार न सिर्फ न्यायपलिका के बाहर से बल्कि न्यायपालिका के भीतर भी होने चाहिये। ताकि किसी भी प्रकार के नवाचार को लागू करने में न्यायपालिका की स्वायत्तता बाधा न बन सकें। न्यायिक व्यवस्था में न्याय देने में विलंब न्याय के सिद्धांत से विमुखता है, अत: न्याय सिर्फ होना ही नहीं चाहिये बल्कि दिखना भी चाहिये।

नोट :

उच्च शिक्षा में पुनर्संरचना की आवश्यकता

संदर्भ

भारत का उच्च शिक्षा तंत्र अमेरिका, चीन के बाद विश्व का तीसरा सबसे बड़ा उच्च शिक्षा तंत्र है। विगत 70 वर्षों में देश के विश्वविद्यालयों की संख्या में 11.6 %, महाविद्यालयों में 12.5 %, विद्यार्थियों की संख्या में 60 % और शिक्षकों की संख्या में 25 % वृद्धि हुई है। सभी को उच्च शिक्षा के समान अवसर सुलभ कराने की नीति के अंतर्गत संपूर्ण देश में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और साथ ही उच्च शिक्षा की अवस्थापना सुविधाओं पर विनियोग भी तदनुरुप बढ़ा है। लेकिन दुर्भाग्य है कि इसके बावजूद भी उच्च शिक्षा की सुलभता का सपना साकार नहीं हो पा रहा है। स्वतंत्रता के सात दशक के बाद भी भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली अभी तक पूरी तरह से विकसित नहीं हुई है। हाल ही में जारी विश्वविद्यालय रैंकिंग में दुनिया के शीर्ष 100 विश्वविद्यालयों में एक भी भारतीय विश्वविद्यालय को स्थान प्राप्त नहीं हो सका। भारत की निम्न रैंकिंग में काबिज़ होने के कारणों में खराब शैक्षिक प्रदर्शन, छात्रों को प्राप्त होने वाली खराब रोज़गार की स्थिति, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राप्त होने वाले शैक्षिक पुरस्कारों का अभाव, व्यावसायिक शैक्षिक कार्यक्रमों को मान्यता देने में खराब ट्रैक रिकॉर्ड और शोध एवं अनुसंधान के लिये धन का अभाव इत्यादि प्रमुख हैं।

इस आलेख में भारत के उच्च शिक्षा तंत्र की वास्तविक स्थिति, गुणवत्ता की समस्या, शिक्षा व्यवस्था की प्रमुख चुनौतियों समेत भारत की उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिये किये जा रहे प्रयासों का विश्लेषण किया जाएगा।

भारत का उच्च शिक्षा तंत्र: विहंगावलोकन

जनसंख्या की दृष्टि से देखा जाए तो भारत की उच्चतर शिक्षा व्यवस्था अमरीका और चीन के बाद तीसरे स्थान पर आती है। द टाइम्स विश्व यूनिवर्सिटीज़ रैंकिंग-2020 के अनुसार, यूनाइटेड किंगडम की यूनिवर्सिटी ऑफ़ ऑक्सफोर्ड शीर्ष पर है जबकि दुनिया के शीर्ष 200 विश्वविद्यालयों में भारत का एक भी विश्वविद्यालय नहीं है। कभी-कभी तथ्य अपनी कहानी स्वयं बयाँ करते हैं, इसलिये भारत के शिक्षा व्यवस्था की वास्तविक स्थिति को समझने के लिये तथ्यों पर ही विचार करते हैं-

- स्कूली शिक्षा हासिल करने वाले 9 छात्रों में से 1 ही महाविद्यालय पहुँच पाता है। भारत में उच्च शिक्षा के लिये रजिस्ट्रेशन कराने वाले छात्रों का अनुपात दुनिया में सबसे कम यानी सिर्फ़ 11% है। जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में यह अनुपात 83% है।
- इस अनुपात को 15% तक ले जाने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये भारत को 2,26,410 करोड़ रुपए का निवेश करना होगा जबकि 11वीं पंचवर्षीय योजना में इसके लिये सिर्फ़ 77,933 करोड़ रुपए का ही प्रावधान किया गया था।
- हाल ही में नैसकॉम और मैकिन्से द्वारा किये गए शोध के अनुसार, मानविकी विषयों में 10 में से 1 और इंजीनियरिंग में डिग्री ले चुके 4 में से 1 भारतीय छात्र ही नौकरी पाने के योग्य पाए गए हैं। भारत के पास दुनिया की सबसे बड़ी तकनीकी और वैज्ञानिक मानव शक्ति का ज़ख़ीरा है इस तथ्य पर यहीं प्रश्नचिह्न लग जाता है।
- राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद के शोध के अनुसार, भारत के 90% कॉलेजों और 70% विश्वविद्यालयों का स्तर बहुत ही कमज़ोर है।
- भारतीय शिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों की कमी का प्रत्यक्ष उदाहरण भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान हैं जहाँ 15 से 25 % तक शिक्षकों की कमी है।
- भारतीय विश्वविद्यालय औसतन हर पाँच से दस वर्ष में अपना पाठ्यक्रम बदलते हैं लेकिन उसके बावजूद ये मूल उद्देश्य को पूरा करने में विफल रहते हैं।
- भारतीय छात्र विदेशी विश्वविद्यालयों में पढ़ने के लिये प्रत्येक वर्ष सात अरब डॉलर यानी करीब 43 हज़ार करोड़ रुपए ख़र्च करते हैं क्योंकि भारतीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाई का स्तर निम्न है।

शिक्षा व्यवस्था में प्रमुख चुनौतियाँ

- निम्न सकल नामांकन दर- अखिल भारतीय सर्वेक्षण पर उच्च शिक्षा की रिपोर्ट 2018-19 के अनुसार, भारत में उच्च शिक्षा में सकल नामांकन अनुपात (Gross Enrolment Ratio- GER) केवल 26.3% है, जो विकसित देशों के सापेक्ष अन्य विकासशील देशों में काफी कम है।

नोट :

- राजनीतिक हस्तक्षेप- उच्च शिक्षा के प्रबंधन में राजनेताओं का बढ़ता दखल उच्च शिक्षण संस्थानों की स्वायत्तता को खतरे में डालता है। इसके अलावा छात्र, विश्वविद्यालयों में राजनीतिक गतिविधियों का आयोजन करते हैं और अपने उद्देश्यों को भूल जाते हैं तथा राजनीति में अपने करियर को विकसित करना शुरू करते हैं।
- खराब अवसंरचना और सुविधाएँ- खराब बुनियादी ढाँचा भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली के लिये एक बड़ी चुनौती है, विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा संचालित संस्थान खराब भौतिक सुविधाओं और बुनियादी ढाँचे से ग्रस्त हैं। संकाय की कमी और योग्य शिक्षकों को आकर्षित करने और बनाए रखने के लिये राज्य शैक्षिक प्रणाली की अक्षमता कई वर्षों से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिये चुनौती बन रही है। उच्च शिक्षण संस्थानों में बहुत सारी रिक्तियाँ होने के बावजूद बड़ी संख्या में नेट / पी.एचडी डिग्रीधारी उम्मीदवार बेरोज़गार हैं।
- अपर्याप्त अनुसंधान- उच्च शिक्षण संस्थानों में अनुसंधान पर पर्याप्त ध्यान केंद्रित नहीं किया गया है। छात्रों को सलाह देने के लिये अपर्याप्त संसाधन और सुविधाएँ हैं, साथ ही सीमित संख्या में ही गुणवत्तायुक्त शिक्षक उपलब्ध हैं।
- कमज़ोर प्रशासनिक संरचना- भारतीय शिक्षण व्यवस्था का प्रबंधन अति-केंद्रीकृत नौकरशाही संरचनाओं, जवाबदेही, पारदर्शिता और व्यावसायिकता की कमी जैसी चुनौतियों का सामना करता है। संबद्ध कॉलेजों और छात्रों की संख्या में वृद्धि के परिणामस्वरूप, विश्वविद्यालयों के प्रशासनिक कार्यों का बोझ काफी बढ़ गया है जिससे शिक्षाविदों की गुणवत्ता और अनुसंधान पर ध्यान केंद्रित नहीं किया जा रहा है।
- गुणवत्ता की समस्या- उच्च शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित करना आज भारत में शिक्षा के क्षेत्र में सामने आ रही चुनौतियों में से एक है। हालाँकि, सरकार लगातार गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर ध्यान केंद्रित कर रही है। फिर भी, भारत में बड़ी संख्या में कॉलेज और विश्वविद्यालय यूजीसी द्वारा निर्धारित न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं जिसके कारण हमारे विश्वविद्यालय दुनिया के शीर्ष विश्वविद्यालयों के बीच अपनी जगह बनाने की स्थिति में नहीं हैं।

समाधान के प्रयास

- वर्ष 2018 में केंद्र सरकार द्वारा उच्च शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने तथा फर्ज़ी विश्वविद्यालयों पर रोक लगाने के उद्देश्य से यूजीसी अधिनियम में बदलाव कर इसके स्थान पर उच्च शिक्षा आयोग (Higher Education Commission of India- HECI) की स्थापना करने का फैसला लिया गया। ऐसे समय में जब कौशल निर्माण तथा शैक्षिक अवसरों तक पहुँच होना अति महत्त्वपूर्ण है, केंद्र सरकार द्वारा तैयार किये गए उच्च शिक्षा आयोग के प्रावधानों के प्रभाव दूरगामी सिद्ध हो सकते हैं।
- इंजीनियरिंग, चिकित्सा तथा कानून के लिये वर्तमान में स्थापित बहु नियामक संस्थाओं द्वारा भविष्य में निभाई जाने वाली भूमिका उन प्रमुख समस्याओं में शामिल हैं जिनका समाधान करना आवश्यक है। यशपाल समिति ने इन सभी को एक समिति के अंतर्गत लाने का सुझाव दिया था। इसके साथ ही अन्य पेशेवर संस्थानों जैसे- आर्किटेक्चर तथा नर्सिंग को भी इसमें शामिल किये जाने की आवश्यकता है।
- इसका लक्ष्य प्रत्येक वर्ग के लिये पाठ्यक्रमों में परिवर्तन करने और प्रत्येक विषय के अध्ययन को प्रोत्साहित करने की पर्याप्त स्वायत्तता के साथ अकादमिक मानक निर्धारित करना होगा।
- राज्य सरकारों को अपने राज्य में स्थित राज्य विश्वविद्यालयों को शोध एवं अनुसंधान के लिये धन उपलब्ध कराना चाहिये।
- इम्पैक्टिंग रिसर्च इन्नोवेशन एंड टेक्नोलॉजी (IMPacting Research INnovation and Technology;IMPRINT) के तहत, सरकार का उद्देश्य भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान और भारतीय विज्ञान संस्थान के सहयोगात्मक प्रयासों के माध्यम से प्रमुख इंजीनियरिंग चुनौतियों का समाधान करना है।
- देश के समस्त भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानो में नवाचार को बढ़ावा देने, नवोन्मेषी विचारों को प्रेरित करने, शिक्षा एवं उद्योग के मध्य कार्रवाई का समन्वय करने और प्रयोगशालाओं एवं अनुसंधान सुविधाओं को सुदृढ़ करने हेतु उच्चतर अविष्कार योजना की शुरूआत की गई।
- राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग फ्रेमवर्क (National Institutional Ranking Framework:NIRF) के तहत शैक्षिक संस्थानों को वस्तुनिष्ठ मानदंडों के आधार पर एक स्वतंत्र रैंकिंग एजेंसी द्वारा रैंक प्रदान की जाती है।
- ग्लोबल इनिशिएटिव ऑफ अकैडमिक नेटवर्क्स योजना वैज्ञानिकों और उद्यमियों के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिभाओं के उपयोग हेतु भारत और अन्य देशों के उच्च शिक्षण संस्थानों के मध्य साझेदारी की सुविधा प्रदान करती है।

आगे की राह

भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार एवं इसकी प्रासंगिकता बढ़ाने के लिये निम्नलिखित प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

नोट :

- उच्च शिक्षा की बेहतर गुणवत्ता के उद्देश्य से सुधार-
  - विश्वविद्यालयों को प्रदान किए जाने वाले अनुदान के कुछ अनुपात को उनके प्रदर्शन और शिक्षा की गुणवत्ता से जोड़ा जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त, केंद्रीय और क्षेत्रीय स्तर के विश्वविद्यालयों के मध्य एक संतुलित आवंटन सुनिश्चित किया जाना चाहिये।
  - गुणवत्तापूर्ण शिक्षण कौशल की पर्याप्तता को सुनिश्चित करने के लिये कुछ प्रमुख सुधार किये जाने की आवश्यकता है- जैसे पूर्व-सेवा संकाय प्रशिक्षण, जर्नलों की गुणवत्ता की जांच, निष्पादन आधारित संकाय मूल्यांकन, विशिष्ट पेशेवरों की भर्ती को प्रोत्साहन आदि।
  - बेहतर गुणवत्ता वाले शिक्षकों की कमी, बढ़े हुए ग्रेड, छात्रों और शिक्षकों के मध्य अनुपस्थिति की प्रकृति, प्रयोगशाला अवसंरचना की कमी आदि के मुद्दों से पर्याप्त रूप से निपटने की आवश्यकता है।
- उच्च शिक्षा की प्रासंगिकता बढ़ाने के उद्देश्य से सुधार-
  - पाठ्यक्रम को इस प्रकार से डिज़ाइन किया जाना चाहिये जिससे वह उच्च शिक्षा को कौशल/ व्यावसायिक प्रशिक्षण और इंडस्ट्री इंटरफेस के साथ एकीकृत कर सके।
  - स्थानीय समुदाय के मुद्दों के साथ उच्च शिक्षा के अधिक एकीकरण को बढ़ावा देने के लिये, IMPRINT इंडिया जैसी पहल को भी सामाजिक प्रासंगिकता के क्षेत्रों में प्रत्यक्ष अनुसंधान के लिये विस्तारित करने की आवश्यकता है।
  - भारतीय उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा छात्रों को अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप ज्ञान, कौशल और क्षमता प्रदान की जानी चाहिये। यह छात्रों को वैश्विक नागरिक के रूप में अपनी प्रासंगिकता बढ़ाने वाले वैश्विक दृष्टिकोण को विकसित करने में सहायक होगा।
  - खोई हुई विश्वसनीयता को पुन: प्राप्त करने और विश्वविद्यालयों की क्षमता बढ़ाने के लिये, अधिगम परिणामों,नियोजनीयता संबंधी कौशल और दक्षताओं पर ध्यान केंद्रित करने के साथ एक राष्ट्रीय उच्चत्तर शिक्षा योग्यता फ्रेमवर्क को मिशन मोड में विकसित किया जाना चाहिये।

भारत में लॉकडाउन

संदर्भ

इस समय विश्व के लगभग सभी देशों में कोरोना वायरस अपने पैर पसार रहा है। कोरोना वायरस के बढ़ते खतरे के बीच विश्व के लगभग सभी देशों ने संपूर्ण लॉकडाउन या आंशिक लॉकडाउन की स्थिति को अपना लिया है। चीन, इटली, ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, और ईरान के बाद भारत ने भी इस बढ़ते खतरे को रोकने के लिये अग्रिम 21 दिनों के लिये संपूर्ण लॉकडाउन के विकल्प को अपना लिया है। वस्तुत: पिछले कुछ दिनों से लॉकडाउन शब्द चर्चा के केंद्र में है। इसके साथ ही लोग यह भी जानने का प्रयास कर रहे हैं कि आखिर लॉकडाउन है क्या? क्या लॉकडाउन में सभी सेवाएँ बंद हो जाएँगी? क्या देश का स्वास्थ्य तंत्र इतना कमज़ोर है कि लॉकडाउन ही अंतिम विकल्प बचा है? लॉकडाउन एवं कर्फ्यू में क्या अंतर है? लॉकडाउन का उल्लंघन करने पर दंड का क्या प्रावधान है? क्या लॉकडाउन आपूर्ति श्रृंखला को प्रभावित कर देगा?

इस आलेख में लॉकडाउन से संबंधित सभी प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयास किया जाएगा। साथ ही लॉकडाउन की स्थिति में आवश्यक सेवाओं से संबंधित आपूर्ति श्रृंखला को बहाल रखने के लिये सरकार के द्वारा किये जा रहे प्रयासों का भी विश्लेषण करेंगे।

पृष्ठभूमि

लॉकडाउन के बारे में जानने से पूर्व हमें इसके कारण के बारे में जानना चाहिये। लॉकडाउन का कारण कोरोना वायरस है..जी नहीं, यह आधा सच है। पूरा सच यह है कि लॉकडाउन का कारण कोरोना वायरस का तीव्रता से प्रसार है। कोरोना वायरस की विभिन्न अवस्थाएँ इसे और अधिक हानिकारक बना रही हैं। इसकी विभिन्न अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं-

- प्रथम अवस्था- यह किसी भी वायरस की प्रारंभिक अवस्था है, जिसमें कोई व्यक्ति तब संक्रमित होता है जब वह वायरस के उद्गम स्थल पर पहुँचता है और उसके बाद वह व्यक्ति उस वायरस का वाहक बन जाता है।
- द्वीतीय अवस्था- इसे सामान्य रूप से लोकल ट्रांसमिशन के नाम से भी जानते हैं। इसमें वायरस के उद्गम स्थल से संक्रमित होने वाला व्यक्ति जब अपने परिवार या परिजनों के संपर्क में आता है तो वायरस का ट्रांसमिशन उन लोगों तक भी हो जाता है।
- तृतीय अवस्था- इस अवस्था को सामुदायिक ट्रांसमिशन के नाम से जानते हैं। यह एक खतरनाक अवस्था है क्योंकि, इसमें संक्रमण लोकल स्तर पर संक्रमित हुए किसी व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में श्रृंखलाबद्ध रूप में तेजी से फैलता है। संक्रमण के प्रसार की दृष्टि से यह अवस्था अत्यधिक हानिकारक होती है। इस समय भारत तृतीय अवस्था के प्रवेश द्वार पर खड़ा है।

नोट :

- चतुर्थ अवस्था- यह संक्रमण की अंतिम अवस्था होती है। इसमें संक्रमण से प्रभावित व्यक्तियों की बड़े पैमाने पर मृत्यु हो जाती है। चीन, इटली, संयुक्त राज्य अमेरिका और ईरान तृतीय अवस्था को पार कर चतुर्थ अवस्था में पहुँच गए हैं।

क्या है लॉकडाउन ?

- लॉकडाउन एक प्रशासनिक आदेश होता है। लॉकडाउन को एपिडमिक डीज़ीज एक्ट, 1897 के तहत लागू किया जाता है। ये अधिनियम पूरे भारत पर लागू होता है।
- इस अधिनियम का इस्तेमाल किसी विकराल समस्या के दौरान होता है। जब केंद्र या राज्य सरकार को ये विश्वास हो जाए कि कोई गंभीर बीमारी देश या राज्य में आ चुकी है और सभी नागरिकों तक पहुँच रही है तो केंद्र व राज्य सरकार सोशल डिस्टेंसिंग (सामाजिक स्तर पर एक-दूसरे से दूरी बनाना) को क्रियान्वित करने के लिये इस अधिनियम को लागू कर सकते हैं।
- इसे किसी आपदा के समय शासकीय रूप से लागू किया जाता है। इसमें लोगों से घर में रहने का आह्वान और अनुरोध किया जाता है। इसमें ज़रूरी सेवाओं के अलावा सारी सेवाएँ बंद कर दी जाती हैं। कार्यालय, दुकानें, फ़ैक्टरियाँ और परिवहन सुविधा सब बंद कर दी जाती है। जहाँ संभव हो वहाँ कर्मचारियों को घर से काम करने के लिये कहा जाता है।
- लॉकडाउन के दौरान आवश्यक सेवाएँ निर्बाध रूप से चलती रहती हैं। अपने दिशा-निर्देश में सरकार ने शासकीय आदेशों का पालन करना अनिवार्य बताया है।

अनिवार्य शासकीय दिशा-निर्देश

- केंद्र सरकार के सभी कार्यालय बंद रहेंगे या जिन विभागों में संभव हो वहाँ कर्मचारी घर से कार्य कर सकते हैं। आपातकालीन सेवाओं से संबंधित विभाग जैसे- सैन्य कार्यालय, केंद्रीय पुलिस बल से संबंधित कार्यालय, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस, आपदा प्रबंधन, विद्युत उत्पादन एवं ट्रांसमिशन से संबंधित विभाग, पोस्ट ऑफिस, राष्ट्रीय सूचना से संबंधित केंद्र अपवादस्वरूप खुले रहेंगे।
- विभिन्न राज्यों से संबंधित सभी कार्यालय बंद रहेंगे या जिन विभागों में संभव हो वहाँ कर्मचारी घर से कार्य कर सकते हैं। आपातकालीन सेवाओं से संबंधित विभाग जैसे- पुलिस विभाग, होमगार्ड कार्यालय, सिविल डिफेन्स, अग्निशमन विभाग, आपदा प्रबंधन विभाग, विद्युत विभाग, जल एवं सफाई से संबंधित विभाग, जेल विभाग खुले रहेंगे। इसके साथ ही ज़िला प्रशासन से संबंधित विभाग और कोषागार विभाग पूर्व की भांति कार्य करते रहेंगे।
- स्थानीय निकायों में साफ़-सफाई से संबंधित विभाग के अतिरिक्त सभी विभाग बंद रहेंगे या घर से कार्य करेंगे।
- स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित सभी विभाग पूर्व की भांति खुले रहेंगे। सभी मेडिकल स्टोर, क्लीनिक, टेस्टिंग लैब इत्यादि खुली रहेंगी।
- राज्य सरकारों को यह निर्देश दिया गया ही कि उपर्युक्त आपातकालीन सेवाओं से संबंधित कर्मचारियों को अनावश्यक न रोका जाए।
- सभी सरकारी व निज़ी वाणिज्यिक संगठन बंद रहेंगे। अपवादस्वरूप राशन केंद्र या दुकानें, जनरल स्टोर, सब्जियों व दुग्ध उत्पादों से संबंधित दुकानें, जानवरों के चारे से संबंधित दुकानें खुली रहेंगी।
- बैंक, ए.टी.एम, प्रिंट व इलेक्ट्रानिक मीडिया से संबंधित कार्यालय खुले रहेंगे।
- सभी प्रकार की परिवहन सेवाएँ बंद रहेंगी। अपवादस्वरूप, आवश्यक वस्तुओं की डिलीवरी करने वाली तथा पुलिस व आपातकालीन सेवाओं से संबंधित वाहन चलते रहेंगे।
- सभी शिक्षण संस्थान, प्रशिक्षण संस्थान, कोचिंग संस्थान, शोध संस्थान बंद रहेंगे।
- सभी धार्मिक स्थल पूर्णतय: बंद रहेंगे। किसी भी प्रकार के धार्मिक आयोजनों की अनुमति नहीं होगी।
- सभी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, खेल और मनोरंजन से संबंधित सरकारी व निज़ी आयोजन बंद रहेंगे।
- यदि किसी के घर में मृत्यु हो जाती है, तो किसी स्थिति में 20 से अधिक लोग एकत्र नहीं हो सकते हैं।
- वे सभी लोग जो 15 फरवरी के बाद किसी देश की यात्रा कर भारत आए हैं, उन्हें होम आईसोलेशन या क्वारंटाइन रहना होगा।

लॉकडाउन की आवश्यकता क्यों पड़ी ?

- स्वास्थ्य विशेषज्ञों के अनुसार, कोरोना वायरस का प्रसार मानव से मानव में हो रहा है। प्रसार की इस श्रृंखला को तोड़ने के लिये मानवीय गतिविधियों को रोकना अति आवश्यक है। परिणामस्वरूप आंशिक लॉकडाउन का विकल्प अपनाया गया। परंतु आंशिक लॉकडाउन के बावज़ूद बड़ी संख्या में लोग घर से बहार निकल रहे थे, जिससे श्रृंखला को तोड़ने का उद्देश्य प्रभावित हो रहा था।
- वायरस की विभीषिका को देखते हुए मानवीय गतिविधियों पर पूर्णता प्रतिबंध लगाने के लिये पूर्ण लॉकडाउन का विकल्प अपनाना पड़ा।

नोट :

लॉकडाउन का आपूर्ति श्रृंखला पर प्रभाव

- लॉकडाउन के दौरान कुछ निहित स्वार्थी तत्वों ने आपूर्ति श्रृंखला को प्रभावित करते हुए आवश्यक वस्तुओं की ज़माखोरी की ताकि उन वस्तुओं की कीमत में वृद्धि हो सके।
- ऐसा ही स्वास्थय संबंधी सामग्री (यथा- मास्क, सैनेटाइज़र) की ज़माखोरी कर उसे ऊँची कीमत पर बेंचा गया।
- लॉकडाउन के परिणामस्वरूप लोगों ने आवश्यकता से अधिक खाद्य सामाग्री की खरीदारी की जिससे अन्य लोगों के समक्ष खाद्य पदार्थों का संकट उत्पन्न हुआ।

आपूर्ति श्रृंखला को बनाए रखने में सरकार के प्रयास

- लॉकडाउन के दौरान यदि कोई व्यापारी या व्यवसायी ज़माखोरी करने का प्रयास करता है तो उस पर आवश्यक वस्तु अधिनियम,1955 के तहत कठोर कार्यवाही का प्रावधान किया गया है।
- उत्तर प्रदेश सरकार ने गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को 2 माह का राशन उपलब्ध करने का आदेश दिया है, साथ ही मज़दूर वर्ग को प्रतिमाह 1000 रूपए की आर्थिक सहायता देने का निर्देश दिया है।
- उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आवश्यक वस्तुओं को घर तक पहुँचाने के लिये पुलिस विभाग की PRV-112 वाहनों की तैनाती की है।
- दिल्ली सरकार द्वारा गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को अग्रिम 6 माह का राशन उपलब्ध करने का आदेश दिया है, साथ ही मजदूर वर्ग को प्रतिमाह 5000 रूपए की आर्थिक सहायता देने का निर्देश दिया है।
- इसके अतिरिक्त अन्य राज्य भी आपूर्ति श्रृंखला को बहाल करने की दिशा में कदम उठा रहे हैं।

लॉकडाउन के उल्लंघन में दंड का प्रावधान

- लॉकडाउन में दंड का प्रावधान होना ज़रूरी नहीं है। एक तरह से लॉकडाउन को, बिना सज़ा के प्रावधान वाला कर्फ़्यू कहा जा सकता है।
- अगर लोग इसमें बाहर निकलते हैं तो पुलिस सिर्फ़ उन्हें समझाकर वापस भेज सकती है। उन्हें जेल या जुर्माना नहीं हो सकता।
- हालाँकि, सरकार लॉकडाउन में भी सख़्ती कर सकती है। जैसे- उत्तर प्रदेश सरकार के अनुसार, लॉकडाउन के दौरान कोई बाहर आता है तो उस पर छह महीने की सज़ा या जुर्माना लगाया जा सकता है।

लॉकडाउन और कर्फ्यू में अंतर

- लॉकडाउन एक प्रशासनिक आदेश होता है। लॉकडाउन को एपिडमिक डिज़ीज़ एक्ट, 1897 के तहत लागू किया जाता है। ये अधिनियम पूरे भारत पर लागू होता है। तो वहीँ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के तहत कर्फ़्यू लगाया जाता है। इस धारा को लागू करने के लिए ज़िला मजिस्ट्रेट एक विज्ञप्ति ज़ारी करता है। जिस स्थान पर यह धारा लगाई जाती है, वहाँ चार या उससे ज़्यादा लोग एकत्र नहीं हो सकते हैं।
- कानूनी पहलुओं पर जाएँ तो कर्फ़्यू एक स्थापित प्रक्रिया रही है और प्रशासन के पास इसे लागू करने का अनुभव भी रहा है। लेकिन, लॉकडाउन एक नया प्रयोग है इसलिये व्यावहारिकता में इसे लागू करते समय कुछ नई समस्याएँ सामने आ सकती हैं।
- सामान्यत: लॉकडाउन में किसी भी प्रकार के दंड की व्यवस्था नहीं है, परंतु यदि कोई कर्फ्यू के दौरान धारा-144 का उल्लंघन करता है तो धारा-188 के तहत उसे चार महीने की क़ैद या जुर्माना या दोनों की सज़ा हो सकती है।
- लॉकडाउन का प्रयोग संभवत: देश में पहली बार हुआ है जबकि आवश्यकतानुसार कर्फ्यू का प्रयोग समय-समय पर होता रहा है।
- लॉकडाउन का प्रयोग स्वास्थ्य आपातकाल के दौरान किया जाता है जबकि कर्फ्यू का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब प्रशासन को कंहीं कानून-व्यवस्था के बिगड़ने की आशंका होती है।

निष्कर्ष

नि:संदेह यह संकट का समय है। इस संकटकालीन घड़ी में लोगों से धैर्य रखने व अपनी गतिविधियों को सीमित रखने की अपेक्षा की जाती है। लोगों से यह भी अपेक्षा है कि वह अनावश्यक रूप से खाद्य सामग्री का संचय न करें। सरकार के दिशा-निर्देशों का पालन करते हुए इस संकट की घड़ी में सोशल डिस्टेंसिंग के सिद्धांत को बनाए रखने में अपना अमूल्य योगदान दें।

नोट :

आर्थिक घटनाक्रम

बैंकिंग संकट: कारण और समाधान

संदर्भ

किसी भी देश के आर्थिक विकास का मुख्य आधार उस देश का बुनियादी ढाँचा होता है। यदि बुनियादी ढाँचा ही कमज़ोर हो तो कितना भी प्रयास किया जाए व्यवस्था को मज़बूत नहीं बनाया जा सकता है। यही कारण है कि किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में विकास एवं उन्नति हेतु किये जाने वाले प्रयासों को बल प्रदान करने के लिये नीति निर्माताओं द्वारा एक ऐसे मार्ग का अनुसरण किया जाता है जिसके माध्यम से सरकार आम आदमी को अर्थव्यवस्था के औपचारिक माध्यम में शामिल कर सके।

यह औपचारिक माध्यम है 'बैंक'। बैंक किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ होते हैं। देश में वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में बैंक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

परंतु उस समय क्या स्थिति होगी जब बैंकिंग तंत्र ही संकट के दौर से गुजरने लगे। वर्तमान में ऐसा ही देखने को मिल रहा है। देश में निज़ी क्षेत्र का चौथा सबसे बड़ा बैंक 'यस बैंक (YES BANK)' संकट के इसी दौर से गुज़र रहा है। बैंक ने प्रति खाताधारक 50000 रुपए प्रतिमाह निकासी की सीमा आरोपित कर दी है। ऐसे में खाताधारकों के सामने मुद्रा का संकट गहरा गया है। इस आलेख में बैंकों की खस्ता हालत के कारणों, उसके प्रभाव तथा सरकार व भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा किये जा रहे प्रयासों की समीक्षा की जाएगी।

पृष्ठभूमि

- वर्ष 2004 में राना कपूर व अशोक कपूर ने मिलकर यस बैंक की स्थापना की। वर्ष 2005 में यह बैंक शेयर बाज़ार में सूचीबद्ध हुआ।
- बैंक का प्राथमिक उद्देश्य कॉरपोरेट क्षेत्र को लोन उपलब्ध कराना था, बाद में सामान्य खाताधारकों के लिये भी बैंकिंग गतिविधियाँ संचालित की गई।
- वर्ष 2018 के मध्य में भारतीय रिज़र्व बैंक ने अपनी जाँच रिपोर्ट में पाया कि यस बैंक ने निर्धारित विनियमन दिशा-निर्देशों तथा गोपनीयता के सिद्धांत का उल्लंघन किया है।
- परिणामस्वरूप यस बैंक के मुख्य कार्यकारी अधिकारी को पद से इस्तीफा देना पड़ा और उसके बाद यस बैंक के शेयरों में 81% तक की तीव्र गिरावट दर्ज़ की गई।
- हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक ने यस बैंक की बैंकिंग गतिविधियों पर प्रतिबंध (MORATORIUM) लगाते हुए कार्य संचालन प्रक्रिया को अपने हाथों में ले लिया है।
- यस बैंक के अतिरिक्त कुछ समय पूर्व पीएमसी बैंक, ग्लोबल ट्रस्ट बैंक, वेस्टर्न बैंक इत्यादि पर RBI द्वारा प्रतिबंध लगाया गया था।

बैंकिंग संकट का कारण

- पिछले कुछ वर्षों में बैंकों द्वारा दिये जा रहे लोन गैर निष्पादित परिसंपत्तियों (Non-performing assets-NPAs) में बदल गए हैं। यस बैंक द्वारा भी रिलायंस ग्रुप, IL&FS, DHFL, जेट एयरवेज़, एस्सार शिपिंग, कैफे कॉफी डे जैसी कंपनियों को लोन दिया गया, जो बाद में NPA में बदल गया।
- गैर निष्पादित परिसंपत्तियों के मामले में सरकारी बैंकों की स्थिति निज़ी बैंकों से ज़्यादा खराब है। वर्ष 2018 में वाणिज्यिक बैंकों में कुल NPA 10.3 ट्रिलियन रुपए था, जो बैंकों द्वारा दिये गए कुल ऋणों और अग्रिमों का 11.2% था।
- इस NPA में सरकारी बैंकों का हिस्सा 8.9 ट्रिलियन रुपए था, जो बैंकों के कुल NPA का 86% था।
- सरकारी बैंकों द्वारा दिये गए अग्रिमों तथा ऋणों में सकल NPA 14.6% था अर्थात दिये गए हर 100 रुपए में से 14.6 रुपए NPA में बदल गए।

नोट :

गैर-निष्पादित परिसंपत्तियाँ

- सामान्य रूप से वह संपत्ति जिस पर ब्याज/मूलधन 90 दिनों तक बकाया हो, उसे गैर-निष्पादनकारी संपत्ति कहा जाता है। समयावधि के आधार पर इसे तीन वर्गों में बाँटा गया है-
  - सब-स्टैंडर्ड एसेट्स: 12 माह या इससे कम अवधि तक NPA के रूप में बने रहने वाली संपत्ति।
  - डाउटफुल एसेट्स: अगर कोई संपत्ति 12 माह तक सब-स्टैंडर्ड श्रेणी में बनी रहे।
  - लॉस एसेट्स: यह न वसूल की जा सकने वाली और अत्यंत कम मूल्य वाली संपत्ति होती है। बैंक द्वारा इसके परिसंपत्ति के रूप में बने रहने की पुष्टि नहीं की जाती है।
- 2007-08 में कुल NPA केवल 566 बिलियन रुपए (आधा ट्रिलियन से कुछ अधिक) था जो कुल अग्रिमों का केवल 2.26% था, लेकिन 2008 के बाद NPA में हुई वृद्धि चौंका देने वाली है।
- इसके लिये आंशिक रूप से वर्ष 2004-05 से 2008-09 के क्रेडिट बूम को ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है, जब विशेषकर देश के सरकारी बैंकों ने मुक्तहस्त से बिना कोई अधिक ना-नुकुर किये बड़ी मात्रा में लोगों को भारी भरकम कर्ज़ दिये।
- इस अवधि में वाणिज्यिक ऋण की मात्रा दोगुनी हो गई। यह वह समय था जब विश्व अर्थव्यवस्था के साथ-साथ भारतीय अर्थव्यवस्था भी तेज़ी से आगे बढ़ रही थी। आने वाले विकास के अवसरों का लाभ उठाने के लिये भारतीय फर्मों ने बैंकों से भारी मात्रा में कर्ज़ लिया।
- इनमें से अधिकांश निवेश बुनियादी ढाँचे तथा टेलीकॉम, बिजली, सड़क, विमानन, इस्पात जैसे क्षेत्रों में हुआ।
- इस दौर में उद्यमियों और व्यवसायियों में उत्साह था क्योंकि भारत ने 9% आर्थिक वृद्धि के दौर में प्रवेश कर लिया लेकिन जल्दी ही स्थिति प्रतिकूल हो गई।
- भूमि अधिग्रहण और पर्यावरणीय मंज़ूरी प्राप्त करने में निरंतर समस्याएँ आ रही थीं, जिसकी वज़ह से कई परियोजनाएँ ठप हो गईं और जो परियोजनाएँ काम कर रही थीं उनकी लागत कई गुना बढ़ गई।
- वित्तीय वर्ष 2007-08 में वैश्विक वित्तीय संकट की शुरुआत हुई और 2011-12 के बाद अर्थव्यवस्था में मंदी आ गई, जिसकी वज़ह से राजस्व की प्राप्ति अपेक्षा से कम हुई।
- वित्तीय संकट की प्रतिक्रिया में देश में नीतिगत दरों को सख्त किया गया, जिसकी वज़ह से वित्तपोषण की लागत में वृद्धि हुई।

प्रभाव

- NPA के चलते बैंकों को मिलने वाला लाभ कम हो जाता है, जिससे सरकार के पास राजस्व कम पहुँचता है, ऐसे में सरकार की निवेश करने की क्षमता में गिरावट आती है।
- निवेश कम होने से अर्थव्यवस्था की विकास दर कम हो जाती है, साथ ही बेरोज़गारी की समस्या में बढ़ोतरी होती है।
- बैंकों में NPA की वृद्धि से नए लोगों को ऋण मिलने में कठिनाई होती है, जिससे अर्थव्यवस्था का आकर सिकुड़ता है।
- जमाकर्त्ताओं का बैंक पर विश्वास कमज़ोर हो जाता है और वे बैंक में पैसा जमा करने से कतराते हैं।
- NPA के रूप में जब बैंक का लोन फँस जाता है तो उसकी प्रोविजनिंग के लिये उसे मुनाफ़े से एक निश्चित राशि अलग रखनी होती है, मुनाफ़ा कम होने का असर बैंक के विस्तार और ग्राहक सेवाओं पर पड़ता है।

समाधान

- सर्वप्रथम, शीर्ष अधिकारियों की नियुक्ति और चयन व्यवस्था में बदलाव किये जाने की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत कार्यकारी निदेशकों, बोर्ड के सदस्यों से लेकर अध्यक्ष तक सबके संदर्भ में बदलाव किये जाने की आवश्यकता है।
- शीर्ष प्रबंधन की गुणवत्ता बैंकिंग क्षेत्र की मुख्य समस्याओं में से एक है। इसका सबसे अहम् कारण यह है कि चयन प्रक्रिया में राजनीतिक हस्तक्षेप बहुत अधिक होता है, जिसके चलते एक निष्पक्ष चुनाव का विकल्प नहीं रह जाता है।
- ऐसे में होता यह है कि राजनीतिक दबाव की स्थिति में ऐसे अधिकारी बिना किसी उचित क्रेडिट मूल्यांकन के ही अग्रिम ऋण को मंज़ूरी दे देते हैं। ज़ाहिर सी बात है ऐसे बहुत से ऋण आगे चलकर NPA बन जाते हैं। हाल की बहुत सी घटनाओं में यह बात सामने आई है। व्यावहारिक रूप से बैंकों में कोई जवाबदेही प्रणाली मौजूद नहीं है, जो NPA की समस्या को बढ़ावा देने में भूमिका निभाती है।

नोट :

- स्पष्ट रूप से भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा सतर्कता विभाग को सुदृढ़ किये जाने की दिशा में कार्य किया जाना चाहिये, ताकि प्रबंधन के स्तर पर होने वाली चूक को समय रहते सुधारा जा सके और किसी बड़ी परेशानी से बचा जा सके।
- वर्ष 1993 में समयबद्ध तरीके से ऋण की वापसी सुनिश्चित करने के लिये ऋण वसूली अधिकरण (Debt Recovery Tribunals) की स्थापना की गई।
- वर्ष 2000 में डिफाल्टर और विलफुल डिफाल्टर की पहचान सुनिश्चित करने के लिये क्रेडिट इन्फॉर्मेशन ब्यूरो (Credit Information Bureau) का गठन किया गया।
- 5/25 योजना के तहत ऋण परिशोधन की अवधि को 25 वर्षों तक बढ़ा दिया जाता है एवं प्रत्येक 5 वर्षों की अवधि के पश्चात् ब्याज दरों को पुन: परिवर्तित करने का प्रावधान किया जाता है।
- एस.डी.आर. (Strategic Debt Restructuring) के अंतर्गत बैंक NPA से संबंधित कंपनियों को दिये गए ऋण को इक्विटी में बदलकर उसके प्रबंधन पर नियंत्रण कर सकते हैं, साथ ही बैंक 18 महीनों के अंदर इक्विटी को बेचकर अपने पैसे वापस ले सकते हैं।
- सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिये सरकार ने 2015 में इंद्रधनुष 2.0 योजना शुरू की थी। यह योजना सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पुनर्पूंजीकरण हेतु एक समग्र कार्यक्रम है, जिससे बैंकों को बासेल-III नियमों के तहत अपनी पूंजीगत स्थिति बनाए रखने में मदद मिलती है।
- जब रिज़र्व बैंक को लगता है कि किसी बैंक के पास जोखिम का सामना करने के लिये पर्याप्त पूंजी नहीं है, दिये गए उधार से न आय हो रही है और न ही मुनाफा हो रहा है, तो वह उस बैंक को Prompt Corrective Action फ्रेमवर्क में डाल देता है, ताकि उसकी वित्तीय हालत सुधारने के लिये तत्काल कुछ किया जा सके।
- भारतीय दिवाला और शोधन अक्षमता कोड यानी दिवालिया कानून के अनुसार, किसी ऋणी के दिवालिया होने पर एक निश्चित प्रक्रिया पूरी करने के बाद उसकी परिसंपत्तियों को अधिकार में लिया जा सकता है।

निष्कर्ष- भारत की बैंकिंग प्रणाली ऐसी चुनौती भरी पृष्ठभूमि में अपेक्षाकृत लंबे समय से कार्य कर रही है जिसके कारण सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की आस्ति गुणवत्ता, पूंजी पर्याप्तता तथा लाभ पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इसके मद्देनज़र सरकार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में वैश्विक जोखिम मानदंडों के अनुरूप उनकी पूंजी ज़रूरतों को पूरा करने और क्रेडिट ग्रोथ को बढ़ावा देने के लिये पूंजी लगा रही है। लेकिन एनपीए का स्तर 8 लाख करोड़ रुपए से अधिक हो जाने के कारण चिंता होना स्वाभाविक है, क्योंकि इतनी बड़ी राशि किसी काम की नहीं है। यदि इस राशि की वसूली हो जाती है तो सरकारी बैंकों की लाभप्रदता में इज़ाफा, लाखों लोगों को रोज़गार, नीतिगत दर में कटौती का लाभ कारोबारियों तक पहुँचना, आधारभूत संरचना का निर्माण, कृषि की बेहतरी, अर्थव्यवस्था को मज़बूती, विकास को गति देना आदि संभव हो सकेगा।

संकट का दौर और आर्थिक सहायता

संदर्भ

वैश्विक स्तर पर कोरोना वायरस दिन-प्रति-दिन एक गंभीर चुनौती के रूप में उभर रहा है। नवीनतम आँकड़ों के अनुसार, अब तक विश्व के लगभग 190 देश इस खतरनाक वायरस की चपेट में आ चुके हैं और तकरीबन 500,000 से अधिक लोग इस वायरस से संक्रमित हैं। कोरोना वायरस की गंभीरता का अंदाज़ा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि इसके कारण अब तक वैश्विक स्तर पर तकरीबन 25,000 से अधिक लोगों की मृत्यु हो चुकी है। वैश्विक समाज के समक्ष मौजूद इस महामारी के कारण विश्व की तमाम अर्थव्यवस्थाओं को न केवल मानव पूंजी के नुकसान का सामना करना पड़ रहा है, बल्कि आर्थिक मोर्चे पर भी वे धीरे-धीरे संकट की और बढ़ रही हैं। भारत में भी स्थिति गंभीर रूप धारण कर रही है, कोरोना वायरस के कारण अब तक देश में 20 लोगों की मृत्यु हो चुकी है और 900 लोग इस वायरस से संक्रमित हैं। दुनिया भर में इस वायरस के प्रसार को रोकने के लिये सरकारें भिन्न-भिन्न उपाय अपना रहे हैं, भारत में भी इस वायरस के प्रसार को रोकने के लिये केंद्र सरकार ने 21 दिनों के देशव्यापी लॉकडाउन की घोषणा की है, जो कि इस दिशा में एक सराहनीय कदम के रूप में देखा जा रहा है। किंतु सरकार के इस निर्णय से भारत के एक बड़े वर्ग के समक्ष आर्थिक तंगी की स्थिति उत्पन्न हो गई है और उन्हें दैनिक आधार पर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

इस स्थिति के मद्देनज़र हाल ही में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने दैनिक आधार पर चुनौती का सामना कर रहे लोगों और अर्थव्यवस्था को राहत प्रदान करने के उद्देश्य से आर्थिक उपायों की घोषणा की है, जिसमें कोरोना वायरस के प्रति संवेदनशील तकरीबन सभी वर्गों को शामिल किया गया है।

नोट :

इस आलेख में वित्त मंत्री द्वारा की गई विभिन्न घोषणाओं का विश्लेषण कर यह जानने का प्रयास किया गया है कि सरकार द्वारा घोषित उपायों का अर्थव्यवस्था और आम जनमानस पर किस प्रकार का प्रभाव होगा।

देशव्यापी लॉकडाउन का प्रभाव

- लॉकडाउन एक प्रशासनिक आदेश होता है। लॉकडाउन को एपिडमिक डीज़ीज एक्ट, 1897 के तहत लागू किया जाता है। ये अधिनियम पूरे भारत पर लागू होता है।
- इसे किसी आपदा के समय शासकीय रूप से लागू किया जाता है। इसके तहत लोगों से घर में रहने का आह्वान और अनुरोध किया जाता है। इसमें ज़रूरी सेवाओं के अलावा सारी सेवाएँ बंद कर दी जाती हैं। कार्यालय, दुकानें, फैक्टरियाँ और परिवहन सुविधा सभी बंद कर दी जाती है। जहाँ संभव हो वहाँ कर्मचारियों को घर से काम करने के लिये कहा जाता है। हालाँकि लॉकडाउन के दौरान आवश्यक सेवाएँ निर्बाध रूप से चलती रहती हैं।
- स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने भारत में देशव्यापी लॉकडाउन की घोषणा को अनिवार्य कदम बताया है। हालाँकि कई लोगों ने अर्थव्यवस्था की मौज़ूदा स्थिति और भारत के आर्थिक रूप से संवेदनशील वर्ग के प्रति चिंता ज़ाहिर की है।
- भारत का जनसंख्या घनत्व और देश में लोगों के रहन-सहन की मौज़ूदा सामाजिक स्थिति सोशल डिस्टेंसिंग (Social Distancing) की अवधारणा में एक बड़ी बाधा उत्पन्न करती है।
- एक अनुमान के अनुसार, 21 दिवसीय लॉकडाउन के कारण भारत के कुल उत्पादन में 37 प्रतिशत की कमी आएगी, जो कि देश की कुल GDP में 4 प्रतिशत की कमी कर सकता है।
- इसके अलावा, इस अवधि के दौरान होने वाला आय का नुकसान आगामी कई तिमाहियों में आर्थिक गति को प्रभावित कर सकता है।
- वैश्विक विकास दर में हो रही गिरावट भी भारत की अर्थव्यवस्था को प्रभावित करेगी।

सरकार द्वारा घोषित उपाय

- स्वास्थ्य कर्मियों के लिये बीमा योजना
  - सरकार द्वारा की गई घोषणा के अनुसार, सरकारी अस्पतालों और स्वास्थ्य केंद्रों में कोरोनावायरस (COVID-19) से लड़ने वाले स्वास्थ्य कर्मियों के लिये बीमा योजना शुरू की जाएगी।
  - इस बीमा योजना के तहत सफाई कर्मचारी, वार्ड-ब्वॉय, नर्स, आशा कार्यकर्त्ता, सहायक स्वास्थ्य कर्मी, टेक्निशियन, डॉक्टर और विशेषज्ञ एवं अन्य स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता आदि सभी को शामिल किया जाएगा।
  - COVID-19 मरीज़ों का इलाज करते समय यदि किसी भी स्वास्थ्य कर्मी के साथ दुर्घटना होती है तो उसे योजना के तहत 50 लाख रुपए का मुआवजा दिया जाएगा।
  - सभी सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों, वेलनेस सेंटरों और केंद्र के साथ-साथ राज्यों के अस्पतालों को भी इस योजना के तहत कवर किया जाएगा। उल्लेखनीय है कि इस योजना के तहत महामारी से लड़ रहे लगभग 22 लाख स्वास्थ्य कर्मियों को लाभ प्राप्त होगा।
- पीएम गरीब कल्याण अन्न योजना
  - इस योजना का मुख्य उद्देश्य भारत के गरीब परिवारों के लिये खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना है। इसके तहत देश के लगभग 80 करोड़ व्यक्तियों (भारत की लगभग दो-तिहाई जनसंख्या) को शामिल किया जाएगा।
  - इनमें से प्रत्येक व्यक्ति को आगामी 3 महीनों के दौरान मौज़ूदा निर्धारित अनाज के मुकाबले दोगुना अन्न मुफ्त प्रदान किया जाएगा।
  - उपर्युक्त सभी व्यक्तियों को प्रोटीन की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये आगामी 3 महीनों के दौरान क्षेत्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार प्रत्येक परिवार को मुफ्त में 1 किलो दाल भी प्रदान की जाएगी।
- प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना
  - किसानों को लाभ: सरकार की घोषणा के अनुसार, वर्ष 2020-21 में देय 2,000 रुपए की पहली किस्त अप्रैल 2020 में ही 'पीएम किसान योजना' के तहत खाते में डाल दी जाएगी। इसके तहत 7 करोड़ किसानों को कवर किया जाएगा।
  - गरीब महिलाओं को लाभ: कुल 40 करोड़ रुपए प्रधानमंत्री जन धन योजना की महिला खाताधारकों को आगामी तीन महीनों के दौरान प्रति माह 500 रुपए की अनुग्रह राशि दी जाएगी।

नोट :

- गैस सिलेंडर: पीएम गरीब कल्याण योजना के तहत आगामी 3 महीनों में 8 करोड़ गरीब परिवारों को गैस सिलेंडर मुफ्त में दिये जाएंगे।
- वरिष्ठ नागरिकों, विधवाओं और दिव्यांगजनों के लिये: सरकार द्वारा की गई घोषणा के अनुसार, सरकार अगले 3 महीनों के दौरान भारत के लगभग 3 करोड़ वृद्ध, विधवाओं और दिव्यांग श्रेणी के लोगों को 1,000 रुपए प्रदान करेगी।
- मनरेगा: 'पीएम गरीब कल्याण योजना' के तहत 1 अप्रैल, 2020 से मनरेगा मज़दूरी में 20 रुपए की बढ़ोतरी की जाएगी। मनरेगा के तहत मज़दूरी बढ़ने से प्रत्येक श्रमिक को प्रतिवर्ष 2,000 रुपए का अतिरिक्त लाभ होगा। इसके तहत लगभग 62 करोड़ परिवार लाभान्वित होंगे।
- स्वयं सहायता समूह (SHG): राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के तहत महिला स्वयं सहायता समूहों के लिये जमानत (Collateral) मुक्त ऋण देने की सीमा 10 लाख रुपए से बढ़ाकर 20 लाख रुपए की जाएगी।

- अन्य संबंधित घोषणाएँ
  - कर्मचारी भविष्य निधि नियमनों में संशोधन कर 'महामारी' को भी उन कारणों में शामिल किया जाएगा जिसे ध्यान में रखते हुए कर्मचारियों को अपने खातों से कुल राशि के 75 प्रतिशत का गैर-वापसी योग्य अग्रिम या तीन माह का पारिश्रमिक, इनमें से जो भी कम हो, प्राप्त करने की अनुमति दी जाएगी। EPF के तहत पंजीकृत चार करोड़ कामगारों के परिवार इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।
  - राज्य सरकारों को देश के भवन एवं अन्य निर्माण श्रमिकों की सहायता हेतु 'भवन एवं अन्य निर्माण कोष' का उपयोग करने के लिये निर्देश दिये जाएंगे श्रमिकों को आर्थिक मुश्किलों से बचाने के लिये आवश्यक सहायता और सहयोग प्रदान किया जा सके। 'भवन एवं अन्य निर्माण कोष' केंद्र सरकार के अधिनियम के तहत बनाया जाता है। ध्यातव्य है कि इस कोष में लगभग 3.5 करोड़ पंजीकृत श्रमिक हैं।

सरकार द्वारा की गई घोषणाओं का प्रभाव

- कोरोना वायरस (COVID-19) के प्रसार को रोकने के लिये लागू किये गए 21 दिवसीय लॉकडाउन द्वारा देश के संवेदनशील वर्ग के लिये उत्पन्न संकट को कम करने की दिशा में सरकार द्वारा घोषित उक्त उपायों को एक बेहतर कदम के रूप में देखा जा रहा है।
- विशेषज्ञों ने सरकार द्वारा घोषित इन उपायों को एक सहायता राशि से अधिक आम जन मानस को लाभ पहुँचाने के एक अभिनव तरीके के रूप में देखा है।
- उन उपायों में किसानों, महिलाओं और जन धन खाता धारकों से लेकर संगठित क्षेत्र के मज़दूरों तक देश के तकरीबन सभी वर्गों को शामिल किया गया है।
- छोटे उद्यमों के लिये प्रोविडेंट फंड (Provident Fund) में नियोक्ता और कर्मचारी दोनों के योगदान का भुगतान करने का प्रस्ताव स्वागत योग्य है और यह खासकर उन व्यवसायों को राहत प्रदान करेगा जो लॉकडाउन के कारण अपने उत्पादन बंद करने को मज़बूर हो गए हैं।
- आम लोगों को राहत प्रदान करने के सरकार के ये प्रयास प्रथम दृष्टया यथासंभव घाटे को नियंत्रित करने के उपाय के रूप में प्रतीत होते हैं, जो कि अर्थव्यवस्था की दृष्टि से उपयुक्त हैं।
  - उदाहरण के लिये 'पीएम किसान योजना' के तहत होने वाला हस्तांतरण पहले से ही बजट में शामिल है और मनरेगा मजदूरी में हो रही बढ़ोतरी को भी बजट में समायोजित किया जा सकता है।
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) के माध्यम से आपूर्ति किये जाने वाले खाद्यान्नों की मात्रा में बढ़ोतरी की घोषणा भी एक बेहतरीन उपाय है।
  - अनुमान के अनुसार, पाँच वयस्क सदस्यों वाले एक सामान्य गरीब परिवार में प्रत्येक महीने 50-55 किलोग्राम अनाज और 4-5 किलोग्राम दाल का सेवन होता है।

संबंधित चिंताएँ

- सरकार द्वारा 1.70 लाख करोड़ रुपए के राहत पैकेज की घोषणा की गई है, जो कि देश की कुल GDP के 1 प्रतिशत से भी कम है। इतनी कम राशि के साथ देश की संपूर्ण अर्थव्यवस्था को संभालना अपेक्षाकृत काफी मुश्किल है।
- भारत में योजनाओं के कार्यान्वयन के इतिहास को देखते हुए सरकार द्वारा घोषित इन योजनाओं के कार्यान्वयन की चिंता काफी स्पष्ट है। मौजूदा स्थिति को देखते हुए यदि घोषित उपायों के उचित कार्यान्वयन में ज़रा सी भी देरी होती है, तो यह आम लोगों के लिये एक गंभीर समस्या उत्पन्न कर सकता है।

नोट :

- आँकड़ों के अनुसार, देश के अंशत: वेतनभोगी लोग, कर्मचारी भविष्य निधि नियमनों के तहत पंजीकृत नहीं है, और देश के अधिकांश श्रमिक 'भवन एवं अन्य निर्माण कोष' के तहत भी पंजीकृत भी नहीं, जिसके कारण इन लोगों को सरकार द्वारा घोषित उक्त घोषणाओं का लाभ नहीं मिल पाएगा।
- दिल्ली, मुंबई और चंडीगढ़ जैसे शहरों में काम की तलाश में उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों से आने वाले श्रमिक कोरोना वायरस और सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन के डर से अपने-अपने राज्य की ओर वापस जा रहे हैं, जिनके लिये सरकार द्वारा कोई विशेष घोषणा नहीं की गई है। हालाँकि कई कुछ एक राज्यों ने अपने श्रमिकों के लिये कुछ विशेष प्रावधान किये हैं।
- सरकार द्वारा घोषित उपायों में मध्यम वर्ग के लिये कोई विशेष प्रावधान नहीं किये गए हैं।

सुझाव

- कर्मचारी भविष्य निधि नियमनों में संशोधन का लाभ उन्ही श्रमिकों को मिलेगा, जिनकी आय 15000 से कम है, किंतु कुछ विश्लेषकों के अनुसार, इस राशि को 25000 तक बढ़ाया जाना चाहिये, क्योंकि सरकार के खर्चे पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जबकि और अधिक वेतनभोगी लोगों को कवर किया जा सकेगा।
- इसी प्रकार महिला जन धन खाताधारकों को प्रदान की जा रही राशि भी बढाई जा सकती है। घोषित उपायों के अनुसार, महिला जन धन खाताधारकों के खाते में आगामी तीन महीनों के लिये प्रतिमाह 500 रुपए डालेगी।
- वित्त मंत्री द्वारा घोषित उपायों से ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार अपने निर्धारित बजट के अंदर ही सभी उपाय करना चाहती है। किंतु कोरोना वायरस की मौजूदा स्थिति की समयसीमा निर्धारित नहीं है, इस प्रकार सरकार को कभी न कभी अपने राजकोषीय घाटे की सीमा को तोड़ना होगा।
- लॉकडाउन के कारण बड़े और छोटे निगम भी प्रभावित हुए हैं, आवश्यक है कि सरकार इन निगमों के लिये भी किसी विशेष प्रकार के पैकेज की घोषणा करे, ताकि ये भारतीय अर्थव्यवस्था को आने वाली आर्थिक मंदी से उबारने में योगदान दे सकें।
- सरकार को देश के माध्यम वर्ग के लिये भी कुछ प्रावधान करने चाहिये।

निष्कर्ष

भारत सहित विश्व के तमाम देश कोरोना महामारी के कारण स्वास्थ्य संकट का सामना कर रहे हैं और धीरे-धीरे आर्थिक संकट की ओर बढ़ रहे हैं। इस आर्थिक और स्वास्थ्य चुनौती को देखते हुए कई प्रकार के आर्थिक उपायों की घोषणा की है। उदाहरण के लिये इस महीने अमेरिका ने कोरोना वायरस (COVID-19) संचालित आर्थिक मंदी से निपटने के लिये 1 ट्रिलियन डॉलर का प्रस्ताव किया था, इसके अलावा जर्मनी ने कोरोना वायरस से प्रभावित हुई कंपनियों को राहत प्रदान करने के उद्देश्य से 610 बिलियन डॉलर के पैकेज की घोषणा की थी, इसी प्रकार कई अन्य देशों ने भी आर्थिक मोर्चे पर राहत प्रदान करने के लिये कई प्रकार के पैकेजों की घोषणा की है। भारत सरकार द्वारा घोषित उपाय दैनिक आधार पर चुनौतियों का सामना कर रह रहे मज़दूरों की दृष्टि से स्वागत योग्य हैं। हालाँकि कई विश्लेषकों का मत है कि सरकार द्वारा घोषित ये उपाय कोरोना वायरस संचालित आर्थिक मंदी से निपटने का केवल पहला कदम है और सरकार को दूसरे चरण के उपायों की घोषणा करने की आवश्यकता है, जिसमें निगमों और मध्यम वर्ग को भी शामिल किया जाए।

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

अमेरिका-तालिबान समझौता और भारत

संदर्भ

दो दशक से युद्ध और हिंसा से जूझ रहे अफगानिस्तान में शांति की उम्मीद जगी है। शांति समझौते से लोग खुश हैं और उन्हें देश में अमन लौटने की आशा है। हालाँकि लोगों में संदेह भी है कि देश में यह शांति लंबे समय तक कायम रहेगी भी या नहीं। वर्ष 2001 में 9/11 हमले के बाद अमेरिका ने तालिबान के विरुद्ध युद्ध में अपने सैनिक अफगानिस्तान भेजे थे। कई वर्षों तक चली इस लंबी लड़ाई में अब तक 3500 अमेरिकी सैनिकों की मौत हो चुकी है और अब अमेरिका अफगानिस्तान से अपने सैनिकों को वापस बुलाना चाहता है। इस वर्ष के प्रारंभ में शांति समझौते को लेकर सहमति बनने के बाद हाल ही में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने शांति समझौते को अंतिम रूप देने की अनुमति दे दी है।

इससे पूर्व बराक ओबामा के कार्यकाल में भी शांति स्थापना और सैनिक वापसी के तमाम प्रयास किये गए थे। यहाँ तक कि ओबामा ने तालिबान के प्रति अपनी नीतियों में भी बदलाव किया था, परंतु उस समय किये गए प्रयास सफल नहीं हो पाए थे। इस आलेख में तालिबान के जन्म, सोवियत संघ और अमेरिका की सेनाओं के साथ संघर्ष, अफगानिस्तान पर नियंत्रण और भारत की सुरक्षा चिंता के मुद्दे को समझने का प्रयास किया जाएगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- पाकिस्तानी गुप्तचर एजेंसी इंटर सर्विसेज़ इंटेलिजेंस (Inter Services Intelligence-ISI) ने मदरसों के अफगान छात्रों को भड़का कर वर्ष 1990 के दशक में सोवियत सेनाओं के विरुद्ध तालिबान को जन्म दिया। इसे सऊदी अरब समेत कई खाड़ी देशों से पैसा मिलता था।
- तालिबान एक इस्लामिक कट्टपंथी राजनीतिक आंदोलन है। अफगानिस्तान को पाषाणयुग में पहुँचाने के लिये तालिबान को जिम्मेदार माना जाता है।
- वर्ष 1994 के आसपास जब तालिबान पहली बार अफगानिस्तान के पटल पर उभरा तो उसने पाकिस्तान की सीमा से लगे पश्तूनों के इलाके में शांति-सुरक्षा बहाल करने का वादा किया। उसने सत्ता में आने पर शरिया कानून लागू करने की भी बात कही तथा भ्रष्टाचार पर भी नकेल कसने का वादा किया।
- सितंबर 1995 में दक्षिणी-पश्चिमी अफगानिस्तान से आगे बढ़ते हुए तालिबान ने ईरान की सीमा से लगे हेरात पर कब्ज़ा कर लिया। एक साल बाद लड़ाकों ने तत्कालीन राष्ट्रपति बुरहानुद्दीन रब्बानी को बेदखल कर काबुल पर कब्जा कर लिया। वर्ष 1998 तक अफगानिस्तान के 90 फीसदी हिस्से पर तालिबान का नियंत्रण स्थापित हो गया था।
- तालिबान ने कट्टरवादी इस्लामिक कानूनों को लागू किया। शुरुआत में अधिकांश तालिबानी लड़ाके पाकिस्तान के मदरसों में पढ़ने के बाद इसका हिस्सा बने। सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के अलावा पाकिस्तान इन तीन देशों में शामिल था जिसने तालिबान शासन को मान्यता दी थी।

अमेरिका का प्रवेश

- वर्ष 2001 में न्यूयॉर्क में आतंकी हमले के बाद तालिबान दुनिया की नज़रों में आया। इसी दौरान 7 अक्तूबर 2001 को अमेरिका ने अफगानिस्तान पर हमला कर दिया। अमेरिकी सेना ने तालिबान को सत्ता से बेदखल कर दिया।
- हालाँकि, इस हमले के बावजूद तालिबान नेता मुल्ला उमर और अलकायदा प्रमुख ओसामा बिन लादेन को पकड़ा नहीं जा सका।
- दिसंबर 2001 में संयुक्त राज्य अमेरिका के सहयोग से हामिद करज़ई को अफगानिस्तान का अंतरिम प्रशासनिक प्रमुख बनाया गया।
- वर्ष 2004 में अफगानिस्तान का संविधान अस्तित्व में आया। संविधान के प्रावधानों के अधीन रहते हुए अफगानिस्तान ने अक्तूबर 2004 में लोकतांत्रिक प्रक्रिया का पालन करते हुए अपने पहले राष्ट्रपति का निर्वाचन किया।

नोट :

- वर्ष 2005-2006 के दौरान तालिबान और अलकायदा द्वारा संयुक्त रूप से किये गए आतंकी हमलों से अफगानिस्तान में शांति बहाली की प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न हो गया।
- वर्ष 2009 में बराक ओबामा के राष्ट्रपति बनने के बाद अफगानिस्तान में शांति बहाली की प्रक्रिया को पुन: प्रारंभ करने के लिये अधिक संख्या में अमेरिकी सैनिकों की तैनाती की गई।
- मई 2011 में पाकिस्तान के एबटाबाद में 9/11 हमलों के मास्टरमाइंड ओसामा-बिन-लादेन को अमेरिकी सेनाओं द्वारा मार गिराया गया।
- जून 2011 में राष्ट्रपति ओबामा ने अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों की सीमित संख्या में वापसी का रोडमैप प्रस्तुत किया।
- जून 2013 में अफगानिस्तान सेना ने पूरी तरीके से सुरक्षा का उत्तरदायित्व ले लिया, अब अमेरिकी सेना केवल सहयोगी के रूप में कार्य कर रही थी।
- जनवरी 2017 में डोनाल्ड ट्रंप के अमेरिकी राष्ट्रपति बनने के बाद अफगान नीति के संदर्भ में प्रमुख फोकस अफगानिस्तान से अमेरिकी सेना की वापसी पर रहा, जिसे अब मूर्त रूप दिया जा रहा है।

समझौते के मुख्य बिंदु

- कतर के दोहा में अमेरिका के शांति प्रतिनिधि जलमय खालिज़ाद और तालिबान के प्रतिनिधि मुल्ला अब्दुल गनी बारादर के बीच शांति समझौते पर मुहर लग गई।
- इस समझौते के तहत अमेरिका अगले 14 महीने में अफगानिस्तान से अपने सभी सैन्य बलों को वापस बुलाएगा। इस समझौते के दौरान भारत समेत दुनियाभर के 30 देशों के प्रतिनिधि मौजूद रहे।
- समझौते के अनुसार, अफगानिस्तान में मौजूद अपने सैनिकों की संख्या में अमेरिका धीरे-धीरे कमी लाएगा। इसके तहत अग्रिम छह माह में करीब 8,600 सैनिकों को वापस अमेरिका भेजा जाएगा।
- अमेरिका अपनी ओर से अफगानिस्तान के सैन्य बलों को सैन्य साजो-सामान देने के साथ प्रशिक्षित भी करेगा, ताकि वह भविष्य में आंतरिक और बाहरी हमलों से खुद के बचाव में पूरी तरह से सक्षम हो सकें।
- तालिबान ने इस समझौते के तहत बदले में अमेरिका को भरोसा दिलाया है कि वह अलकायदा और दूसरे विदेशी आतंकवादी समूहों से अपने संबंध समाप्त कर देगा।
- तालिबान अफगानिस्तान की धरती को आतंकवादी गतिविधियों के लिये इस्तेमाल नहीं होने देने में अमेरिका की मदद करेगा।
- अमेरिका के रक्षा मंत्री मार्क एस्पर ने कहा कि अगर तालिबान सुरक्षा गारंटी से इनकार करता है और अफगानिस्तान की सरकार के साथ वार्ता की प्रतिबद्धता से पीछे हटता है तो अमेरिका उसके साथ ऐतिहासिक समझौते को खत्म कर देगा।

अमेरिका में बड़ा चुनावी मुद्दा

- वियतनाम के बाद अमेरिकी सैन्य इतिहास में यह दूसरा सबसे लंबा सशस्त्र संघर्ष रहा, जिसे अमेरिका द्वारा पूर्णता निरर्थक समझा जा रहा है।
- अमेरिका में वर्ष 2020 में होने वाले राष्ट्रपति चुनाव में यह बड़ा मुद्दा है। राष्ट्रपति ट्रंप ने पिछले चुनाव प्रचार में दो दशकों से अफगानिस्तान में तैनात अमेरिकी फौज की वापसी को बड़े मुद्दे के रूप में प्रचारित किया था।
- पहली बार राष्ट्रपति बनने के बाद ट्रंप अमेरिकी सैनिकों की वापसी का वादा अभी तक पूरा नहीं कर पाए थे। अब नए समझौते के बाद अमेरिकी सैनिकों की वापसी के मुद्दे से ट्रंप को राष्ट्रपति पद के चुनाव में फायदा हो सकता है।

तालिबान के रुख में बदलाव क्यों है?

- तालिबान अफगानिस्तान में इस्लामिक स्टेट जैसे आतंकवादी संगठन के उभार से जूझ रहा है।
- इस्लामिक स्टेट तालिबान और अमेरिका समर्थित अफगान सरकार दोनों के साथ सीधे संघर्ष में है।
- तालिबान अफगान लोगों को यह दिखाने के लिये उत्सुक है कि वह गंभीरता से उन पर शासन करना चाहता है।

पाकिस्तान के लिये स्वर्णिम मौका

- तालिबान के साथ अमेरिका की शांति वार्ता और समझौता पाकिस्तान के लिये लाभ का सौदा है। इसलिये इन दोनों ध्रुवों के बीच पाकिस्तानी सरकार और उसकी खुफिया एजेंसी ISI बिचौलिये का कार्य कर रही थी।

नोट :

- अफगानिस्तान से अमेरिकी फौजों के वापस जाते ही पाकिस्तान तालिबान की मदद से कश्मीर में आतंकी घटनाओं को अंजाम दे सकता है।
- तालिबान को अमेरिका के साथ बातचीत की राह पर पाकिस्तान ही लेकर आया, क्योंकि वह अपने पड़ोस से अमेरिकी सैन्य बलों की जल्द वापसी चाहता है। कतर की राजधानी दोहा में अमेरिका-तालिबान की वार्ता में शामिल होने के लिये ही पाकिस्तान ने कुछ महीने पहले तालिबान के उप संस्थापक मुल्ला बारादर को जेल से रिहा किया था।
- यदि अफगानिस्तान में तालिबान की जड़ें मज़बूत होती हैं तो वहाँ की सरकार को हटाने के लिये पाकिस्तान तालिबान को सैन्य साजो-सामान मुहैया करा सकता है क्योंकि अफगानिस्तान की वर्तमान सरकार के साथ पाकिस्तान के संबंध अच्छे नहीं है।

भारत की चिंताएँ

- भू राजनैतिक रूप से अहम अफगानिस्तान में तालिबान के प्रसार से वहाँ की नवनिर्वाचित सरकार को खतरा होगा और भारत की कई विकास परियोजनाएँ प्रभावित होंगी।
- इसके अतिरिक्त पश्चिम एशिया में अपनी पैठ बनाने में लगी भारत सरकार को बड़ा नुकसान होगा।
- इसके साथ ही भारत पहले से ही अफगानिस्तान में अरबों डॉलर की लागत से कई बड़ी परियोजनाएँ पूरी कर चुका है और इनमें से कुछ पर अभी भी काम चल रहा है।
- भारत 116 सामुदायिक विकास परियोजनाओं पर काम कर रहा है, जिन्हें अफगानिस्तान के 31 प्रांतों में क्रियान्वित किया जाएगा। इनमें शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, सिंचाई, पेयजल, नवीकरणीय ऊर्जा, खेल अवसंरचना और प्रशासनिक अवसंरचना के क्षेत्र शामिल हैं।
- भारत ने अब तक अफगानिस्तान को करीब तीन अरब डॉलर की मदद दी है, जिससे वहां संसद भवन, सड़कों और बाँध आदि का निर्माण हुआ है। अत: इन सभी परियोजनाओं पर गंभीर संकट के बादल मंडरा रहे हैं।
- ईरान के चाबहार पोर्ट के विकास में भारत ने भारी निवेश किया हुआ है, ताकि अफगानिस्तान, मध्य एशिया, रूस और यूरोप के देशों के साथ व्यापार और संबंधों को मज़बूती दी जा सके। ऐसे में यदि तालिबान सत्तासीन होता है तो भारत की यह परियोजना भी खतरे में पड़ सकती है क्योंकि इससे अफगानिस्तान के रास्ते अन्य देशों में भारत की पहुँच बाधित होगी।
- भारत की चिंता यह भी है कि अगर अमेरिका अपनी सेना को अफगानिस्तान से हटा लेता है पाकिस्तान अपने यहाँ उत्पन्न हो रहे आतंकवाद के लिये तालिबान और अफगानिस्तान को ज़िम्मेदार ठहरा सकता है।

अफगान सरकार को भी खतरा

- अमेरिका और तालिबान के बीच शांति वार्ता के सफल होने से अफगानिस्तान की मौजूदा सरकार के लिये भी बड़ा खतरा है। अमेरिका द्वारा अपने सैनिकों को वापस बुलाने से तालिबान को फिर से अपनी जड़ें मज़बूत करने से रोकने के लिये कोई बड़ी ताकत मौजूद नहीं होगी।
- अमेरिकी सैन्य बलों के वापस जाते ही तालिबान अफगान सरकार के खिलाफ युद्ध का ऐलान भी कर सकता है, जिससे देश में गृहयुद्ध का खतरा पैदा हो सकता है।
- तालिबान को पाकिस्तान से परोक्ष रूप से मिलने वाला सैन्य समर्थन अफगान सरकार के लिये चिंता का विषय रहा है।
- विदित है कि अफगानिस्तान सरकार अमेरिका-तालिबान के बीच हो रही शांति वार्ता के खिलाफ थी। राष्ट्रपति अशरफ गनी ने कहा भी था कि बेगुनाह लोगों की हत्या करने वाले समूह से शांति समझौता निरर्थक है।

आगे की राह

- तेज़ी से बदलते अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के दौर में भारत के लिये यह अनिवार्य हो जाता है कि अफगानिस्तान जैसे देशों के साथ अपने संबंधों को मज़बूत किया जाए।
- भारत को अपनी सुरक्षा ज़रूरतों की समीक्षा कर भारतीय उपमहाद्वीप की सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए एक निर्णायक भूमिका में आना होगा।
- अमेरिका द्वारा क्षेत्र में शांति की प्रक्रिया को बहाल रखने के लिये अमेरिकी सैन्य बलों को सीमित संख्या में तैनात रखना चाहिये।
- तालिबान के साथ बातचीत करने के लिये संवाद का प्रत्यक्ष तंत्र विकसित करना चाहिये।

नोट :

क्रूड ऑयल प्राइज़ वॉर

संदर्भ

कच्चे तेल के मूल्य में वर्ष 1991 में हुए खाड़ी युद्ध के बाद सबसे बड़ी गिरावट दिख रही है। हाल ही में सऊदी अरब ने रूस के साथ तेल के दामों को लेकर प्राइज़ वॉर छेड़ दिया है। दुनिया के प्रमुख तेल उत्पादक देशों के बीच उत्पादन में कटौती को लेकर सहमति न बन पाने के बाद सऊदी अरब ने अपनी तेल बिक्री की कीमतों में कटौती कर दी है, जिसके बाद कच्चे तेल की कीमत में लगभग 30 प्रतिशत की गिरावट हुई है। यह 17 जनवरी, 1991 को खाड़ी युद्ध प्रारंभ होने के बाद अब तक की सबसे बड़ी गिरावट है। इसके साथ ही खनिज तेल बाज़ार की दिग्गज कंपनी सऊदी अरामको ने तेल आपूर्ति बढ़ाने की घोषणा की है। इससे मांग की कमी से प्रभावित बाजार में आपूर्ति बढ़ने तथा सऊदी अरब और रूस के बीच बाज़ार में मूल्य गिराने की होड़ बढ़ने की आशंका है।

इस आलेख में पेट्रोलियम की निर्माण और शोधन प्रक्रिया, प्राइज़ वॉर के कारण, परिणाम तथा कोरोना वायरस के कारण वैश्विक तेल बाज़ार पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन किया जाएगा।

वर्तमान घटनाक्रम

- तेल उत्पादक और निर्यातक देशों के संगठन 'OPEC+' की पिछले दिनों उत्पादन कटौती पर चल रही वार्ता विफल हो गई।
- कच्चे तेल के घटते दाम को विक्रेता के हिसाब से उचित स्तर पर वापस लाने के लिये इन देशों ने उत्पादन में कटौती जारी रखने का प्रस्ताव रखा था, जिस पर सदस्य सहमत नहीं हुए।
- उसके बाद सऊदी अरब ने न केवल घरेलू कच्चे तेल के दाम एकदम घटाकर तीस वर्षों के निचले स्तर पर ला दिया, बल्कि यह फैसला भी किया कि वह अगले माह से उत्पादन बढ़ाकर इसे कम-से-कम एक करोड़ बैरल प्रतिदिन कर देगा।
- इस समय ब्रेंट क्रूड ऑयल के दाम 31.02 डॉलर प्रति बैरल पर आ गए हैं।

ओपेक (Organization of Petrolium Exporting Countries-OPEC)

- OPEC एक स्थायी, अंतर-सरकारी संगठन है, जिसका गठन 10-14 सितंबर, 1960 को आयोजित बगदाद सम्मेलन में ईरान, इराक, कुवैत, सऊदी अरब और वेनेज़ुएला ने किया था।
- इन पाँच संस्थापक सदस्यों के बाद इसमें कुछ अन्य सदस्यों को शामिल किया गया, ये देश हैं-
- क़तर (1961), इंडोनेशिया (1962), लीबिया (1962), संयुक्त अरब अमीरात (1967), अल्जीरिया (1969), नाइजीरिया (1971), इक्वाडोर (1973), अंगोला (2007), गैबन (1975), इक्वेटोरियल गिनी (2017) और कांगो (2018)
- इक्वाडोर ने दिसंबर 1992 में अपनी सदस्यता त्याग दी थी, लेकिन अक्तूबर 2007 में वह पुन: OPEC में शामिल हो गया।
- इंडोनेशिया ने जनवरी 2009 में अपनी सदस्यता त्याग दी। जनवरी 2016 में यह फिर से इसमें सक्रिय रूप से शामिल हुआ, लेकिन 30 नवंबर, 2016 को OPEC सम्मेलन की 171वीं बैठक में एक बार फिर इसने अपनी सदस्यता स्थगित करने का फैसला किया।
- गैबन ने जनवरी 1995 में अपनी सदस्यता त्याग दी थी। हालाँकि, जुलाई 2016 में वह फिर से संगठन में शामिल हो गया।
- कतर ने 1 जनवरी, 2019 में अपनी सदस्यता त्याग दी थी। अत: वर्तमान में इस संगठन में सदस्य देशों की संख्या 14 है।

पेट्रोलियम का निष्कर्षण व शोधन

- पेट्रोलियम धरातल के नीचे स्थित अवसादी परतों के बीच पाया जाने वाला संतृप्त हाइड्रोकार्बन का काले-भूरे रंग का तैलीय द्रव है, जिसका प्रयोग वर्तमान में ईंधन के रूप में किया जाता है। पेट्रोलियम को 'जीवाश्म ईंधन' भी कहते हैं, क्योंकि इसका निर्माण धरातल के नीचे उच्च ताप व दाब की परिस्थितियों में मृत जीव-जंतुओं व वनस्पतियों के जीवाश्मों के रासायनिक रूपान्तरण से होता है।
- विश्व में सबसे पहले पेट्रोलियम कुएँ की खुदाई संयुक्त राज्य अमेरिका के पेंसिलवेनिया राज्य में स्थित 'टाइटसविले' स्थान पर की गई थी। 'ड्रिलिंग' से प्राप्त होने वाले पेट्रोलियम को कच्चा तेल' (Crude Oil) कहा जाता है।
- कच्चे तेल को रिफाइनरियों में प्रसंस्कृत किया जाता है। पेट्रोलियम से ही पेट्रोल, मिट्टी के तेल, विभिन्न हाइड्रोकार्बन, ईंथर, प्रकृतिक गैस आदि को प्राप्त किया जाता है।
- पेट्रोलियम से इसके अवयवों को अलग करने की विधि 'प्रभावी आसवन विधि' (Fractional Distillation Method) कहा जाता है। इसे 'पेट्रोलियम शोधन' (Petroleum Refining) कहा जाता है।

नोट :

तेल की कीमतों में गिरावट के कारण

- पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन (ओपेक) और रूस (सबसे बड़ा गैर-ओपेक उत्पादक) पेट्रोलियम उत्पादों की मांग में कमी का सामना करने के लिये मौजूदा उत्पादन में कटौती करने के लिये किसी भी समझौते पर पहुँचने में विफल रहे।
- रूस के उत्पादन में कटौती से इनकार करने के बाद सऊदी अरब ने नाराज़ होकर अप्रैल में तेल उत्पादन बढ़ाने का फैसला किया है। सऊदी अरब अगले महीने अपने तेल उत्पादन को बढ़ाकर एक करोड़ बैरल प्रतिदिन करने की योजना बना रहा है।
- सऊदी अरब, रूस समेत तेल उत्पादन करने वाले बड़े देश बाजार में वर्चस्व की जंग लड़ रहे हैं। दरअसल, अमेरिका ने शेल ऑयल फील्ड से पिछले दशक में तेल उत्पादन बढ़ाकर दोगुना कर दिया है। अमेरिका जिस तेजी से तेल उत्पादन बढ़ा रहा है, उससे सऊदी और रूस जैसे बड़े देशों के मार्केट पर खतरा मंडरा रहा है। यही वजह है कि रूस ने तेल उत्पादन में कटौती की बात नहीं मानी।
- कोरोना वायरस के कारण औद्योगिक गतिविधियों में गिरावट के चलते पेट्रोलियम उत्पादों की मांग में कमी से चीन, सऊदी अरब से किये गए अनुबंध में कटौती कर रहा है।
- चीन में आतंरिक परिवहन और चीन से बाहर यात्रा करने पर कड़े प्रतिबंधों के कारण तेल की मांग में 20 प्रतिशत तक की गिरावट दर्ज़ की गई है।
- कोरोना वायरस के कारण वैश्विक स्तर पर कई देशों ने घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय आवागमन को सीमित कर दिया है, जिससे पेट्रोलियम उत्पादों की मांग में भारी कमी देखी जा रही है।

तेल की कीमतों में गिरावट का वैश्विक प्रभाव

- कम तेल की कीमतें रूस और वेनेजुएला जैसे तेल उत्पादकों के लिये एक समस्या है क्योंकि उनकी अर्थव्यवस्थाएँ गहरे संकट में हैं।
- तेल की गिरती कीमतों से अमेरिका, चीन, जापान और भारत जैसे बड़े तेल उपभोक्ता देशों को लाभ प्राप्त होगा।
- सऊदी अरब और मध्य-पूर्व के उत्पादक देशों को तेल से प्राप्त राजस्व में भारी कमी का सामना करना पड़ सकता है, जो उनके विदेशी मुद्रा भंडार को काफी हद तक कम कर सकता है। इससे इन देशों में आर्थिक मंदी आने की भी संभावना रहेगी।
- तेल की कीमतों में गिरावट जारी रहने पर मध्य पूर्व के देशों का भू-राजनीतिक महत्त्व कम हो जाएगा। इन देशों में घरेलू राजनीतिक अस्थिरता भी आ सकती है।
- भारत पर तेल की कीमतें गिरने के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव होंगे।

भारत पर सकारात्मक प्रभाव

- भारत तेल का चौथा सबसे बड़ा उपभोक्ता है, तेल की गिरती कीमतों का एक बड़ा लाभार्थी है। घटी हुई कीमतें न केवल आयात बिल को कम करेंगी बल्कि विदेशी मुद्रा को बचाने में भी मदद करेंगी।
- इससे चालू खाता घाटा संतुलित करने में सहायता प्राप्त होगी।
- तेल की कीमतें गिरने से अन्य आवश्यक वस्तुओं की उत्पादन लागत में कमी आएगी और इस प्रकार अर्थव्यवस्था में समग्र मुद्रास्फ़ीति में गिरावट होगी, जिसका सीधा लाभ आम जनता को प्राप्त होगा।
- तेल की कीमतों में गिरावट से भारत प्रमुख विकास कार्यक्रमों और बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं पर अधिक व्यय के साथ राजकोषीय समेकन का प्रबंधन करने में सक्षम होगा।
- कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट के कारण भारत सरकार के लिये सब्सिडी का बोझ काफी कम हो जाएगा, जिससे राजकोषीय घाटे को कम करने में मदद मिलेगी।

भारत पर नकारात्मक प्रभाव

- तेल उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं के लिये भारत से निर्यात तब प्रभावित हो सकता है जब तेल की कम कीमतों के कारण उन अर्थव्यवस्थाओं की विकास दर में अप्रत्याशित कमी होगी।
- चौथा सबसे बड़ा तेल आयातक होने के अलावा, भारत दुनिया का छठा सबसे बड़ा पेट्रोलियम उत्पाद निर्यातक भी है। तेल की कीमतों में गिरावट से अर्थव्यवस्था के इस क्षेत्र को नुकसान होगा।

नोट :

- खाड़ी देशों में बड़ी संख्या में अनिवासी भारतीय रहते है। अगर इन तेल उत्पादक देशों की विकास दर कम होती है तो उनकी आय प्रभावित हो सकती है। इससे भारत को प्राप्त होने वाला प्रेषण कम हो जाएगा।
- कम तेल की कीमतों के कारण ईंधन की अधिक खपत हो सकती है जो शहरी प्रदूषण को भी बढ़ा सकती है।
- भारत पेट्रोलियम कॉरपोरेशन लिमिटेड (BPCL) को बेचने के लिये केंद्र का विनिवेश कार्यक्रम नकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकता है।

निष्कर्ष

निश्चित रूप से भारत के पास अर्थव्यवस्था की गिरती विकास दर को संभालने क स्वर्णिम अवसर है। भारत अपने चालू खाता घाटे को संतुलित करते हुए राजकोषीय समेकन की बेहतर स्थिति को प्राप्त कर सकता है। इसके साथ ही भारत को भू-राजनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण दोनों देशों के साथ समन्वय पूर्वक अपने संबंधों को परिभाषित करना होगा।

प्रवासी भारतीय: बढ़ती भूमिका

संदर्भ

संयुक्त राष्ट्र के जनसंख्या विभाग की ओर से ज़ारी 'अंतर्राष्ट्रीय प्रवासी स्टॉक-2019 (The International Migrant Stock-2019)' रिपोर्ट में यह बताया गया है कि वर्ष 2019 में दुनिया भर में भारतीय प्रवासियों की संख्या 1.75 करोड़ है। प्रवासियों की संख्या के मामले में भारत, मैक्सिको और चीन क्रमशः पहले, दूसरे और तीसरे स्थान पर हैं। पिछले 10 वर्षों में भारतीय प्रवासियों की संख्या में लगभग 23% की वृद्धि हुई है। प्रवासियों की कुल संख्या वर्तमान आबादी का 3.5% है। नौकरी, उद्योग, व्यापार और दूसरे अन्य कारणों से अपना देश छोड़कर दूसरे देशों में रहने वालों में भारतीयों की आबादी दुनिया में सबसे अधिक है।

दुनिया की बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों में मुख्य कार्यकारी अधिकारी से लेकर अनेक देशों के कानून और अर्थव्यवस्था में निर्णय लेने वाली संस्थाओं का प्रमुख हिस्सा बनने में भारतीय कामयाब रहे हैं। इस आलेख में हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि प्रवासी भारतीय किस तरीके से एक नई ताकत के तौर पर अंतर्राष्ट्रीय पटल पर उभरे हैं और अलग-अलग देशों में भारत के रिश्तों को लेकर उनकी भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण है साथ ही यह भी जानेंगे कि पिछले एक दशक में भारत ने किस प्रकार उनका समर्थन हासिल किया है और उसके क्या परिणाम रहे हैं।

पृष्ठभूमि

- देश के विकास में प्रवासी भारतीयों के योगदान के महत्त्व को मान्यता देने और देश से जुड़ने हेतु मंच प्रदान करने के लिये भारत सरकार प्रतिवर्ष 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस का आयोजन करती है। वर्ष 1915 में 9 जनवरी को ही महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश वापस आए थे।
- भारत सरकार ने प्रवासी भारतीय दिवस मनाने की शुरुआत वर्ष 2003 में लक्ष्मीमल सिंघवी समिति की सिफारिश पर की थी।
- वर्तमान केंद्र सरकार ने प्रवासी भारतीयों को जोड़ने के लिये महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं। सरकार का कोई भी प्रतिनिधि यदि किसी विदेश दौरे पर जाता है तो वह उस देश में रह रहे प्रवासी भारतीयों के बीच अवश्य जाते हैं। इससे प्रवासी भारतीयों के मन में अपनेपन की भावना जन्म लेती है और वे भारत की ओर आकर्षित होते हैं।
- भारतीय 'ब्रेन-ड्रेन' को 'ब्रेन-गेन' में बदलने के लिये भारत सरकार विदेश में बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश में जाने वाले कामगारों के लिये 'अधिकतम सुविधा' और 'न्यूनतम असुविधा' सुनिश्चित करना चाहती है।

भारतीय प्रवासी दिवस मनाने का उद्देश्य

- प्रवासी भारतीय दिवस सम्मेलन आयोजित करने का प्रमुख उद्देश्य प्रवासी भारतीय समुदाय की उपलब्धियों को मंच प्रदान कर उनको दुनिया के सामने लाना है।
- प्रवासी भारतीयों की भारत के प्रति सोच, भावना की अभिव्यक्ति, देशवासियों के साथ सकारात्मक बातचीत के लिये एक मंच उपलब्ध कराना।
- विश्व के सभी देशों में अप्रवासी भारतीयों का नेटवर्क बनाना।
- युवा पीढ़ी को प्रवासियों से जोड़ना तथा विदेशों में रह रहे भारतीय श्रमजीवियों की कठिनाइयाँ जानना तथा उन्हें दूर करने के प्रयास करना।

नोट :

प्रवासी भारतीयों की वैश्विक स्थिति

- खाड़ी देशों में लगभग 8.5 मिलियन भारतीय रहते हैं, जो दुनिया में प्रवासियों का सबसे बड़ा संकेंद्रण है।
- अरब प्रायद्वीप की भौगोलिक और ऐतिहासिक निकटता इसे भारतीयों के लिये एक सुविधाजनक स्थान बनाती है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग 4 मिलियन भारतीय रहते हैं। यहाँ मैक्सिको के बाद भारतीयों का दूसरा सबसे अधिक संकेंद्रण है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका में वर्ष 2020 के अंत में होने वाले राष्ट्रपति पद के चुनाव में प्रवासी भारतीयों की एक बड़ी भूमिका रहेगी।
- इसके अतिरिक्त कनाडा, यूनाइटेड किंगडम, मलेशिया, मॉरीशस, श्रीलंका, सिंगापुर, नेपाल सहित अन्य देशों में प्रवासी भारतीयों की बड़ी आबादी रहती है।

प्रवासी भारतीयों का वर्गीकरण

- अनिवासी भारतीय
  - 'अनिवासी भारतीय' (Non-Resident Indian-NRI) का अर्थ ऐसे नागरिकों से है जो भारत के बाहर रहते हैं और भारत के नागरिक हैं या जो नागरिकता अधिनियम, 1955 की धारा 7(A) के दायरे में 'विदेशी भारतीय नागरिक' कार्डधारक हैं।
  - आयकर अधिनियम के अनुसार, कोई भी भारतीय नागरिक जो "भारत के निवासी" के रूप में मानदंडों को पूरा नहीं करता है, वह भारत का निवासी नहीं है और उसे आयकर देने के लिये अनिवासी भारतीय माना जाता है।
- भारतीय मूल का व्यक्ति
  - भारतीय मूल के व्यक्ति (Person of Indian Origin-PIO) का मतलब एक विदेशी नागरिक (पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, चीन, भूटान, श्रीलंका और नेपाल को छोड़कर) से है, जो:

1. किसी भी समय भारतीय पासपोर्ट धारक हो या

2. वह या उसके माता-पिता / पितामह, दोनों ही भारत में जन्में हों या भारत शासन अधिनियम, 1935 के प्रभावी होने से पूर्व से भारतं के स्थायी नागरिक हों या इस अवधि के बाद किसी क्षेत्र के भारत का अभिन्न अंग बनने से पूर्व वहाँ के निवासी हो।

- ओवरसीज़ सिटीज़न ऑफ इंडिया
  - प्रवासी भारतीयों की मांग को ध्यान में रखते हुए एक छद्म नागरिकता योजना बनाई गई, जिसे ' विदेशी भारतीय नागरिकता' आमतौर पर ओसीआई कार्डधारक के रूप में जाना जाता है।
  - प्रवासी भारतीयों को अनिवासी भारतीयों के समान सभी अधिकार (कृषि एवं बागान अधिग्रहण का अधिकार) दिए गए हैं।

प्रवासी भारतीयों का महत्त्व

- स्वतंत्रता आंदोलन में
  - दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के खिलाफ संस्थागत भेदभाव को समाप्त करने के लिये किया गया महात्मा गांधी का संघर्ष आधुनिक भारत में प्रवासी भारतीयों से स्वयं को जोड़ने के लिये एक प्रेरणादायक किंवदंती बन गया।
  - प्रवासी भारतीय प्रमुख देशों के राजनीतिक अभिजात्य वर्ग के बीच भारतीय स्वतंत्रता को बढ़ावा देने के लिये एक वाहक बन गए।
- सांस्कृतिक विस्तार के रूप में प्रवासी
  - प्रवासन का कार्य केवल भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं है बल्कि यह एक सांस्कृतिक विस्तार भी है।
  - सिख समुदाय भारत के सबसे बड़े प्रवासियों में से एक है। ये यूके, कनाडा और कई अन्य देशों में निवास कर रहे हैं तथा भारतीय संस्कृति से पूरे विश्व को परिचित करा रहे हैं।
- प्रेषण
  - किसी अन्य देश में निवास कर रहे कर्मचारी द्वारा अपने देश में किसी व्यक्ति को पैसे का हस्तांतरण करना ही प्रेषण है।
  - प्रवासियों द्वारा घर भेजा गया पैसा विकासशील देशों के सबसे बड़े वित्तीय प्रवाह में से एक है।
  - विश्व बैंक के अनुसार, वर्ष 2018 में सर्वाधिक प्रेषण प्राप्त करने के साथ भारत ने दुनिया के शीर्ष प्राप्तकर्त्ता के रूप में अपनी स्थिति बरकरार रखी है।

नोट :

- प्रवासी 'परिवर्तन के वाहक' के रूप में
  - यह प्रवासी निवेश को सुविधाजनक बनाने और बढ़ाने, औद्योगिक विकास में तेजी लाने और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तथा पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये 'परिवर्तन के वाहक' के रूप में कार्य करता है।
- तकनीकी विकास और उद्यमिता
  - सक्रिय प्रवासी भारतीयों के साथ संबंधों के पोषण और सामाजिक-आर्थिक विकास में वृद्धि करने में प्रमुख योगदान तकनीकी क्षेत्र का भी रहा है।
  - कई बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों में भारतीय मूल के व्यक्ति निर्णायक पदों पर आसीन हैं। जिनमें गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, पेप्सिको इत्यादि शामिल हैं।
- वैश्विक कद में वृद्धि
  - प्रवासी भारतीयों के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता एक वास्तविकता बन सकती है।
  - भारत ने नवंबर 2017 में अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में न्यायमूर्ति दलवीर भंडारी की पुनर्नियुक्ति के लिये संयुक्त राष्ट्र में दो-तिहाई मत हासिल कर अपने राजनयिक प्रभाव का प्रदर्शन किया।
  - राजनीतिक दबाव, मंत्रिस्तरीय और राजनयिक स्तर की पैरवी के अलावा भारत सुरक्षा परिषद की सदस्यता का समर्थन करने के लिये विभिन्न देशों में मौजूद अपने प्रवासी भारतीय समुदाय का लाभ उठा सकता है।
- प्रवासी कूटनीति
  - एक बड़े प्रवासी समूह के होने से अमूर्त लेकिन महत्त्वपूर्ण लाभ 'प्रवासी कूटनीति' है।
  - ऐतिहासिक रूप से भारत को अपने प्रवासी भारतीयों से लाभ हुआ है। चाहे वह विदेशों से भेजे गए प्रेषण के रूप में हो या वर्ष 2008 में यूएस-इंडिया सिविलियन न्यूक्लियर एग्रीमेंट बिल की पैरवी।

प्रवासी भारतीय समुदाय की समस्याएँ

- नस्लीय विरोध- नस्लवाद के कारण स्थानीय लोगों द्वारा भारतीयों के साथ अभद्र भाषा का प्रयोग कर मार-पीट की घटनाओं को अंजाम दिया जा रहा है। कई देशों में अति राष्ट्रवादी सरकारों के सत्ता में आने से सांप्रदायिकता की घटनाओं में भी वृद्धि हुई है।
- आतंक- मध्य पूर्व के देशों (यमन, ओमान, लीबिया, सीरिया आदि) में सांप्रदायिक संकट, बढ़ती आतंकवादी गतिविधियाँ और युद्ध प्रवासी भारतीयों के लिये प्रतिकूल वातावरण निर्मित कर रही हैं।
- संरक्षणवाद- प्रवासी लोगों के कारण नौकरियों और शैक्षिक अवसरों को खोने के डर के परिणामस्वरूप संयुक्त राज्य अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, सहित कई देशों में सख्त वीज़ा नियम लागू किये जा रहे हैं।

प्रवासी भारतीय समुदाय को जोड़ने में सरकार की भूमिका

- वर्ष 2004 में प्रवासी भारतीय समुदाय की समस्या का समाधान करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने 'प्रवासी भारतीय मामलों के मंत्रालय' की स्थापना की है। प्रवासी भारतीय मामलों के मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही प्रमुख योजनाएँ और उनकी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-
  - भारत को जानें कार्यक्रम- भारत को जानें कार्यक्रम का उद्देश्य 18 से 26 आयु वर्ग के प्रवासी युवाओं को देश के विकास और उपलब्धियों से परिचित कराना और उन्हें उनके मूल देश से भावनात्मक रूप से जोड़ना है।
  - भारत का अध्ययन कार्यक्रम- भारत का अध्ययन कार्यक्रम के अंतर्गत प्रवासी भारतीय युवाओं को भारत के इतिहास, विरासत, कला, संस्कृति, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक विकास से परिचित कराने के लिये भारतीय विश्वविद्यालयों मे लघु अवधि के पाठ्यक्रम प्रारंभ किये गए हैं।
  - प्रवासी बच्चों के लिये छात्रवृत्ति कार्यक्रम- इस कार्यक्रम के अंतर्गत भारतीय मूल के प्रवासियों और गैर-प्रवासी भारतीय छात्रों को इंजीनियरिंग/ प्रौद्योगिकी, मानविकी, वाणिज्य, प्रबंधन,पत्रकारिता, होटल प्रबंधन, कृषि और पशु पालन आदि विषयों में स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के लिये 100 छात्रों को प्रतिवर्ष प्रति छात्र चार हज़ार अमेरिकी डॉलर तक की छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं।
  - प्रवासी भारतीय बीमा योजना- इस योजना के तहत विदेशगमन की अनुमति मिलने के बाद रोज़गार के लिये विदेश गए प्रवासी भारतीय की मृत्यु अथवा विकलांगता पर नामित/आधिकारिक व्यक्ति को 10 लाख रुपए का जीवन बीमा दिया जाता है।

नोट :

- महात्मा गांधी प्रवासी सुरक्षा योजना- इस योजना को प्रायोगिक तौर पर 1 मई, 2012 को केरल में शुरू किया गया था। इस योजना का उद्देश्य विदेशी भारतीय कामगारों को बढ़ावा देना और सक्षम बनाना है। इसके अतिरिक्त वापसी एवं पुर्नवास की सुरक्षा, उनके पेंशन की सुरक्षा और प्राकृतिक मौत की दशा में जीवन बीमा लाभ दिलाने में सरकार के द्वारा मदद प्रदान करना है।

प्रवासी भारतीय समुदाय पर विश्वास का प्रश्नचिन्ह

- प्रवासी भारतीयों का समर्थन न तो स्वचालित है और न ही निरंतर है, उनके हितों में भारत की प्राथमिकताएँ सीमित हैं। उदाहरण के लिये, अमेरिका में भारतीय समुदाय H1-B वीज़ा कार्यक्रम को प्रतिबंधित करने के ट्रंप के प्रस्ताव की आलोचना करने में पर्याप्त मुखर नहीं था क्योंकि इससे कई भारतीय लाभान्वित हो रहे थे।
- एक चुनौती यह भी है कि प्रेषणों का उपयोग हमेशा लाभकारी उद्देश्यों के लिये नहीं किया जाता है क्योंकि खालिस्तान आंदोलन जैसे चरमपंथी आंदोलनों के लिये विदेशी फंडिंग के कारण भारत को समस्याओं का सामना करना पड़ा है।
- ह्यूस्टन में भारतीय समुदाय की उपस्थिति इस वर्ष होने वाले चुनावों में ट्रम्प को अपने वोट बैंक के रूप में दिख रही है जबकि प्रवासी भारतीय समुदाय के अधिकांश लोगों का झुकाव डेमोक्रेटिक पार्टी की ओर रहा है।
- विदेश नीति को निर्धारित करने में भारत को प्रवासी भारतीय समुदाय का प्रयोग बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिये क्योंकि नेपाल और श्रीलंका की घरेलू राजनीति में हस्तक्षेप से भारत को समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

आगे की राह

- भारत को विदेश नीति का निर्धारण करते समय स्वच्छ भारत, स्वच्छ गंगा, मेक इन इंडिया, डिजिटल इंडिया और स्किल इंडिया जैसी प्रमुख परियोजनाओं के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इन क्षेत्रों में प्रवासी भारतीयों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।
- सरकार को अपना ध्यान प्रवासी भारतीयों पर केंद्रित करना चाहिये क्योंकि वे भारत के लिये एक रणनीतिक संपत्ति हैं।

जल संकट: कारण और समाधान

संदर्भ

धरती पर जल संकट व्याप्त है,
शायद मानव की बुद्धि समाप्त है,
पानी की बूँद-बूँद भी बच जाए तो,
बचा हुआ पानी भी पर्याप्त है।

उपर्युक्त उद्धरण जल संकट की विभीषिका को बयाँ कर रहा है क्योंकि औद्योगीकरण की राह पर बढ़ती दुनिया में जल संकट कोने-कोने में पसर चुका है, जिसने अब एक विकराल रूप ले लिया है। नि:संदेह दुनिया विकास के मार्ग पर अग्रसर है, लेकिन स्वच्छ जल मिलना कठिन हो रहा है। एशिया में भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश से लेकर अफ्रीका में केन्या, इथोपिया, सूडान और इजिप्ट जैसे देश जल के संकट से जूझ रहे हैं। अफ्रीका महाद्वीप में नील नदी पर बने ग्रैंड इथोपियाई रेनेंशा डैम (Grand Ethiopian Renaissance Dam-GERD) को लेकर इथोपिया, इजिप्ट और सूडान में तनाव बढ़ता जा रहा है। इन देशों में मतभेद तब और गहरे हो गए जब संयुक्त राज्य अमेरिका तथा विश्व बैंक की अध्यक्षता में आयोजित एक त्रिपक्षीय बैठक में इथोपिया ने सूडान एवं इजिप्ट के साथ वार्ता करने से इनकार कर दिया।

तीसरी दुनिया के देशों की खराब हालत के पीछे एक बड़ी वजह स्वच्छ जल की कमी है। जब से जल संकट के बारे में विश्व में चर्चा शुरू हुई तब से एक विचार प्रचलित हुआ है कि तीसरा विश्व युद्ध जल आपूर्ति के लिये होगा। वास्तव में अब जल संबंधी चुनौतियाँ गंभीर हो गई हैं। वर्ष 1995 में विश्व बैंक के उपाध्यक्ष इस्माइल सेराग्लेडिन ने कहा था कि 'इस शताब्दी की लड़ाई तेल के लिये लड़ी गई है लेकिन अगली शताब्दी की लड़ाई जलापूर्ति के लिये लड़ी जाएगी।' इस आलेख में जल संकट के कारण, प्रभाव और उनका समाधान ढूँढने का प्रयास किया जाएगा।

पृष्ठभूमि

- नील नदी पर बना ग्रैंड इथोपियाई रेनेंशा डैम अफ्रीका महाद्वीप की सबसे बड़ी जल विद्युत परियोजना है।

नोट :

- नील नदी सूडान के खारतूम से निकल कर इजिप्ट होते हुए भूमध्य सागर में गिरती है। खारतूम में ब्लू नील नदी और व्हाइट नील नदी के मिलने से नील नदी का निर्माण होता है।
- अफ्रीकी देश तंजानिया, केन्या और उगांडा की सीमा पर स्थित विक्टोरिया झील से व्हाइट नील नदी का उदगम होता है, वहीं ब्लू नील नदी का उदगम इथोपिया में स्थित ताना झील से होता है।
- इथोपिया अफ्रीका महाद्वीप का दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है और ग्रैंड इथोपियाई रेनेंशा डैम को अपनी संप्रभुता के प्रतीक के रूप में देखता है।
- इथोपिया 4 अरब डॉलर की लागत से ब्लू नील नदी पर बाँध का निर्माण कर देश की लगभग 60% आबादी तक बिजली की आपूर्ति बढ़ाकर बुनियादी ढाँचे की खाई को पाटना चाहता है।
- परंतु पूर्णत: नील नदी के जल पर निर्भर इजिप्ट और सूडान को डर है कि ब्लू नील नदी पर निर्मित बाँध से नील नदी में जल का प्रवाह कम हो सकता है जिससे दोनों देशों को गंभीर जल संकट का सामना करना पड़ सकता है।
- जल संकट का यह डर ही तनाव का कारण बनता है और तनाव में वृद्धि से युद्ध की आशंका जन्म लेती है।

जल संकट क्या है ?

- एक क्षेत्र के अंतर्गत जल उपयोग की मांगों को पूरा करने हेतु उपलब्ध जल संसाधनों की कमी को ही 'जल संकट' कहते हैं।
- विश्व के सभी महाद्वीपों में रहने वाले लगभग 2.8 बिलियन लोग प्रत्येक वर्ष कम-से-कम एक महीने जल संकट से प्रभावित होते हैं। लगभग 1.2 बिलियन से अधिक लोगों के पास पीने हेतु स्वच्छ जल की सुविधा उपलब्ध नहीं होती है।

जल संकट की वैश्विक स्थिति

- पृथ्वी पर कुल जल का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि कुल जल का 97.3% खारा जल है और पृथ्वी पर उपलब्ध कुल जल का केवल 2.07% ही शुद्ध जल है जिसे पीने योग्य माना जा सकता है। अगर विश्व स्वास्थ्य संगठन की मानें तो दुनिया के दो अरब लोगों को पीने के लिये स्वच्छ जल नहीं मिल पाता है जिससे उन्हें हैजा, आंत्रशोध आदि जानलेवा बीमारियों के होने का खतरा रहता है।
- एक अनुमान के अनुसार एशिया का मध्य-पूर्व (Middle-East) क्षेत्र , उत्तरी अफ्रीका के अधिकांश क्षेत्र, पाकिस्तान, तुर्की, अफगानिस्तान और स्पेन आदि देशों में वर्ष 2040 तक अत्यधिक जल तनाव (Water Stress) की स्थिति होने की संभावना है।
- जल संकट से सर्वाधिक ग्रसित 17 देश इस प्रकार हैं- क़तर, इज़राइल, लेबनान, ईरान, जॉर्डन, लीबिया, कुवैत, सऊदी अरब, इरीट्रिया, संयुक्त अरब अमीरात, सैन मरीनो, बहरीन, भारत, पाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, ओमान, बोत्सवाना।
- इसके साथ ही भारत, चीन, दक्षिणी अफ्रीका, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया सहित कई अन्य देशों को भी उच्च जल तनाव का सामना करना पड़ सकता है।

भारत में जल संकट की स्थिति

- भारत में लगातार दो वर्षों के कमज़ोर मानसून के कारण 330 मिलियन लोग या देश की लगभग एक-चौथाई जनसंख्या गंभीर सूखे से प्रभावित हैं। भारत के लगभग 50% क्षेत्र सूखे जैसी स्थिति से जूझ रहे हैं, विशेष रूप से पश्चिमी और दक्षिणी राज्यों में जल संकट की गंभीर स्थिति बनी हुई है।
- नीति आयोग द्वारा वर्ष 2018 में जारी समग्र जल प्रबंधन सूचकांक (Composite Water Management Index) रिपोर्ट के अनुसार, देश के 21 प्रमुख शहरों में निवासरत लगभग 100 मिलियन लोग जल संकट की भीषण समस्या से जूझ रहे हैं। भारत की 12% जनसंख्या पहले से ही 'डे ज़ीरो' की परिस्थितियों में रह रही हैं।

डे ज़ीरो: दक्षिण अफ्रीका के केपटाउन शहर में पानी के उपभोग को सीमित और प्रबंधित करने हेतु सभी लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिये डे ज़ीरो के विचार को पेश किया गया था ताकि जल के उपयोग को सीमित करने संबंधी प्रबंधन और जागरूकता को बढ़ाया जा सके।

- साथ ही रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2030 तक भारत में जल की मांग, उसकी पूर्ति से लगभग दोगुनी हो जाएगी।
- देश में वर्ष 1994 में पानी की उपलब्धता प्रति व्यक्ति 6000 घनमीटर थी, जो वर्ष 2000 में 2300 घनमीटर रह गई तथा वर्ष 2025 तक इसके और घटकर 1600 घनमीटर रह जाने का अनुमान है।
- हालाँकि वर्ष 2019 में नीति आयोग ने संयुक्त जल प्रबंधन सूचकांक (Composite Water Management Index -CWMI 2.0) का दूसरा संस्करण तैयार किया जिसमें कुछ राज्यों ने जल प्रबंधन में सुधार किया है।

नोट :

भारत में जल संकट का कारण

- भारत में जल संकट की समस्याओं को मुख्यत: दक्षिणी और उत्तर-पश्चिमी भागों में इंगित किया गया है, इन क्षेत्रों की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि यहाँ पर कम वर्षा होती है, चेन्नई तट पर दक्षिण-पश्चिम मानसून से वर्षा नहीं हो पाती है। इसी प्रकार उत्तर-पश्चिम में मानसून पहुँचते-पहुँचते कमज़ोर हो जाता है, जिससे वर्षा की मात्रा भी घट जाती है।
- भारत में मानसून की अस्थिरता भी जल संकट का बड़ा कारण है। हाल के वर्षों में एल-नीनो के प्रभाव के कारण वर्षा कम हुई, जिसकी वज़ह से जल संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई।
- भारत की कृषि पारिस्थितिकी ऐसी फसलों के अनुकूल है, जिनके उत्पादन में अधिक जल की आवश्यकता होती है, जैसे- चावल, गेहूँ, गन्ना, जूट और कपास इत्यादि। इन फसलों वाले कृषि क्षेत्रों में जल संकट की समस्या विशेष रूप से विद्यमान है। हरियाणा और पंजाब में कृषि गहनता से ही जल संकट की स्थिति उत्पन्न हुई है।
- भारतीय शहरों में जल संसाधन के पुर्नप्रयोग के लिये गंभीर प्रयास नहीं किये जाते हैं, यही कारण है कि शहरी क्षेत्रों में जल संकट की समस्या चिंताजनक स्थिति में पहुँच गई है। शहरों में ज़्यादातर जल के पुर्नप्रयोग के बजाय उसे सीधे नदी में प्रवाहित करा दिया जाता है।
- लोगों के बीच जल संरक्षण को लेकर जागरूकता का अभाव है। जल का दुरुपयोग लगातार बढ़ता जा रहा हैं, गाड़ी की धुलाई, पानी के उपयोग के बाद टोंटी खुला छोड़ देना इत्यादि।

जल संकट के परिणाम

- खाद्य असुरक्षा: कृषि क्षेत्र में अत्यधिक जल की आवश्यकता होती है तथा जल खाद्य सुरक्षा की कुंजी है।
- जल संघर्ष और प्रवासन: जल की कमी से आजीविका का संकट उत्पन्न होगा जो प्रवासन को बढ़ावा देगा।
- आर्थिक अस्थिरता: विश्व बैंक के अनुसार, जल की कमी के चलते कई देशों की GDP प्रभावित होगी और आर्थिक समस्याओं में भी वृद्धि हो सकती है।
- जैव विविधता की हानि: जल संकट से पेड़-पौधों को नुकसान पहुँचने के साथ ही जीव-जंतुओं पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- कानून-व्यवस्था बिगड़ने के आसार: प्राय: देखा गया है कि जल संकट वाले क्षेत्रों में उपलब्ध जल स्रोतों पर कब्ज़े को लेकर कई बार हिंसक झड़प हो जाती है। पिछले कई वर्षों से भीषण जल संकट का सामना करने वाले महाराष्ट्र के लातूर ज़िले में प्रशासन को धारा 144 लगानी पड़ी है।

जल संरक्षण हेतु प्रयास

- सतत् विकास लक्ष्य 6 के तहत वर्ष 2030 तक सभी लोगों के लिये पानी की उपलब्धता और स्थायी प्रबंधन सुनिश्चित किया जाना है, इस लक्ष्य को पूरा करने के लिये जल संरक्षण के निम्नलिखित प्रयास किये जा रहे हैं-
  - वर्तमान समय में कृषि गहनता के कारण जल के अत्यधिक प्रयोग को कम करने हेतु कम पानी वाली फसलों के प्रयोग को बढ़ावा दिया जा रहा है।
  - द्वितीय हरित क्रांति में कम जल गहनता वाली फसलों पर ज़ोर दिया जा रहा है।
  - रेनवाटर हार्वेस्टिंग द्वारा जल का संचयन।
  - वर्षा जल को सतह पर संग्रहीत करने के लिये टैंकों, तालाबों और चेक-डैम आदि की व्यवस्था।
  - झीलों, नदियों और समुद्रों जैसे प्राकृतिक जल स्रोत काफी महत्त्वपूर्ण हैं। ताज़े पानी के पारिस्थितिकी तंत्र और समुद्री पारिस्थितिक तंत्र दोनों ही विभिन्न जीवों की विविधता के घर हैं और इन पारिस्थितिक तंत्रों के समर्थन के बिना ये जीव विलुप्त हो जाएंगे। इसलिये प्राकृतिक जल निकायों का संरक्षण आवश्यक है।

  नदी जोड़ो परियोजना के माध्यम से अधिशेष जल वाले क्षेत्रों से जल को जल प्रतिबल वाले क्षेत्रों की ओर भेजा जा सकता है।

  नीति आयोग की @75 कार्यनीति और जल प्रबंधन

  वर्ष 2018 में नीति आयोग ने अभिनव भारत @75 के लिये कार्यनीति जारी की थी जिसके तहत यह निश्चित किया गया था कि वर्ष 2022-23 तक भारत की जल संसाधन प्रबंधन रणनीति में जीवन, कृषि, आर्थिक विकास, पारिस्थितिकी और पर्यावरण के लिये पानी की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु जल सुरक्षा की सुविधा होनी चाहिये।

नोट :

आगे की राह

- समय आ गया है कि अब हम वर्षा का जल अधिक-से-अधिक बचाने की कोशिश करें, क्योंकि जल का कोई विकल्प नहीं है, इसकी एक-एक बूँद अमृत है। इन्हें सहेजना बहुत ही आवश्यक है। अगर अभी जल नहीं सहेजा गया तो आगे चलकर स्थिति भयावह हो सकती है।
- वर्षाजल संग्रहण के कई तरीके उपलब्ध हैं। कम ढलान वाले इलाकों में परंपरागत तालाबों को बड़े पैमाने पर पुनर्जीवित करके नए तालाब भी बनाने चाहिये। तालाब जल की कमी के समय जल उपलब्ध करवाने के अलावा भूजल भरण में भी उपयोगी सिद्ध होंगे।
- आधारभूत जल संकट (उदाहरण के लिये भूजल का अत्यधिक दोहन या उपयोग) की समस्या के समाधान हेतु देशों को अधिक दक्ष सिंचाई पद्धतियों को अपनाने की आवश्यकता है।

कोरोना वायरस: अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का निर्धारक

संदर्भ

यदि हम आज कोरोना वायरस का नाम सुनते हैं तो, जो वस्तुस्थिति सर्वप्रथम उभरकर सामने आती है वह 'क्वारंटाइन (अपनी गतिविधियों को स्वयं तक सीमित करना) या आइसोलेशन (एकाकीकरण) ' है। यह आइसोलेशन न केवल व्यक्ति या समाज के स्तर पर हुआ है बल्कि विभिन्न देशों की सीमाओं की स्तर पर भी हो गया है। इस वैश्विक आपदा की स्थिति में जहाँ एक ओर युद्ध स्तर पर बचाव के प्रयास किये जा रहे हैं तो वहीं दूसरी ओर 'फर्स्ट वर्ल्ड कंट्रीज़ (विकसित देश)' के बीच इस वायरस की उत्पत्ति को लेकर आरोप-प्रत्यारोप का दौर भी प्रारंभ हो गया है। हाल ही में चीन सरकार के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने आधिकारिक रूप से यह दावा कि कोरोना वायरस की उत्पत्ति चीन में नहीं बल्कि संयुक्त राज्य अमेरिका में हुई है।

संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी पलटवार करते हुए कोरोना वायरस को 'वुहान वायरस या चाइनीज़ फ्लू' के रूप में संबोधित करना प्रारंभ कर दिया है। ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता है कि क्या इस वायरस का प्रभाव भू-रणनीतिक व्यवस्था को परिवर्तित कर देगा? क्या एक बार फिर विश्व शीत युद्ध के दौर में प्रवेश कर जाएगा? क्या 21वीं सदी के आरंभ में विकसित बहुध्रुवीय वैश्विक राजनीतिक व्यवस्था एकध्रुवीय राजनीतिक व्यवस्था की ओर मुड़ जाएगी?

इन परिस्थितियों को अच्छी तरह से समझने के लिये इस आलेख में कोरोना वायरस तथा उसके स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों के इतर तेज़ी से बदलती वैश्विक भू-राजनीतिक व्यवस्था पर चर्चा की जाएगी।

परिवर्तनशील वैश्विक घटनाक्रम

- वर्तमान में चीन के हुबेई प्रांत के वुहान शहर को कोरोना वायरस के केंद्र के रूप में देखा जा रहा था, परंतु चीन के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका में कोरोना वायरस की उत्पत्ति संबंधी दावे ने विश्व राजनीतिक व्यवस्था में नई बहस को जन्म दे दिया है।
- अमेरिका ने भी आधिकारिक रूप से अपनी प्रेस विज्ञप्तियों में इसे वुहान वायरस के नाम से संबोधित किया है।
- शोधकर्त्ताओं का ऐसा मानना है कि चीन का 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (Belt And Road Initiative-BRI) प्रोजेक्ट' जिसका विस्तार चीन से यूरोप और एशिया महाद्वीप के विभिन्न देशों तक है, इस वायरस के प्रसार का प्रमुख वाहक है।
- शोधकर्त्ताओं के अनुसार, अपेक्षाकृत रूप से चीन के करीबी देश ईरान ने भी इस वैश्विक आपदा की स्थिति में चीन से सहायता न मांगकर अमेरिकी प्रभुत्व वाले अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से सहायता की अपील कर वैश्विक राजनीति के बदलने के संकेत दिये हैं।
- चीन के बाद कोरोना वायरस के सबसे बड़े केंद्र इटली ने भी BRI प्रोजेक्ट समेत चीन के साथ अपनी सभी आर्थिक गतिविधियों को रोक दिया है।
- यूरोप के कई देशों ने चीन के साथ आर्थिक गतिविधियों में प्रतिबंध लगाकर विनिर्माण क्षेत्र में चीन के एकाधिकार को चुनौती दी है।
- कोरोना वायरस की उत्पत्ति में अमेरिका की भूमिका के संदर्भ में चीन के दावे को रूस का साथ मिला है और दोनों देशों ने सामूहिक रूप से इस आपदा से निपटने के लिये अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की है।
- रूस के इस कदम से वैश्विक राजनीति में अमेरिका-चीन टकराव बढ़ने के आसार व्यक्त किये जा रहे हैं।

नोट :

अमेरिका-चीन टकराव

- अमेरिका का आरोप है कि वायरस के बारे में जानकारी होने के बावजूद चीन ने इस बात को छिपाकर रखा। अमेरिका के इस आरोप का समर्थन कमोबेश दुनिया के सभी हिस्सों से विशेषज्ञों द्वारा किया गया है चीन की लापरवाही का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि वायरस के संक्रमण की जानकारी होने के बाद भी चीन ने वुहान में आयोजित होने वाले 'पॉट लक डिनर' समारोह को निरस्त नहीं किया। इस समारोह में शामिल लगभग 40,000 लोगों में दो-तिहाई लोग इस वायरस से संक्रमित पाए गए।
- हालाँकि चीन का दावा है कि पेशेंट ज़ीरो (ऐसा व्यक्ति जो किसी भी संक्रामक बीमारी का पहला वाहक है) अमेरिकी सेना का एक सैनिक था, जो चीन में आयोजित सैन्य खेलों में हिस्सा लेने वुहान आए अमेरिकी दल का हिस्सा था।
- चीन के प्रवक्ता के अनुसार, नवंबर 2019 में अमेरिकी सेना के कुछ सैनिकों को निमोनिया जैसी किसी बीमारी के कारण हॉस्पिटल में एडमिट कराया गया, जहाँ कुछ समय बाद उनकी मृत्यु हो गई। चीन का आरोप है कि अमेरिकी स्वास्थ्य विभाग ने इस घटना की सही तरीके से जाँच नहीं की और इस बीमारी का विस्तार अन्य अमेरिकी सैनिकों तक हो गया।
- ध्यातव्य है कि चीन ने देश के भीतर कुछ प्रमुख अमेरिकी अखबारों के पत्रकारों पर रिपोर्टिंग करने पर रोक लगा दी है। ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि उक्त अखबारों पर कोरोना से संबंधित ख़बरों में चीन के प्रति आरोपात्मक बातें लिखने का संदेह व्यक्त किया गया था। इसके जवाब में अमेरिका में कार्यरत चीनी समाचार एजेंसियों को अमेरिकी प्रशासन द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया।
- जबकि चीन की एक महिला पत्रकार ने बताया है कि अमेरिकी प्रशासन जानबूझकर कोरोना वायरस को 'कुंग फ्लू' (कुंग फू चाइनीज़ मार्शल आर्ट की एक विधा है) के रूप में प्रचारित कर नस्लीय भेदभाव को बढ़ावा दे रहा है।
- अमेरिका ने इस घटनाक्रम के एक महत्त्वपूर्ण दुष्परिणाम के रूप में चीन का वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर एकाधिकार होने की समस्या पर भी दुनिया का ध्यान आकर्षित किया है। यह देखा गया था कि दुनिया में वायरस के प्रसार के आरंभिक चरणों में रोकथाम की संभावित सामग्री (यथा-सर्जिकल मास्क) की आपूर्ति चीन द्वारा बाधित की गई थी।

वैश्विक राजनीति पर प्रभाव

- कोरोना संकट के साए में अमेरिका और चीन जैसी दो वैश्विक महाशक्तियों के बीच टकराव से वैश्विक राजनीति पर गंभीर प्रभाव होने की आशंका व्यक्त की जा रही है।
- इसका पहला प्रत्यक्ष प्रभाव अमेरिका और चीन के बीच हाल ही में संपन्न व्यापार समझौते पर होगा। साथ ही, चीन के इस घटनाक्रम में लापरवाही भरे रुख के कारण दुनिया भर में चीन को संदेह की नज़र से देखा जाने लगेगा।
- कोरोना वायरस को लेकर दोनों देशों की बीच उत्पन्न टकराव नवंबर 2020 में होने वाले अमेरिकी राष्ट्रपति पद के चुनाव में निर्णायक भूमिका अदा कर सकते हैं।
- इस आपदा ने एक-दूसरे के धुर विरोधी रहे ईरान और अमेरिका को नज़दीक ला दिया है, जिससे तृतीय विश्वयुद्ध के रूप में मंडराने वाला संभावित खतरा टलता नज़र आ रहा है।
- इस वैश्विक आपदा से निपटने में नाकाम रहे इटली में कुछ समय के भीतर ही राजनीतिक प्रतिनिधित्व का संकट भी देखने को मिल सकता है। ऐसा अनुमान है कि इटली को अपनी खोई साख हासिल करने में कई दशक लग सकते हैं क्योंकि इटली एक ऐतिहासिक और पर्यटन गंतव्य रहा है।
- यूरोपियन यूनियन से अलग होने के बाद ब्रिटेन में गठित नई सरकार पर यह संकट आर्थिक व राजनीतिक रूप से अतिशय दबाव उत्पन्न करेगा।
- कोरोना वायरस के केंद्र के रूप में चीन के विख्यात होने से दुनियाभर में चीन के लोगों के साथ नस्लीय भेदभाव में इज़ाफा होने की आशंका है।
- चीन के विनिर्माण क्षेत्र को अपना प्रभुत्व पुनर्स्थापित करने में कई दशक तक लंबा संघर्ष करना पड़ सकता है, जिससे उसकी नव-साम्राज्यवादी नीतियों पर विराम लग सकता है।
- वैश्विक विनिर्माण के नए केंद्र स्थापित करने में अत्यधिक समय और धन की आवश्यकता होगी क्योंकि विश्व के अन्य देशों में चीन के जैसी अवसंरचना और सस्ते श्रम का अभाव है।

नोट :

- जर्मनी की चांसलर समेत यूरोप महाद्वीप के अन्य प्रमुख नेताओं का मानना है कि कोरोना वायरस के प्रभाव से पूरे महाद्वीप में प्रथम विश्वयुद्ध के बाद उत्पन्न हुए आर्थिक संकट जैसी परिस्थितियाँ निर्मित हो सकती हैं।

भारत की भूमिका

- कोरोना वायरस से भारत भी अछूता नहीं रहा है। भारत को अपना पूरा ध्यान वायरस के संक्रमण को रोकने में लगाना चाहिये।
- भारत को आपदा की इस स्थिति में बदलती वैश्विक राजनीति के किसी भी समूह में शामिल नहीं होना चाहिये क्योंकि इससे भारत को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी प्रकार का लाभ प्राप्त नहीं होता है।
- भारत को अपने पड़ोसी देशों तथा क्षेत्रीय संगठनों जैसे- सार्क और बिम्सटेक के साथ मिलकर एक विशेष कार्यदल का गठन करना चाहिये ताकि इस आपदा से निपटने की तैयारियों में समन्वय व संचार की कमी न रह जाए।

आगे की राह

- निसंदेह इस संकट से सही तरीके से निपटने वाली महाशक्ति बदलती वैश्विक राजनीति में प्रमुख भूमिका निभाएगी।
- वर्तमान में पूरा विश्व एक गंभीर संकट के दौर से गुज़र रहा है। यह समय एक-दूसरे पर दोषारोपण करने का नहीं बल्कि एकजुटता प्रदर्शित करते हुए इस अदृश्य शत्रु से लड़ने का है।
- वैश्विक महाशक्तियों को अपने संसाधनों का इष्टतम प्रयोग करते हुए समस्त प्रयास इस महामारी की हर संभव रोकथाम की दिशा में करने चाहिये, इसके साथ ही भारत से सीख लेते हुए अपने पड़ोसी देशों व उन क्षेत्रीय संगठनों, जिनका वे हिस्सा हैं, की ओर सहायता का हाथ बढ़ाना चाहिये।
- कोरोना वायरस के रूप में दुनिया के समक्ष एक अभूतपूर्व संकट उत्पन्न हुआ है और इसका प्रसार जितनी तेज़ी से हो रहा है, वह इसे अधिक चिंताजनक बनाता है। इसलिये इससे निपटने के लिये विश्व का प्रत्येक प्रयास इस महामारी के पूर्णत: उन्मूलन का होना चाहिये।
- विश्व के सभी देशों को विनिर्माण क्षेत्र व आपूर्ति श्रृंखला के विभिन्न केंद्रों के निर्माण की दिशा में भी कार्य करना होगा।

The Vision

नोट :

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी

सतत विकास के लिये नवीकरणीय ऊर्जा एक बेहतर विकल्प

संदर्भ

विकास की दौड़ में शामिल अर्थव्यवस्थाओं में भारत एक अग्रणी अर्थव्यवस्था है। इस अग्रणी अर्थव्यवस्था में ऊर्जा की उच्च मांग प्राथमिक आवश्यकता है। ऊर्जा की उच्च मांग की पूर्ति के लिये परमाणु ऊर्जा (परंपरागत ऊर्जा स्रोत का एक उदाहरण) और नवीकरणीय ऊर्जा का विकल्प उपलब्ध है। किसी परमाणु के नाभिक की ऊर्जा को 'परमाणु ऊर्जा' कहा जाता है, तो वहीं प्राकृतिक अक्षय ऊर्जा स्रोतों जैसे- सूर्य, पवन, जल, भूगर्भ और पादपों से प्राप्त ऊर्जा को नवीकरणीय ऊर्जा कहा जाता है। नवीकरणीय ऊर्जा का विश्लेषण करते हुए हम यह पाते हैं कि यह ऊर्जा का ऐसा स्थायी स्रोत है जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य दोनों के लिये हानिकारक नहीं है। वर्तमान में विश्व की लगातार बढ़ रही जनसंख्या के कारण ईंधन की लागत में भी वृद्धि हो रही है और इसके समानांतर परंपरागत ऊर्जा स्रोतों में भी निरंतर कमी देखी जा रही है। ऐसे में सभी लोग ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत खोजने में जुट गए हैं। वस्तुत: जहाँ एक ओर भविष्य की अपार संभावनाओं से युक्त नवीकरणीय ऊर्जा आज की आवश्यकता बनती जा रही है, तो वहीं दूसरी ओर परमाणु ऊर्जा से हुई आपदाओं के उदाहरण भी सामने आते रहते हैं।

इस आलेख में परमाणु ऊर्जा व नवीकरणीय ऊर्जा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए भारत के संबंध में इसकी व्यवहार्यता का भी परीक्षण किया जाएगा।

मुद्दा क्या है ?

- फरवरी 2020 में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की भारत यात्रा के दौरान एक संयुक्त वक्तव्य में कहा गया कि अमेरिका की वेस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कंपनी और भारत की न्यूक्लियर पावर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड दोनों मिलकर भारत में छह परमाणु रिएक्टरों की स्थापना के लिये संयुक्त रूप से कार्य करेंगी।
- अमेरिका में होने वाले राष्ट्रपति पद के चुनाव के मद्देनज़र डोनाल्ड ट्रंप अमेरिकी विनिर्माण क्षेत्र को पुनर्जीवित करना चाहते हैं, ऐसे में वेस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कंपनी सहित कई परमाणु रिएक्टर विक्रेताओं द्वारा इस संदर्भ में लॉबिंग की जा रही है।
- इन कंपनियों द्वारा चुनाव में फंडिंग की जाएगी जिसके कारण ट्रंप प्रशासन वेस्टिंगहाउस इलेक्ट्रिक कंपनी सहित कई परमाणु रिएक्टर कंपनियों को व्यापार में लाभ पहुँचाना चाहता है।

परमाणु ऊर्जा

- नाभिकीय विखंडन के दौरान उत्पन्न ऊर्जा को नाभिकीय या परमाणु ऊर्जा कहा जाता है। नाभिकीय विखंडन वह रासायनिक अभिक्रिया है, जिसमें एक भारी नाभिक दो भागों में टूटता है। परमाणु ऊर्जा के उत्पादन के लिये नाभिकीय रिएक्टर में नियंत्रित शृंखला अभिक्रिया अपनाई जाती है।
- जब यूरेनियम पर न्यूट्रॉनों की बमबारी की जाती है, तो एक यूरेनियम नाभिकीय विखंडन के फलस्वरूप बहुत अधिक ऊर्जा व तीन नए न्यूट्रॉन उत्सर्जित करता है। ये नव उत्सर्जित न्यूट्रॉन, यूरेनियम के अन्य नाभिकों को विखंडित करते हैं । इस प्रकार यूरेनियम नाभिकों के विखंडन की एक शृंखला बन जाती है। इसी शृंखला अभिक्रिया को नियंत्रित कर परमाणु रिएक्टरों में परमाणु ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है ।

भारत में परमाणु ऊर्जा

- भारत के पास एक अति महत्त्वाकांक्षी स्वदेशी परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम है, जिससे अपेक्षा है कि वर्ष 2024 तक यह 14.6 गीगावाट बिजली का उत्पादन करेगा, जबकि वर्ष 2032 तक बिजली उत्पादन की यह क्षमता 63 गीगावाट हो जाएगी।
- भारत का परमाणु ऊर्जा भंडार 293 बिलियन टन का हैं जिसमें अधिकांश योगदान इसके पूर्वी राज्यों जैसे- झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल का है।

नोट :

- भारत के पास निमनलिखित पाँच बिजली ग्रिड हैं –उत्तरी, पूर्वी, उत्तर-पूर्वी, दक्षिणी और पश्चिमी। दक्षिणी ग्रिड के अलावा इसके अन्य सभी ग्रिड आपस में जुड़े हुए हैं। इन सभी ग्रिडों का संचालन पावर ग्रिड कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (Power Grid Corporation of India) द्वारा किया जाता है।

परमाणु ऊर्जा का लाभ

- यूरेनियम के एक परमाणु के विखंडन से जो ऊर्जा मुक्त होती है वह कोयले के किसी कार्बन परमाणुओं के दहन से उत्पन्न ऊर्जा की तुलना में एक करोड़ गुना अधिक होती है।
- अनेक विकसित और विकासशील देश परमाणु ऊर्जा का विद्युत ऊर्जा में रुपांतरण कर रहे हैं।
- परमाणु ऊर्जा बहुत लंबे समय तक हमारी ऊर्जा संबंधी ज़रूरतों को पूरा कर सकती है। यह अन्य स्रोतों की अपेक्षा कम खर्च पर ऊर्जा प्रदान करती है।
- परमाणु ऊर्जा कम मात्रा में ही हरितगृह गैसों को उत्पन्न करती है।

परमाणु ऊर्जा से हानि

- फुकुशिमा के परमाणु विध्वंस से यह साफ हो गया है कि परमाणु संयंत्रों की सुरक्षा का चाहे कितना भी दावा किया जाए, वे पूरी तरह सुरक्षित नहीं कहे जा सकते।
- ऐसे में भारत में अधिक परमाणु ऊर्जा संयंत्र स्थापित करने के पीछे दिये जा रहे तर्क हास्यास्पद हैं।
- परमाणु ऊर्जा संयत्रों को प्राकृतिक आपदा के कारक के रूप में भी देखा जा सकता है।
- जादूगुड़ा, तारापुर, रावतभाटा और कलपक्कम आदि जहाँ भारत के मौजूदा परमाणु ऊर्जा संयंत्र हैं, वहाँ के नज़दीकी गाँवों और बस्तियों में रहने वाले लोगों में अनेक रेडियोधर्मिता से जुड़ी बीमारियों का फैलना साबित करता है कि परमाणु विकिरण का असर काफी खतरनाक हैं।
- आमतौर पर लोग सोचते हैं कि परमाणु ऊर्जा सिर्फ बम के रूप में ही हानिकारक होती है अन्यथा नहीं। लेकिन सच तो यह है कि परमाणु बम में रेडियोएक्टिव पदार्थ कुछ किलो ही होता है और विस्फोट की वजह से उसका नुकसान एक बार में ही काफी ज्यादा होता है, जबकि एक रिएक्टर में रेडियोधर्मी परमाणु ईंधन कई टन की मात्रा में होता है। अगर वह किसी भी कारण से बाहरी वातावरण के संपर्क में आ जाता है तो उससे रेडियोधर्मिता का खतरा बम से भी कई गुना ज्यादा बढ़ जाता है।
- जहाँ तक परमाणु ऊर्जा की लागत का सवाल है, तो इसके लिये आवश्यक रिएक्टर तो बहुत महँगे हैं ही और परमाणु ऊर्जा के तकनीकी मामले में हम विदेशों पर आश्रित हैं।
- किसी भी परमाणु संयंत्र की लागत का अनुमान करते समय न तो उससे निकलने वाले परमाणु कचरे के निपटान की लागत को शामिल किया जाता है और न ही परमाणु संयंत्र की डी-कमीशनिंग (विध्वंस) में आने वाले व्यय को शामिल करते हैं।
- यदि कोई दुर्घटना न भी हो तो भी एक अवस्था के बाद परमाणु संयंत्रों को बंद करना होता है और वैसी स्थिति में परमाणु संयंत्र का विध्वंस तथा उसके रेडियोएक्टिव कचरे को डंप करना अधिक खर्चीला होता है। और यदि अगर परमाणु दुर्घटना हो जाए तो उसके खर्च का अनुमान लगाना ही बहुत मुश्किल है। वर्ष 1986 में चेर्नोबिल की दुर्घटना से 4000 वर्ग किमी. का क्षेत्रफल हज़ारों वर्षों तक रहने योग्य नहीं रहा। वहाँ हुए परमाणु ईंधन के रिसाव से करीब सवा लाख वर्ग किमी ज़मीन परमाणु विकिरण के भीषण असर से ग्रस्त है।
- फुकुशिमा के हादसे के बाद से दुनिया के तमाम देशों ने अपने परमाणु कार्यक्रमों को स्थगित कर उन पर पुनर्विचार करना शुरू किया है। जर्मनी में तो वहाँ की सरकार ने परमाणु ऊर्जा को शून्य पर लाने की योजना बनाने की कार्रवाई भी शुरू कर दी है। खुद अमेरिका में 1976 के बाद से कोई भी नया परमाणु संयंत्र नहीं लगाया गया है।
- परमाणु ईंधन को ठंडा रखने के लिये बहुत ज्यादा मात्रा में पानी उस पर लगातार छोड़ा जाता है। यह पानी परमाणु प्रदूषित हो जाता है और इसका प्रभाव भी जानलेवा हो सकता है।

स्वच्छ ऊर्जा विकल्प

1970 के दशक में पर्यावरणविदों ने पारंपरिक ईंधन स्रोतों से हमारी निर्भरता को कम करने और उसके प्रतिस्थापन के रूप में नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देना शुरू किया। 21वीं सदी की शुरुआत में दुनिया की ऊर्जा खपत का 20 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा से प्राप्त होने लगा था। ध्यातव्य है कि पिछले कुछ वर्षों में भारत ने भी अपनी बिजली उत्पादन क्षमता में काफी वृद्धि किया है। विगत तीन वर्षों में नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा में लगभग 25 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।

नोट :

क्या है नवीकरणीय ऊर्जा ?

- यह ऐसी ऊर्जा है जो प्राकृतिक स्रोतों पर निर्भर करती है। इसमें सौर ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, जल शक्ति ऊर्जा और बायोमास के विभिन्न प्रकारों को शामिल किया जाता है।
- उल्लेखनीय है कि यह कभी भी समाप्त नहीं हो सकती है और इसे लगातार नवीनीकृत किया जा सकता है।
- नवीकरणीय ऊर्जा संसाधन, ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों (जो कि दुनिया के काफी सीमित क्षेत्र में मौजूद हैं) की अपेक्षा काफी विस्तृत भू-भाग में फैले हुए हैं और ये सभी देशों को काफी आसानी से उपलब्ध हो सकते हैं।
- ये न केवल पर्यावरण के अनुकूल हैं बल्कि इनके साथ कई प्रकार के आर्थिक लाभ भी जुड़े होते हैं।

नवीकरणीय ऊर्जा विकल्प बेहतर क्यों हैं ?

- नवीकरणीय ऊर्जा के उपर्युक्त विकल्पों और उनकी अक्षय व पुन:निर्मित क्षमताओं ने परंपरागत ऊर्जा स्रोतों से स्वयं को बेहतर साबित किया है।
- हम सभी जानते हैं कि वर्षों से दुनिया जिन ऊर्जा स्रोतों को जीवाश्म ईंधन के रूप में उपयोग करती आ रही है, वे एक सीमित संसाधन हैं। जहाँ एक ओर उनके विकास में लाखों साल लग जाते हैं, वहीं उनके अत्यधिक दोहन के कारण समय के साथ-साथ वे कम होते जाएंगे। एक और सबसे बड़ी बात यह है कि नवीकरणीय ऊर्जा विकल्पों का जीवाश्म ईंधन की तुलना में पर्यावरण पर बहुत कम दुष्प्रभाव पड़ता है, क्योंकि इनसे ग्रीन हाउस गैसें नहीं निकलती हैं।
- इसके अलावा जीवाश्म ईंधन प्राप्त करने के लिये प्राय: पृथ्वी पर उन स्थानों में खनन अथवा ड्रिलिंग करने की आवश्यकता होती है जो पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील होते हैं।
- नवीकरणीय ऊर्जा विकल्प पूर्णतया नि:शुल्क तथा प्रचुरता में सरलता से उपलब्ध हैं। इन पर जीवाश्मीय ईंधनों, जैसे-तेल, गैस या नाभिक ईंधनों जैसे यूरेनियम आदि की तरह किसी भी देश या वाणिज्यिक प्रतिष्ठान का एकाधिकार नहीं होता है। अत: इनकी आपूर्ति भी निर्बाध होती रहती है और नवीकरणीय ऊर्जा मूल्यप्रभावी बन जाती है।
- इस तरह नवीकरणीय ऊर्जा विकल्प विशुद्ध रूप से सरल, सर्वव्यापी और पूरी दुनिया में आसानी से उपलब्ध हैं, जिसमें ग्रामीण और सुदूर क्षेत्र के वे इलाके भी शामिल हैं जहाँ अभी तक बिजली भी नहीं पहुँच पाई है।

भारत में नवीकरणीय ऊर्जा की स्थिति

- पृथ्वी को स्वच्छ रखने की ज़िम्मेदारी को ध्यान में रखते हुए भारत ने संकल्प लिया है कि वर्ष 2030 तक बिजली उत्पादन की हमारी 40 फीसदी स्थापित क्षमता ऊर्जा के स्वच्छ स्रोतों पर आधारित होगी।
- साथ ही यह भी निर्धारित किया गया है कि वर्ष 2022 तक 175 गीगावाट नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता स्थापित की जाएगी। इसमें सौर ऊर्जा से 100 गीगावाट, पवन ऊर्जा से 60 गीगावाट, बायोमास से 10 गीगावाट और छोटी पनबिजली परियोजनाओं से 5 गीगावाट क्षमता प्राप्त करना शामिल है।
- इस महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य को हासिल करने के साथ ही भारत विश्व के सबसे बड़े स्वच्छ ऊर्जा उत्पादकों की कतार में शामिल हो जाएगा। यहाँ तक कि वह कई विकसित देशों से भी आगे निकल जाएगा।
- वर्ष 2018 में देश की कुल स्थापित क्षमता में तापीय ऊर्जा की 63.84 फीसदी, नाभिकीय ऊर्जा की 1.95 फीसदी, पनबिजली की 13.09 फीसदी और नवीकरणीय ऊर्जा की 21.12 फीसदी हिस्सेदारी थी।
- भारत दुनिया का एकमात्र ऐसा देश है जहाँ नवीकरणीय ऊर्जा के विकास के लिये अलग मंत्रालय गठित है और 'राष्ट्रीय पवन-सौर स्वच्छता नीति-2018' के अनुसार, पवन-सौर ऊर्जा उत्पादन के वर्तमान लक्ष्य 80 गीगावाट को वर्ष 2022 तक दोगुने से भी ज्यादा अर्थात 225 गीगावाट तक पहुँचाने का लक्ष्य है

नवीकरणीय ऊर्जा विकल्प लोकप्रिय क्यों नहीं हैं ?

- नवीकरणीय ऊर्जा विकल्पों की प्रौद्योगिकियों का निरंतर विकास हो रहा है, फिर भी वे लोकप्रिय नहीं बन पा रहे हैं। सौर पैनलों, पवन टर्बाइनों और नवीकरणीय ऊर्जा के अन्य स्रोतों का उपयोग मुख्य रूप से बिजली का उत्पादन करने में किया जा रहा है। परंतु इन सभी विकल्पों में एक उभय-निष्ठ तथ्य जो उभरकर आता है, वह है इनका अधिक ख़र्चीला होना, क्योंकि इनके उत्पादन में भारी निवेश की आवश्यकता होती है।

नोट :

- साथ ही लोगों में नवीकरणीय ऊर्जा को लेकर जागरूकता का अभाव है, जिससे उपलब्ध क्षमता के बावजूद भी नवीकरणीय ऊर्जा का दोहन काफी कम है।
- लोग इन विकल्पों पर विश्वास नहीं कर पा रहे हैं क्योंकि बरसों से परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के उपयोग करने की आदत पड़ गई है और उनसे भावनात्मक जुड़ाव हो गया है।
- चूँकि नवीकरणीय ऊर्जा की मात्रा में अचानक परिवर्तन हो सकता है, अत: यह भी संभव है कि मांग या आवश्यकता के समय इसकी उपलब्धता उत्पादन को प्रभावित करे। अत: इसकी विश्वसनीय आपूर्ति न होने के कारण नवीकरणीय ऊर्जा की व्यावहारिक सुविधा को लेकर आशंका बनी रहती है। जैसा कि किसी भी नई तकनीक की शुरूआत के साथ होता है, वही नवीकरणीय ऊर्जा विकल्पों के साथ भी हो रहा है।
- इनकी वास्तविक क्षमताओं और नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोत के तौर पर इनकी विश्वसनीयता को लेकर प्रश्नचिन्ह लगना स्वाभाविक है।

नवीकरणीय ऊर्जा ही भविष्य का एकमात्र विकल्प क्यों है?

- पिछले कुछ दशकों में विश्व की निरंतर बढ़ रही औसत जनसंख्या, आधुनिक तकनीकी विकास और विद्युतीकरण की बढ़ती दर के कारण विश्व स्तर पर ऊर्जा की मांग भी उतनी ही तेजी से बढ़ी है। पर्यावरण विशेषज्ञों का विश्वास है कि इस मांग को नवीकरणीय ऊर्जा के विभिन्न विकल्पों के माध्यम से पूरा किया जा सकता है।
- लोगों के बेहतर स्वास्थ्य, कोयले जैसे पारंपरिक ईंधन के बढ़ते खर्च पर नियंत्रण, विश्वव्यापी ऊष्णता तथा अम्लीय वर्षा और कार्बन - डाइऑक्साइड के उत्सर्जन को कम करके पर्यावरण की सुरक्षा के लिये अब नवीकरणीय ऊर्जा ही भविष्य का एकमात्र विकल्प रह गया है।

आगे की राह

- विश्व में सौर ऊर्जा से लेकर समुद्र तटीय क्षेत्रों में पवन और जल ऊर्जा के विस्तार के साथ-साथ भू-तापीय ऊर्जा से विद्युत उत्पादन द्वारा दुनिया की अधिकतम बिजली की ज़रूरत को पूरा किया जा सकता है।
- नवीकरणीय ऊर्जा अपनाने से वैश्विक स्तर पर पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार से वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है। इसके लिये नवीकरणीय ऊर्जा के बड़े पैमाने पर उपयोग के साथ-साथ इसकी भंडारण क्षमता के सशक्तीकरण की भी आवश्यकता है।
- नवीकरणीय ऊर्जा को स्वेच्छा से अपनाने के लिये लोगों को भावनात्मक और सामाजिक तौर पर जुड़ना होगा। इनकी विश्वसनीयता को बढ़ाने के लिये नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों पर अधिक नियंत्रण और इनका बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित करना होगा।

जलवायु परिवर्तन: चुनौतियाँ और समाधान

संदर्भ

वर्ष 2100 तक भारत समेत अमेरिका, कनाडा, जापान, न्यूजीलैंड, रूस और ब्रिटेन जैसे सभी देशों की अर्थव्यवस्थाएँ जलवायु परिवर्तन के असर से अछूती नहीं रहेंगी। कुछ समय पूर्व कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की एक शोध टीम ने 174 देशों के वर्ष 1960 के बाद जलवायु संबंधी आँकड़ों का अध्ययन किया है। अध्ययन के अनुसार, पृथ्वी पर 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान की स्थिति में विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं के साथ-साथ मानव के अस्तित्व पर भी खतरा उत्पन्न हो जाएगा। इसके अतिरिक्त पिछली सदी से अब तक समुद्र के जल स्तर में भी लगभग 8 इंच की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। वहीँ संयुक्त राष्ट्र आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यालय (UN Office for Disaster Risk Reduction-UNDRR) के अनुसार, भारत को जलवायु परिवर्तन के कारण हुई प्राकृतिक आपदाओं से वर्ष 1998-2017 के बीच की समयावधि के दौरान लगभग 8,000 करोड़ डॉलर की आर्थिक क्षति का सामना करना पड़ा है। यदि पूरी दुनिया की बात की जाए तो इसी समयावधि में तकरीबन 3 लाख करोड़ डॉलर की क्षति हुई है। हाल ही में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क के तत्वावधान में आयोजित COP-25 सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिये विभिन्न दिशा-निर्देश ज़ारी किये गए।

इस आलेख में जलवायु परिवर्तन, जलवायु परिवर्तन के कारण, उससे उत्पन्न चुनौतियों पर विश्लेषण किया जाएगा। इसके साथ ही जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने के उपायों पर भी विचार-विमर्श किया जाएगा।

नोट :

क्या है जलवायु परिवर्तन ?

- जलवायु परिवर्तन को समझने से पूर्व यह समझ लेना आवश्यक है कि जलवायु क्या होता है ? सामान्यत: जलवायु का आशय किसी दिये गए क्षेत्र में लंबे समय तक औसत मौसम से होता है।
- अत: जब किसी क्षेत्र विशेष के औसत मौसम में परिवर्तन आता है तो उसे जलवायु परिवर्तन (Climate Change) कहते हैं।
- जलवायु परिवर्तन को किसी एक स्थान विशेष में भी महसूस किया जा सकता है एवं संपूर्ण विश्व में भी। यदि वर्तमान संदर्भ में बात करें तो यह इसका प्रभाव लगभग संपूर्ण विश्व में देखने को मिल रहा है।
- पृथ्वी का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक बताते हैं कि पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है। पृथ्वी का तापमान बीते 100 वर्षों में 1 डिग्री फारेनहाइट तक बढ़ गया है। पृथ्वी के तापमान में यह परिवर्तन संख्या की दृष्टि से काफी कम हो सकता है, परंतु इस प्रकार के किसी भी परिवर्तन का मानव जाति पर बड़ा असर हो सकता है।
- जलवायु परिवर्तन के कुछ प्रभावों को वर्तमान में भी महसूस किया जा सकता है। पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होने से हिमनद पिघल रहे हैं और महासागरों का जल स्तर बढ़ता जा रहा, परिणामस्वरूप प्राकृतिक आपदाओं और कुछ द्वीपों के डूबने का खतरा भी बढ़ गया है।

जलवायु परिवर्तन के कारण

जलवायु परिवर्तन के कारणों का बेहतर विश्लेषण करने के लिये इसे दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

1. प्राकृतिक गतिविधियाँ
2. मानवीय गतिविधियाँ

प्राकृतिक गतिविधियाँ

- महाद्वीपीय संवहन- सृष्टि के प्रारम्भ में सभी महाद्वीप एक ही बड़े धरातल के रूप में पृथ्वी पर विद्यमान थे, किंतु सागरों के कारण धीरे-धीरे वे एक दूसरे से दूर होते गए और आज उनके अलग-अलग खंड बन गए हैं। महाद्वीपीय संवहन अर्थात महाद्वीपों का खिसकना अब भी जारी है जिसकी वजह से समुद्री धाराएँ तथा हवाएँ प्रभावित होती हैं और इनका सीधा प्रभाव पृथ्वी की जलवायु पर पड़ता है। हिमालय पर्वत की श्रृंखला प्रतिवर्ष एक मिलीमीटर की दर से ऊँची हो रही है, जिसका मुख्य कारण भारतीय उपखंड का धीरे-धीरे एशियाई महाद्वीप की ओर खिसकना माना जाता है।
- ज्वालामुखी विस्फोट- ज्वालामुखी विस्फोट होने पर बड़ी मात्रा में विभिन्न गैसें जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, जलवाष्प आदि तथा धूलकण वायुमंडल में उत्सर्जित होते हैं, जो कि वायुमंडल की ऊपरी परत, समतापमंडल में जाकर फैल जाते हैं तथा पृथ्वी पर आने वाले सूर्य प्रकाश की मात्रा घटा देते हैं। जिससे पृथ्वी का तापमान कम हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार, प्रतिवर्ष लगभग 100 लाख टन कार्बन डाइऑक्साइड गैस ज्वालामुखी विस्फोट द्वारा वायुमंडल में फैल जाती है। वर्ष 1816 में इंग्लैंड, अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोपीय देशों में ग्रीष्म ऋतु में जो अचानक ठंड आई थी, जिसे "Killing Summer Frost" कहा गया, उसका कारण वर्ष 1815 में इंडोनेशिया में हुए अनेक ज्वालामुखी विस्फोटों को माना जाता है।
- पृथ्वी का झुकाव- पृथ्वी के झुकाव के कारण ऋतुओं में परिवर्तन होता है। अधिक झुकाव अर्थात अधिक गर्मी तथा अधिक सर्दी और कम झुकाव अर्थात कम गर्मी तथा कम सर्दी का मौसम। इस प्रकार पृथ्वी के झुकाव के कारण जलवायु प्रभावित होती है।
- समुद्री धाराएँ- जलवायु को संतुलित रखने में सागरों का बड़ा योगदान रहता है। पृथ्वी के 71% भाग में समुद्र व्याप्त है, जो कि वातावरण तथा ज़मीन की तुलना में दोगुना सूर्य का प्रकाश का अवशोषण करते हैं। सागरों को कार्बन डाइऑक्साइड का सबसे बड़ा सिंक कहा जाता है। वायुमंडल की अपेक्षा 50 गुना अधिक कार्बन डाइऑक्साइड गैस समुद्र में होती है। समुद्री बहाव में बदलाव आने से जलवायु प्रभावित होती है।

मानवीय गतिविधियाँ

- शहरीकरण- उन्नीसवीं सदी में हुई औद्योगिक क्रांति की ओर सभी का ध्यान आकर्षित हुआ। रोज़गार पाने के लिये गाँवों में स्थित आबादी शहरों की तरफ प्रस्थान करने लगी और शहरों का आकार दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा। मुंबई, कोलकाता, दिल्ली, चेन्नई जैसे महानगरों में उनकी क्षमता से कई गुना अधिक आबादी निवास कर रही है, जिससे शहरों के संसाधनों का असीमित दोहन हो रहा है। जैसे-जैसे शहर बढ़ रहे हैं, वहाँ पर उपलब्ध भू-भाग दिन-प्रतिदिन ऊँची-ऊँची इमारतों से ढँकता जा रहा है, जिससे उस स्थान की जल संवर्धन क्षमता कम हो रही है तथा बारिश के पानी से प्राप्त होने वाली शीतलता में भी कमी हो रही है, जिससे वहाँ के पर्यावरण तथा जलवायु पर निरंतर प्रभाव पड़ रहा है।

नोट :

- औद्योगिकीकरण- जलवायु परिवर्तन में औद्योगिकीकरण की बड़ी भूमिका है। विभिन्न प्रकार की मिलें वातावरण में सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड, कार्बन डाइऑक्साइड तथा अनेक प्रकार की अन्य ज़हरीली गैसें और धूलकण हवा में छोड़ती हैं, जो वायुमंडल में काफी वर्षों तक विद्यमान रहती है। यह ग्रीन हाउस प्रभाव, ओज़ोन परत का क्षरण तथा भूमंडलीय तापमान में वृद्धि जैसी समस्याओं का कारण बनते हैं। वायु, जल एवं भूमि प्रदूषण भी औद्योगिकीकरण की ही देन हैं।
- वनोन्मूलन- निरंतर बढ़ती हुई आबादी की ज़रूरतों को पूरा करने के लिये वृक्ष काटे जा रहे हैं। आवास, खेती, लकड़ी और अन्य वन संसाधनों की चाह में वनों की अंधाधुंध कटाई हो रही है, जिससे पृथ्वी का हरित क्षेत्र तेजी से घट रहा है और साथ ही जलवायु के परिवर्तन में तेजी आ रही है।
- रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों का प्रयोग- पिछले कुछ दशकों में रासायनिक उर्वरकों की माँग इतनी तेजी से बढ़ी है कि आज विश्व भर में 1000 से भी अधिक प्रकार की कीटनाशी उपलब्ध हैं। जैसे-जैसे इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है वैसे-वैसे वायु, जल तथा भूमि में इनकी मात्रा भी बढ़ती जा रही है, जो कि पर्यावरण को निरंतर प्रदूषित कर घातक स्थिति में पहुँचा रहे हैं।

जलवायु परिवर्तन से प्रभाव

- वर्षा पर प्रभाव- जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप दुनिया के मानसूनी क्षेत्रों में वर्षा में वृद्धि होगी जिससे बाढ़, भूस्खलन तथा भूमि अपरदन जैसी समस्याएँ पैदा होंगी। जल की गुणवत्ता में गिरावट आएगी तथा पीने योग्य जल की आपूर्ति पर गंभीर प्रभाव पड़ेंगे। जहाँ तक भारत का प्रश्न है, मध्य तथा उत्तरी भारत में कम वर्षा होगी जबकि इसके विपरीत देश के पूर्वोत्तर तथा दक्षिण-पश्चिमी राज्यों में अधिक वर्षा होगी। परिणामस्वरूप वर्षा जल की कमी से मध्य तथा उत्तरी भारत में सूखे जैसी स्थिति होगी जबकि पूर्वोत्तर तथा दक्षिण पश्चिमी राज्यों में अधिक वर्षा के कारण बाढ़ जैसी समस्या होगी।
- समुद्री जल स्तर पर प्रभाव-जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप ग्लेशियरों के पिघलने के कारण विश्व का औसत समुद्री जल स्तर इक्कीसवीं शताब्दी के अंत तक 9 से 88 सेमी. तक बढ़ने की संभावना है, जिससे दुनिया की आधी से अधिक आबादी जो समुद्र से 60 कि.मी. की दूरी पर रहती है, पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप भारत के उड़ीसा, आँध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल कर्नाटक, महाराष्ट्र, गोवा, गुजरात और पश्चिम बंगाल राज्यों के तटीय क्षेत्र जलमग्नता के शिकार होंगे। परिणामस्वरूप आसपास के गाँवों व शहरों में 10 करोड़ से भी अधिक लोग विस्थापित होंगे जबकि समुद्र में जल स्तर की वृद्धि के परिणामस्वरूप भारत के लक्षद्वीप तथा अंडमान निकोबार द्वीपों का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। समुद्र का जल स्तर बढ़ने से मीठे जल के स्रोत दूषित होंगे परिणामस्वरूप पीने के पानी की समस्या होगी।
- कृषि पर प्रभाव- जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कृषि पैदावार पर पड़ेगा। संयुक्त राज्य अमरीका में फसलों की उत्पादकता में कमी आएगी जबकि दूसरी तरफ उत्तरी तथा पूर्वी अफ्रीका, मध्य पूर्व देशों, भारत, पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया तथा मैक्सिको में गर्मी तथा नमी के कारण फसलों की उत्पादकता में बढ़ोत्तरी होगी। वर्षा जल की उपलब्धता के आधार पर धान के क्षेत्रफल में वृद्धि होगी। भारत में जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप गन्ना, मक्का, ज्वार, बाजरा तथा रागी जैसी फसलों की उत्पादकता दर में वृद्धि होगी जबकि इसके विपरीत मुख्य फसलों जैसे गेहूँ, धान तथा जौ की उपज में गिरावट दर्ज होगी। आलू के उत्पादन में भी अभूतपूर्व गिरावट दर्ज होगी।
- जैव विविधता पर प्रभाव- जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जैवविविधता पर भी पड़ेगा। किसी भी प्रजाति को अनुकूलन हेतु समय की आवश्यकता होती है। वातावरण में अचानक परिवर्तन से अनुकूलन के प्रभाव में उसकी मृत्यु हो जाएगी। जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभाव समुद्र की तटीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली दलदली क्षेत्र की वनस्पतियों पर पड़ेगा जो तट को स्थिरता प्रदान करने के साथ-साथ समुद्री जीवों के प्रजनन का आदर्श स्थल भी होती हैं। दलदली वन जिन्हें ज्वारीय वन भी कहा जाता है, तटीय क्षेत्रों को समुद्री तूफानों में रक्षा करने का भी कार्य करते हैं। जैव-विविधता क्षरण के परिणामस्वरूप पारिस्थितिक असंतुलन का खतरा बढ़ेगा।
- मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव- जलवायु परिवर्तन का प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर भी पड़ेगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु में उष्णता के कारण श्वास तथा हृदय संबंधी बीमारियों में वृद्धि होगी। जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप न सिर्फ रोगाणुओं में बढ़ोत्तरी होगी अपितु इनकी नई प्रजातियों की भी उत्पत्ति होगी जिसके परिणामस्वरूप फसलों की उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। मानव स्वास्थ्य पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के चलते एक बड़ी आबादी विस्थापित होगी जो 'पर्यावरणीय शरणार्थी' कहलाएगी। इससे स्वास्थ्य संबंधी और भी समस्याएँ पैदा होंगी।

नोट :

जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु वैश्विक प्रयास

- जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल (IPCC) का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन, इसके प्रभाव और भविष्य के संभावित जोखिमों के साथ-साथ अनुकूलन तथा जलवायु परिवर्तन को कम करने हेतु नीति निर्माताओं को रणनीति बनाने के लिये नियमित वैज्ञानिक आकलन प्रदान करना है। IPCC आकलन सभी स्तरों पर सरकारों को वैज्ञानिक सूचनाएँ प्रदान करता है जिसका इस्तेमाल जलवायु के प्रति उदार नीति विकसित करने के लिये किया जा सकता है।
- संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन फ्रेमवर्क सम्मेलन (UNFCCC) एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। जिसका उद्देश्य वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। वर्ष 1995 से लगातार UNFCCC की वार्षिक बैठकों का आयोजन किया जाता है। इसके तहत ही वर्ष 1997 में बहुचर्चित क्योटो समझौता (Kyoto Protocol) हुआ और विकसित देशों (एनेक्स-1 में शामिल देश) द्वारा ग्रीनहाउस गैसों को नियंत्रित करने के लिये लक्ष्य तय किया गया। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत 40 औद्योगिक देशों को अलग सूची एनेक्स-1 में रखा गया है।
- पेरिस समझौता जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिये एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य के साथ संपन्न 32 पृष्ठों एवं 29 लेखों वाले पेरिस समझौते को ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिये एक ऐतिहासिक समझौते के रूप में मान्यता प्राप्त है।
- COP-25 सम्मेलन में लगभग 200 देशों के प्रतिनिधियों ने उन गरीब देशों की मदद करने के लिये एक घोषणा का समर्थन किया जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से जूझ रहे हैं। इसमें पेरिस जलवायु परिवर्तन समझौते के लक्ष्यों के अनुरूप पृथ्वी पर वैश्विक तापन के लिये उत्तरदायी ग्रीनहाउस गैसों में कटौती के लिये "तत्काल आवश्यकता" का आह्वान किया गया।

जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु भारत के प्रयास

- जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना का शुभारंभ वर्ष 2008 में किया गया था। इसका उद्देश्य जनता के प्रतिनिधियों, सरकार की विभिन्न एजेंसियों, वैज्ञानिकों, उद्योग और समुदायों को जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न खतरे और इससे मुकाबला करने के उपायों के बारे में जागरूक करना है। इस कार्ययोजना में 8 मिशन शामिल हैं-
  - राष्ट्रीय सौर मिशन
  - विकसित ऊर्जा दक्षता के लिये राष्ट्रीय मिशन
  - सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन
  - राष्ट्रीय जल मिशन
  - सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन
  - हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन
  - सुस्थिर कृषि हेतु राष्ट्रीय मिशन
  - जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन
- अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन सौर ऊर्जा से संपन्न देशों का एक संधि आधारित अंतर-सरकारी संगठन (Treaty-Based International Intergovernmental Organization) है। अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की शुरुआत भारत और फ्रांस ने 30 नवंबर, 2015 को पेरिस जलवायु सम्मेलन के दौरान की थी। ISA के प्रमुख उद्देश्यों में वैश्विक स्तर पर 1000 गीगावाट से अधिक सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त करना और वर्ष 2030 तक सौर ऊर्जा में निवेश के लिये लगभग 1000 बिलियन डॉलर की राशि को जुटाना शामिल है।

नोट :

सामाजिक न्याय

घरेलू हिंसा: कारण और समाधान

संदर्भ

"केवल एक थप्पड़, लेकिन नहीं मार सकता" यह वाक्य किसी फिल्म का मात्र एक डायलॉग ही नहीं बल्कि विभिन्न समाजों की बदरंग हकीकत को भी उजागर करता है। घरेलू हिंसा दुनिया के लगभग हर समाज में मौजूद है। इस शब्द को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है जिनमें पति या पत्नी, बच्चों या बुजुर्गों तथा ट्रांसजेंडरों के खिलाफ हिंसा के कुछ उदाहरण प्रत्यक्ष रूप से सामने हैं। पीड़ित के खिलाफ हमलावर द्वारा अपनाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में शारीरिक शोषण, भावनात्मक शोषण, मनोवैज्ञानिक दुर्व्यवहार या वंचितता, आर्थिक शोषण, गाली-गलौज, ताना मारना आदि शामिल हैं। घरेलू हिंसा न केवल विकासशील या अल्प विकसित देशों की समस्या है बल्कि यह विकसित देशों में भी बहुत प्रचलित है। घरेलू हिंसा हमारे छद्म सभ्य समाज का प्रतिबिंब है।

सभ्य समाज में हिंसा का कोई स्थान नहीं है। लेकिन प्रत्येक वर्ष घरेलू हिंसा के जितने मामले सामने आते हैं, वे एक चिंतनीय स्थिति को रेखांकित करते हैं। हमारे देश में घरों के बंद दरवाज़ों के पीछे लोगों को प्रताड़ित किया जा रहा है। यह कार्य ग्रामीण क्षेत्रों, कस्बों, शहरों और महानगरों में भी हो रहा है। घरेलू हिंसा सभी सामाजिक वर्गों, लिंग, नस्ल और आयु समूहों को पार कर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के लिये एक विरासत बनती जा रही है। इस आलेख में घरेलू हिंसा के कारणों, समाज और बच्चों पर पड़ने वाले प्रभाव तथा समस्या समाधान के उपाय तलाशने का प्रयास किया जाएगा।

घरेलू हिंसा क्या है ?

- घरेलू हिंसा अर्थात् कोई भी ऐसा कार्य जो किसी महिला एवं बच्चे (18 वर्ष से कम आयु के बालक एवं बालिका) के स्वास्थ्य, सुरक्षा, जीवन पर संकट, आर्थिक क्षति और ऐसी क्षति जो असहनीय हो तथा जिससे महिला व बच्चे को दु:ख एवं अपमान सहन करना पड़े, इन सभी को घरेलू हिंसा के दायरे में शामिल किया जाता है।
- घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत प्रताड़ित महिला किसी भी वयस्क पुरुष को अभियोजित कर सकती है अर्थात उसके विरुद्ध प्रकरण दर्ज करा सकती है।

भारत में घरेलू हिंसा के विभिन्न रूप

भारत में घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अनुसार, घरेलू हिंसा के पीड़ित के रूप में महिलाओं के किसी भी रूप तथा 18 वर्ष से कम आयु के बालक एवं बालिका को संरक्षित किया गया है। भारत में घरेलू हिंसा के विभिन्न रूप निम्नलिखित हैं-

- महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा- किसी महिला को शारीरिक पीड़ा देना जैसे- मारपीट करना, धकेलना, ठोकर मारना, किसी वस्तु से मारना या किसी अन्य तरीके से महिला को शारीरिक पीड़ा देना,महिला को अश्लील साहित्य या अश्लील तस्वीरों को देखने के लिये विवश करना, बलात्कार करना, दुर्व्यवहार करना, अपमानित करना, महिला की पारिवारिक और सामाजिक प्रतिष्ठा को आहत करना, किसी महिला या लड़की को अपमानित करना, उसके चरित्र पर दोषारोपण करना, उसकी शादी इच्छा के विरुद्ध करना, आत्महत्या की धमकी देना, मौखिक दुर्व्यवहार करना आदि। यूनाइटेड नेशंस पॉपुलेशन फंड रिपोर्ट के अनुसार, लगभग दो-तिहाई विवाहित भारतीय महिलाएँ घरेलू हिंसा की शिकार हैं और भारत में 15-49 आयुवर्ग की 70% विवाहित महिलाएँ पिटाई, बलात्कार या ज़बरन यौन शोषण का शिकार हैं।
- पुरुषों के विरुद्ध घरेलू हिंसा- इस तथ्य पर कोई प्रश्नचिन्ह नहीं है कि महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा एक गंभीर और बड़ी समस्या है, लेकिन भारत में पुरुषों के खिलाफ घरेलू हिंसा भी धीरे-धीरे बढ़ रही है। समाज में पुरुषों का वर्चस्व यह विश्वास दिलाता है कि वे घरेलू हिंसा के प्रति संवेदनशील नहीं हैं। हाल ही में चंडीगढ़ और शिमला में सैकड़ों पुरूष इकट्ठा हुए, जिन्होंने अपनी पत्नियों और परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा उनके खिलाफ की जाने वाली घरेलू हिंसा से बचाव और सुरक्षा की गुहार लगाई थी।

नोट :

- बच्चों के विरुद्ध घरेलू हिंसा- हमारे समाज में बच्चों और किशोरों को भी घरेलू हिंसा का सामना करना पड़ता है। वास्तव में हिंसा का यह रूप महिलाओं के खिलाफ हिंसा के बाद रिपोर्ट किये गए मामलों की संख्या में दूसरा है। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों तथा भारत में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के परिवारों में इसके स्वरूप में बहुत भिन्नता है। शहरी क्षेत्रों में यह अधिक निजी है और घरों की चार दीवारों के भीतर छिपा हुआ है।
- बुजुर्गों के विरुद्ध घरेलू हिंसा- घरेलू हिंसा के इस स्वरूप से तात्पर्य उस हिंसा से है जो घर के बूढ़े लोगों के साथ अपने बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा की जाती है। घरेलू हिंसा की यह श्रेणी भारत में अत्यधिक संवेदनशील होती जा रही है। इसमें बुजुर्गों के साथ मार-पीट करना, उनसे अत्यधिक घरेलू काम कराना, भोजन आदि न देना तथा उन्हें शेष पारिवारिक सदस्यों से अलग रखना शामिल है।

घरेलू हिंसा के कारण

- महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा का मुख्य कारण मूर्खतापूर्ण मानसिकता है कि महिलाएँ पुरुषों की तुलना में शारीरिक और भावनात्मक रूप से कमजोर होती हैं।
- प्राप्त दहेज़ से असंतुष्टि, साथी के साथ बहस करना, उसके साथ यौन संबंध बनाने से इनकार करना, बच्चों की उपेक्षा करना, साथी को बताए बिना घर से बाहर जाना, स्वादिष्ट खाना न बनाना शामिल है।
- विवाहेत्तर संबंधों में लिप्त होना, ससुराल वालों की देखभाल न करना, कुछ मामलों में महिलाओं में बाँझपन भी परिवार के सदस्यों द्वारा उन पर हमले का कारण बनता है।
- पुरुषों के प्रति घरेलू हिंसा के कारणों में पत्नियों के निर्देशों का पालन न करना, 'पुरुषों की अपर्याप्त कमाई, विवाहेत्तर संबंध, घरेलू गतिविधियों में पत्नी की मदद नहीं करना है' बच्चों की उचित देखभाल न करना, पति-पत्नी के परिवार को गाली देना, पुरुषों का बाँझपन आदि कारण हैं।
- बच्चों के साथ घरेलू हिंसा के कारणों में माता-पिता की सलाह और आदेशों की अवहेलना, पढ़ाई में खराब प्रदर्शन या पड़ोस के अन्य बच्चों के साथ बराबरी पर नहीं होना, माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ बहस करना आदि हो सकते हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों के साथ घरेलू हिंसा के कारणों में बाल श्रम, शारीरिक शोषण या पारिवारिक परंपराओं का पालन न करने के लिये उत्पीड़न, उन्हें घर पर रहने के लिये मजबूर करना और उन्हें स्कूल जाने की अनुमति न देना आदि हो सकते हैं।
- गरीब परिवारों में पैसे पाने के लिये माता-पिता द्वारा मंदबुद्धि बच्चों के शरीर के अंगों को बेचने की ख़बरें मिली हैं। यह घटना बच्चों के खिलाफ क्रूरता और हिंसा की उच्चता को दर्शाता है।
- वृद्ध लोगों के खिलाफ घरेलू हिंसा के मुख्य कारणों में बूढ़े माता-पिता के ख़र्चों को झेलने में बच्चे झिझकते हैं। वे अपने माता-पिता को भावनात्मक रूप से पीड़ित करते हैं और उनसे छुटकारा पाने के लिये उनकी पिटाई करते हैं।
- विभिन्न अवसरों पर परिवार के सदस्यों की इच्छा के विरुद्ध कार्य करने के लिये उन्हें पीटा जाता है। बहुत ही सामान्य कारणों में से एक संपत्ति हथियाने के लिये दी गई यातना भी शामिल है।

घरेलू हिंसा के प्रभाव

- यदि किसी व्यक्ति ने अपने जीवन में घरेलू हिंसा का सामना किया है तो उसके लिये इस डर से बाहर आ पाना अत्यधिक कठिन होता है। अनवरत रूप से घरेलू हिंसा का शिकार होने के बाद व्यक्ति की सोच में नकारात्मकता हावी हो जाती है। उस व्यक्ति को स्थिर जीवनशैली की मुख्यधारा में लौटने में कई वर्ष लग जाते हैं।
- घरेलू हिंसा का सबसे बुरा पहलू यह है कि इससे पीड़ित व्यक्ति मानसिक आघात से वापस नहीं आ पाता है। ऐसे मामलों में अक्सर देखा गया है कि लोग या तो अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं या फिर अवसाद का शिकार हो जाते हैं।
- घरेलू हिंसा की यह सबसे खतरनाक और दुखद स्थिति है कि जिन लोगों पर हम इतना भरोसा करते हैं और जिनके साथ रहते हैं जब वही हमें इस तरह का दुख देते हैं तो व्यक्ति का रिश्तों पर से विश्वास उठ जाता है और वह स्वयं को अकेला कर लेता है। कई बार इस स्थिति में लोग आत्महत्या तक कर लेते हैं।
- घरेलू हिंसा का सबसे व्यापक प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। सीटी स्कैन से पता चलता है कि जिन बच्चों ने घरेलू हिंसा में अपना जीवन बिताया है उनके मस्तिष्क का कॉर्पस कॉलोसम और हिप्पोकैम्पस नामक भाग सिकुड़ जाता है, जिससे उनकी सीखने, संज्ञानात्मक क्षमता और भावनात्मक विनियमन की शक्ति प्रभावित हो जाती है।

नोट :

- बालक अपने पिता से गुस्सैल व आक्रामक व्यवहार सीखते हैं। इस का असर ऐसे बच्चों का अन्य कमज़ोर बच्चों व जानवरों के साथ हिंसा करते हुए देखा जा सकता है।
- बालिकाएँ नकारात्मक व्यवहार सीखती हैं और वे प्राय: दब्बू, चुप-चुप रहने वाली या परिस्थितियों से दूर भागने वाली बन जाती हैं।
- प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योंकि हिंसा की शिकार हुई महिलाएँ समाजिक जीवन की विभिन्न गतिविधियों में कम भाग लेती हैं।

समाधान के उपाय

- शोधकर्त्ताओं के अनुसार, यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि घरेलू हिंसा के सभी पीड़ित आक्रामक नहीं होते हैं। हम उन्हें एक बेहतर वातावरण उपलब्ध करा कर घरेलू हिंसा के मानसिक विकार से बाहर निकल सकते हैं।
- भारत अभी तक हमलावरों की मानसिकता का अध्ययन करने, समझने और उसमें बदलाव लाने का प्रयास करने के मामले में पिछड़ रहा है। हम अभी तक विशेषज्ञों द्वारा प्रचारित इस दृष्टिकोण की मोटे तौर पर अनदेखी कर रहे हैं कि "महिलाओं और बच्चों के साथ होने वाली हिंसा और भेदभाव को सही मायनों में समाप्त करने के लिये हमें पुरुषों को न केवल समस्या का एक कारण बल्कि उन्हें इस मसले के समाधान के अविभाज्य अंग के तौर पर देखना होगा।"
- सुधार लाने के लिये सबसे पहले कदम के तौर पर यह आवश्यक होगा कि "पुरुषों को महिलाओं के खिलाफ रखने" के स्थान पर पुरुषों को इस समाधान का भाग बनाया जाए। मर्दानगी की भावना को स्वस्थ मायनों में बढ़ावा देने और पुराने घिसे-पिटे ढर्रे से छुटकारा पाना अनिवार्य होगा।
- सरकार ने महिलाओं और बच्चों को घरेलू हिंसा से संरक्षण देने के लिये घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 को संसद से पारित कराया है। इस कानून में निहित सभी प्रावधानों का पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिये यह समझना ज़रूरी है कि पीड़ित कौन है। यदि आप एक महिला हैं और रिश्तेदारों में कोई व्यक्ति आपके प्रति दुर्व्यवहार करता है तो आप इस अधिनियम के तहत पीड़ित हैं।
- मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 2017 द्वारा भारत मानसिक स्वास्थ्य के प्रति गंभीर हो गया है, लेकिन इसे और अधिक प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता है। नीति निर्माताओं को घरेलू हिंसा से उबरने वाले परिवारों को पेशेवर मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ उपलब्ध कराने के लिये तंत्र विकसित करने की ज़रूरत है।
- सरकार ने वन-स्टॉप सेंटर' जैसी योजनाएँ प्रारंभ की हैं, जिनका उद्देश्य हिंसा की शिकार महिलाओं की सहायता के लिये चिकित्सीय, कानूनी और मनोवैज्ञानिक सेवाओं की एकीकृत रेंज तक उनकी पहुँच को सुगम व सुनिश्चित करता है।
- महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा के बारे में जागरूकता फैलाने के लिये वोग इंडिया ने 'लड़के रुलाते नहीं' अभियान चलाया, जबकि वैश्विक मानवाधिकार संगठन 'ब्रेकथ्रू' द्वारा घरेलू हिंसा के खिलाफ 'बेल बजाओ' अभियान चलाया गया। ये दोनों ही अभियान महिलाओं के साथ होने वाली घरेलू हिंसा से निपटने के लिये निजी स्तर पर किये गए शानदार प्रयास थे।

निष्कर्ष

यदि हम सही मायनों में "महिलाओं के विरुद्ध हिंसा से मुक्त भारत" बनाना चाहते हैं, तो वक्त आ चुका है कि हमें एक राष्ट्र के रूप में सामूहिक तौर पर इस विषय पर चर्चा करनी चाहिये। एक अच्छा तरीका यह हो सकता है कि हम राष्ट्रव्यापी, अनवरत तथा समृद्ध सामाजिक अभियान की शुरुआत करें।

सांप्रदायिक हिंसा: कारण और समाधान

संदर्भ

भारत मूलत: विविधताओं का देश है, विविधताओं में एकता ही यहाँ की सामासिक संस्कृति की स्वर्णिम गरिमा को आधार प्रदान करती है। वैदिक काल से ही सामासिक संस्कृति में अंतर और बाह्य विचारों का अंतर्वेशन ही यहाँ की विशेषता रही है, इसलिये किसी भी सांस्कृतिक विविधता को आत्मसात करना भारत में सुलभ और संप्राप्य है। इसी परिप्रेक्ष्य में धार्मिक सहचार्यता भी इन्हीं विशेषताओं में से एक रही है, इसका अप्रतिम उदाहरण सूफीवाद में देखा जा सकता है जहाँ पर इस्लामिक एकेश्वरवाद और भारतीय धर्मों की कुछ विशेषताओं का स्वर्णिम संयोजन हुआ तथा परिणामस्वरूप एक संश्लेषित धार्मिक वैचारिकता का सफल अनुगमन हुआ किंतु हाल के वर्षों में भारत की सांस्कृतिक विविधता- सांस्कृतिक विषमता में अंतरित हो रही है जिससे लोगों के मध्य सद्भाव में ह्रास के साथ ही सांस्कृतिक विशेषता पर भी नकारात्मक प्रभाव भी पड़ रहा है।

नोट :

सांप्रदायिकता का अर्थ

- व्यापक अर्थ में सांप्रदायिकता का अर्थ एक व्यक्ति का अपने समुदाय के प्रति मज़बूत लगाव से होता है। सांप्रदायिकता एक विचारधारा है जिसके अनुसार कोई समाज भिन्न-भिन्न हितों से युक्त विभिन्न धार्मिक समुदायों में विभाजित होता है।
- सरल शब्दों में कहें तो सांप्रदायिकता का तात्पर्य उस संकीर्ण मनोवृत्ति से है, जो धर्म और संप्रदाय के नाम पर संपूर्ण समाज तथा राष्ट्र के व्यापक हितों के विरुद्ध व्यक्ति को केवल अपने व्यक्तिगत धर्म के हितों को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें संरक्षण देने की भावना को महत्त्व देती है।
- विद्वानों का मत है कि सांप्रदायिकता भारत के राष्ट्रीय एकीकरण की दिशा में सबसे बड़ी बाधा है, क्योंकि यह विचारधारा अन्य समुदायों के विरुद्ध अपने समुदाय की आवश्यक एकता पर ज़ोर देती है।
- इस प्रकार सांप्रदायिकता रूढ़िवादी सिद्धांतों में विश्वास, असहिष्णुता और अन्य धर्मों के प्रति नफरत को बढ़ावा देती है, जो कि समाज को विभाजन की ओर अग्रसर करता है।

भारत में सांप्रदायिकता

- एक राजनीतिक दर्शन के रूप में सांप्रदायिकता की जड़ें भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता में मौजूद हैं।
- भारत में सांप्रदायिकता का प्रयोग सदैव ही धार्मिक और जातीय पहचान के आधार पर समुदायों के बीच सांप्रदायिक घृणा और हिंसा के आधार पर विभाजन, मतभेद और तनाव पैदा करने के लिये एक राजनीतिक प्रचार उपकरण के रूप में किया गया है।
- प्राचीन भारतीय समाज में विभिन्न धर्मों के लोग शांतिपूर्वक एक साथ रहते थे। बुद्ध संभवत: पहले भारतीय थे जिन्होंने धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा प्रस्तुत की।
- इस बीच अशोक जैसे राजाओं ने शांति और धार्मिक सहिष्णुता की नीति का पालन किया।
- मध्यकालीन भारत में इस्लाम के आगमन के साथ ही महमूद गज़नवी द्वारा हिंदू मंदिरों के विनाश जैसी घटनाएँ सामने आने लगीं।
- हालाँकि उस समय धर्म लोगों के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा था, किंतु कोई सांप्रदायिक विचारधारा या सांप्रदायिक राजनीति नहीं थी।
- अकबर और शेरशाह सूरी जैसे शासकों ने देश भर में प्रचलित विभिन्न संस्कृतियों और परंपराओं के प्रति सहिष्णु धार्मिक नीति का पालन किया। हालाँकि औरंगज़ेब जैसे शासक कुछ संप्रदायों व अन्य धार्मिक प्रथाओं के प्रति कम सहिष्णु थे।

भारत में सांप्रदायिक हिंसा की प्रमुख घटनाएँ

- सांप्रदायिक हिंसा एक ऐसी घटना है जिसमें दो अलग-अलग धार्मिक समुदायों के लोग नफरत और दुश्मनी की भावना से लामबंद होते हैं और एक-दूसरे पर हमला करते हैं।
- वर्ष 1949 में भारत के विभाजन ने बड़े पैमाने पर रक्तपात और हिंसा देखी। इसके पश्चात् वर्ष 1961 तक देश में कोई बड़ी सांप्रदायिक घटना नहीं हुई, किंतु वर्ष 1961 में ही जबलपुर दंगे हुए जो कि देश के लिये एक बड़ा सांप्रदायिक झटका था।
- 1960 के दशक में विशेष रूप से भारत के पूर्वी भाग - राउरकेला (वर्ष 1964), जमशेदपुर (वर्ष 1965) और रांची (वर्ष 1967) में सांप्रदायिक दंगों की एक श्रृंखला शुरू हुई, जिनमें तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान से आए हिंदू शरणार्थियों को बसाया जा रहा था।
- सितंबर 1969 में अहमदाबाद में हुए दंगों ने राष्ट्र की अंतरात्मा को हिलाकर रख दिया। इन दंगों का स्पष्ट कारण यह था कि जनसंघ, इंदिरा गांधी के वामपंथी ज़ोर का विरोध करने के लिये मुसलमानों के भारतीयकरण पर एक प्रस्ताव पारित कर रहा था।
- अप्रैल 1974 में मुंबई के वर्ली इलाके में जब मुंबई पुलिस ने दलित पैंथर्स की एक रैली को रोकने की कोशिश की तो वहाँ हिंसा शुरू हो गई, जिसने समय के साथ भीषण रूप धारण कर लिया।
- अक्तूबर 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या के पश्चात् सिख विरोधी दंगे भड़क उठे, जिसमें दिल्ली, उत्तर प्रदेश और भारत के अन्य हिस्सों में तकरीबन 4000 से अधिक सिख मारे गए।
- 1985 में शाह बानो विवाद और बाबरी मस्जिद-राम जन्मभूमि विवाद 80 के दशक में सांप्रदायिकता को तीव्र करने के लिये शक्तिशाली उपकरण बन गए।
- दिसंबर 1992 में बाबरी मस्जिद को दक्षिणपंथी दलों द्वारा ध्वस्त किये जाने के पश्चात् देश में सांप्रदायिक दंगे अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गए।

नोट :

- वर्ष 2002 में गोधरा स्टेशन पर साबरमती एक्सप्रेस के एक डिब्बे में लगी आग में कई कार सेवकों की मौत हो गई, जिसके कारण देश में गुजरात दंगों की शुरुआत हुई और लगभग 1000 से अधिक लोग मारे गए।
- सितंबर 2013 में उत्तर प्रदेश में हाल के इतिहास की सबसे भयानक हिंसक घटनाएँ दर्ज की गईं, जब मुज़फ्फरनगर ज़िले में हिंदू और मुस्लिम समुदायों के बीच मतभेद ने सांप्रदायिकता का रूप ले लिया।
- वर्ष 2015 से देश में मॉब लिंचिंग (Mob Lynching) की घटनाएँ काफी तेज़ी से बढ़ी हैं और आँकड़ों के अनुसार इसके कारण अब तक 90 से अधिक लोगों की मौत हो चुकी है।
- दिल्ली में हुए हालिया सांप्रदायिक दंगों ने एक बार पुन: देश में विभिन्न धर्मों के बीच गहराती जा रही खाई को उजागर किया है। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के केंद्रबिंदु में हुए दंगों में 50 से अधिक लोग मारे गए हैं।

सांप्रदायिकता के कारण

- सोशल मीडिया का प्रभाव

देश में फेक न्यूज़ के तीव्र प्रसार से सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने में सोशल मीडिया ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। सोशल मीडिया हिंसा के माध्यम से दंगों और हिंसा के ऑडियो-विज़ुअल का प्रसार काफी सुगम और तेज़ हो गया है। हिंसा से संबंधित ये अमानवीयता ग्राफिक चित्रण आम जनता में अन्य समुदायों के प्रति घृणा को और बढ़ा देते हैं।

- मुख्यधारा की मीडिया की भूमिका

पत्रकारिता की नैतिकता और तटस्थता का पालन करने के स्थान पर देश के अधिकांश मीडिया हाउस विशेष रूप से किसी-न-किसी राजनीतिक विचारधारा के प्रति झुके हुए दिखाई देते हैं, जो बदले में सामाजिक दरार को चौड़ा करता है।

- राजनीतिक कारण

वर्तमान समय में विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा अपने राजनीतिक लाभों की पूर्ति के लिये सांप्रदायिकता का सहारा लिया जाता है। एक प्रक्रिया के रूप में राजनीति का सांप्रदायीकरण भारत में सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने के साथ-साथ देश में सांप्रदायिक हिंसा की तीव्रता को बढ़ाता है।

- मूल्य-आधारित शिक्षा का अभाव

भारतीय लोगों में आमतौर पर मूल्य-आधारित शिक्षा का अभाव देखा जाता है, जिसके कारण वे बिना सोचे-समझे किसी की भी बातों में आ जाते हैं और अंधानुकरण करते हैं।

- आर्थिक कारण

विकास का असमान स्तर, वर्ग विभाजन, गरीबी और बेरोज़गारी आदि कारक सामान्य लोगों में असुरक्षा का भाव उत्पन्न करते हैं। असुरक्षा की भावना के चलते लोगों का सरकार पर विश्वास कम हो जाता है, परिणामस्वरूप अपनी ज़रूरतों/हितों को पूरा करने के लिये लोगों द्वारा विभिन्न राजनीतिक दलों, जिनका गठन सांप्रदायिक आधार पर हुआ है, का सहारा लिया जाता है।

- मनोवैज्ञानिक कारण

दो समुदायों के बीच विश्वास और आपसी समझ की कमी या एक समुदाय द्वारा दूसरे समुदाय के सदस्यों का उत्पीड़न आदि के कारण उनमें भय, शंका और खतरे का भाव उत्पन्न होता है। इस मनोवैज्ञानिक भय के कारण लोगों के बीच विवाद, एक-दूसरे के प्रति नफरत, क्रोध और भय का माहौल पैदा होता है।

सांप्रदायिक हिंसा का प्रभाव

- सांप्रदायिक हिंसा के दौरान निर्दोष लोग अनियंत्रित परिस्थितियों में फँस जाते हैं, जिसके कारण व्यापक स्तर पर मानवाधिकारों का हनन होता है।
- सांप्रदायिक हिंसा के कारण जानमाल का काफी अधिक नुकसान होता है।
- सांप्रदायिक हिंसा वोट बैंक की राजनीति को बढ़ावा देती है और सामाजिक सामंजस्य प्रभावित होता है। यह दीर्घावधि में सांप्रदायिक सद्भाव को गंभीर नुकसान पहुँचाती है।
- सांप्रदायिक हिंसा धर्मनिरपेक्षता और बंधुत्व जैसे संवैधानिक मूल्यों को प्रभावित करती है।
- सांप्रदायिक हिंसा में पीड़ित परिवारों को इसका सबसे अधिक खामियाज़ा भुगतना पड़ता है, उन्हें अपना घर, प्रियजनों यहाँ तक कि जीविका के साधनों से भी हाथ धोना पड़ता है।

नोट :

- सांप्रदायिकता देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये भी चुनौती प्रस्तुत करती है क्योंकि सांप्रदायिक हिंसा को भड़काने वाले एवं उससे पीड़ित होने वाले दोनों ही पक्षों में देश के ही नागरिक शामिल होते हैं।

आगे की राह

- सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये पुलिस को अच्छी तरह से सुसज्जित होने की आवश्यकता है। इस तरह की घटनाओं को रोकने हेतु स्थानीय खुफिया नेटवर्क को मज़बूत किया जा सकता है।
- सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये शांति समितियों की स्थापना की जा सकती है जिसमें विभिन्न धार्मिक समुदायों से संबंधित व्यक्ति सद्भावना फैलाने और दंगा प्रभावित क्षेत्रों में भय तथा घृणा की भावनाओं को दूर करने के लिये एक साथ कार्य कर सकते हैं।
  - यह न केवल सांप्रदायिक तनाव बल्कि सांप्रदायिक दंगों को रोकने में भी मददगार साबित होगा।
- देश के आम लोगों को मूल्य आधारित शिक्षा दी जानी चाहिये, ताकि वे आसानी से किसी की बातों में न आ सकें।
- शांति, अहिंसा, करुणा, धर्मनिरपेक्षता और मानवतावाद के मूल्यों के साथ-साथ वैज्ञानिकता (एक मौलिक कर्त्तव्य के रूप में निहित) और तर्कसंगतता के आधार पर स्कूलों और कॉलेजों/विश्वविद्यालयों में बच्चों के उत्कृष्ट मूल्यों पर ध्यान केंद्रित करने, मूल्य-उन्मुख शिक्षा पर ज़ोर देने की आवश्यकता है जो सांप्रदायिक भावनाओं को रोकने में महत्त्वपूर्ण साबित हो सकते हैं।
- मौजूदा आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार कर शीघ्र परीक्षणों और पीड़ितों को पर्याप्त मुआवज़ा प्रदान करने की व्यवस्था की जानी चाहिये।
- भारत सरकार द्वारा सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये वैश्विक स्तर पर मलेशिया जैसे देशों में प्रचलित अभ्यासों (Practices) का अनुसरण किया जा सकता है।
- सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये मज़बूत कानून की आवश्यकता होती है। अत: सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण और पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक, 2005 को मज़बूती के साथ लागू करने की आवश्यकता है।

लैंगिक असमानता: कारण और समाधान

संदर्भ

'समानता एक सुंदर और सुरक्षित समाज की वह नींव है जिस पर विकास रूपी इमारत बनाई जा सकती है।' लैंगिक समानता क्या है? आखिर क्यों यह किसी भी समाज और राष्ट्र के लिये एक आवश्यक तत्त्व बन गया है? क्या बदलते समाज में यह प्रासंगिक है? लैंगिक समानता का अर्थ यह नहीं कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति एक लिंग का हो अपितु लैंगिक समानता का सीधा सा अर्थ समाज में महिला तथा पुरुष के समान अधिकार, दायित्व तथा रोजगार के अवसरों के परिप्रेक्ष्य में है। इसी तथ्य के मद्देनज़र सितंबर, 2015 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की उच्च स्तरीय बैठक में एजेंडा 2030 के अंतर्गत 17 सतत विकास लक्ष्यों को रखा गया, जिसे भारत सहित 193 देशों ने स्वीकार किया। इन लक्ष्यों में सतत विकास लक्ष्य 5 के अंतर्गत लैंगिक समानता के विषय को भी शामिल किया गया है। स्पष्ट है कि हमारे समाज के विकास के लिये लैंगिक समानता अति आवश्यक है। महिला और पुरुष समाज के मूल आधार हैं। समाज में लैंगिक असमानता सोच-समझकर बनाई गई एक खाई है, जिससे समानता के स्तर को प्राप्त करने का सफर बहुत मुश्किल हो जाता है।

लैंगिक असमानता के विभिन्न क्षेत्रों की बात करें तो इसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र के साथ वैज्ञानिक क्षेत्र, मनोरंजन क्षेत्र, चिकित्सा क्षेत्र और खेल क्षेत्र प्रमुख हैं। 28 फरवरी को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस 'विज्ञान के क्षेत्र में महिलाएँ' थीम के साथ आयोजित किया गया। यह विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका को रेखांकित करने का एक बेहतरीन प्रयास है, परंतु लैंगिक असमानता की इस खाई को दूर करने में हमें अभी मीलों चलना होगा। इस आलेख में लैंगिक असमानता के कारणों पर न केवल चर्चा की जाएगी बल्कि इस समस्या का समाधान तलाशने का प्रयास भी किया जाएगा।

लैंगिक असमानता से तात्पर्य

- लैंगिक असमानता का तात्पर्य लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव से है। परंपरागत रूप से समाज में महिलाओं को कमज़ोर वर्ग के रूप में देखा जाता रहा है।
- वे घर और समाज दोनों जगहों पर शोषण, अपमान और भेद-भाव से पीड़ित होती हैं। महिलाओं के खिलाफ भेदभाव दुनिया में हर जगह प्रचलित है।

नोट :

- वैश्विक लैंगिक अंतराल सूचकांक- 2020 में भारत 153 देशों में 112वें स्थान पर रहा। इससे साफ तौर पर अंदाजा लगाया जा सकता है कि हमारे देश में लैगिंक भेदभाव की जड़ें कितनी मजबूत और गहरी है।

लैंगिक असमानता के विभिन्न क्षेत्र

- सामाजिक क्षेत्र में- भारतीय समाज में प्राय: महिलाओं को घरेलू कार्य के ही अनुकूल माना गया है। घर में महिलाओं का मुख्य कार्य भोजन की व्यवस्था करना और बच्चों के लालन-पालन तक ही सीमित है। अक्सर ऐसा देखा गया है कि घर में लिये जाने वाले निर्णयों में भी महिलाओं की कोई भूमिका नहीं रहती है। महिलाओं के मुद्दों से संबंधित विभिन्न सामाजिक संगठनों में भी महिलाओं की न्यूनतम संख्या लैंगिक असमानता के विकराल रूप को व्यक्त करती है।
- आर्थिक क्षेत्र में- आर्थिक क्षेत्र में कार्यरत महिला और पुरुष के पारिश्रमिक में अंतर है। औद्योगिक क्षेत्र में प्राय: महिलाओं को पुरुषों के सापेक्ष कम वेतन दिया जाता है। इतना ही नहीं रोज़गार के अवसरों में भी पुरुषों को ही प्राथमिकता दी जाती है।
- राजनीतिक क्षेत्र में- सभी राजनीतिक दल लोकतांत्रिक होते हुए समानता का दावा करते हैं परंतु वे न तो चुनाव में महिलाओं को प्रत्याशी के रूप में टिकट देते हैं और न ही दल के प्रमुख पदों पर उनकी नियुक्ति करते हैं।
- विज्ञान के क्षेत्र में- जब हम वैज्ञानिक समुदाय पर ध्यान देते हैं तो यह पाते हैं कि प्रगतिशीलता की विचारधारा पर आधारित इस समुदाय में भी स्पष्ट रूप से लैंगिक असमानता विद्यमान है। वैज्ञानिक समुदाय में या तो महिलाओं का प्रवेश ही मुश्किल से होता है या उन्हें कम महत्त्व के प्रोजेक्ट में लगा दिया जाता है। यह विडंबना ही है कि हम मिसाइल मैन के नाम से प्रसिद्ध स्वर्गीय ए. पी.जे अब्दुल कलाम से तो परिचित हैं लेकिन मिसाइल वुमेन ऑफ इंडिया टेसी थॉमस के नाम से परिचित नहीं हैं।
- मनोरंजन क्षेत्र में- मनोरंजन के क्षेत्र में अभिनेत्रियों को भी इस भेदभाव का शिकार होना पड़ता है। अक्सर फिल्मों में अभिनेत्रियों को मुख्य किरदार नहीं समझा जाता और उन्हें पारिश्रमिक भी अभिनेताओं की तुलना में कम मिलता है।
- खेल क्षेत्र में- खेलों में मिलने वाली पुरस्कार राशि पुरुष खिलाड़ियों की बजाय महिला खिलाड़ियों को कम मिलती हैं। चाहे कुश्ती हो या क्रिकेट हर खेल में भेदभाव हो रहा है। इसके साथ ही, पुरुषों के खेलों का प्रसारण भी महिलाओं के खेलों से ज्यादा है।

लैंगिक असमानता के कारक

- सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति के बावजूद वर्तमान भारतीय समाज में पितृसत्तात्मक मानसिकता जटिल रूप में व्याप्त है। इसके कारण महिलाओं को आज भी एक ज़िम्मेदारी समझा जाता है। महिलाओं को सामाजिक और पारिवारिक रुढ़ियों के कारण विकास के कम अवसर मिलते हैं, जिससे उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। सबरीमाला और तीन तलाक जैसे मुद्दों पर सामाजिक मतभेद पितृसत्तात्मक मानसिकता को प्रतिबिंबित करता है।
- भारत में आज भी व्यावहारिक स्तर (वैधानिक स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय के आदेशानुसार संपत्ति पर महिलाओं का समान अधिकार है) पर पारिवारिक संपत्ति पर महिलाओं का अधिकार प्रचलन में नहीं है इसलिये उनके साथ विभेदकारी व्यवहार किया जाता है।
- राजनीतिक स्तर पर पंचायती राज व्यवस्था को छोड़कर उच्च वैधानिक संस्थाओं में महिलाओं के लिये किसी प्रकार के आरक्षण की व्यवस्था नहीं है।
- वर्ष 2017-18 के नवीनतम आधिकारिक आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (Periodic Labour Force Survey) के अनुसार, भारतीय अर्थव्यवस्था में महिला श्रम शक्ति (Labour Force) और कार्य सहभागिता (Work Participation) दर कम है। ऐसी परिस्थितियों में आर्थिक मापदंड पर महिलाओं की आत्मनिर्भरता पुरुषों पर बनी हुई है। देश के लगभग सभी राज्यों में वर्ष 2011-12 की तुलना में वर्ष 2017-18 में महिलाओं की कार्य सहभागिता दर में गिरावट देखी गई है। इस गिरावट के विपरीत केवल कुछ राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों जैसे मध्य प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, चंडीगढ़ और दमन-दीव में महिलाओं की कार्य सहभागिता दर में सुधार हुआ है।
- महिलाओं के रोज़गार की अंडर-रिपोर्टिंग (Under-Reporting) की जाती है अर्थात् महिलाओं द्वारा परिवार के खेतों और उद्यमों पर कार्य करने को तथा घरों के भीतर किये गए अवैतनिक कार्यों को सकल घरेलू उत्पाद में नहीं जोड़ा जाता है।
- शैक्षिक कारक जैसे मानकों पर महिलाओं की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा कमज़ोर है। हालाँकि लड़कियों के शैक्षिक नामांकन में पिछले दो दशकों में वृद्धि हुई है तथा माध्यमिक शिक्षा तक लैंगिक समानता की स्थिति प्राप्त हो रही है लेकिन अभी भी उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं का नामांकन पुरुषों की तुलना में काफी कम है।

नोट :

असमानता को समाप्त करने के प्रयास

- समाज की मानसिकता में धीरे-धीरे परिवर्तन आ रहा है जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर गंभीरता से विमर्श किया जा रहा है। तीन तलाक, हाज़ी अली दरगाह में प्रवेश जैसे मुद्दों पर सरकार तथा न्यायालय की सक्रियता के कारण महिलाओं को उनका अधिकार प्रदान किया जा रहा है।
- राजनीतिक प्रतिभाग के क्षेत्र में भारत लगातार अच्छा प्रयास कर रहा है इसी के परिणामस्वरुप वैश्विक लैंगिक अंतराल सूचकांक- 2020 के राजनीतिक सशक्तीकरण और भागीदारी मानक पर अन्य बिंदुओं की अपेक्षा भारत को 18वाँ स्थान प्राप्त हुआ। मंत्रिमंडल में महिलाओं की भागीदारी पहले से बढ़कर 23% हो गई है तथा इसमें भारत, विश्व में 69वें स्थान पर है।
- भारत ने मैक्सिको कार्ययोजना (1975), नैरोबी अग्रदर्शी (Provident) रणनीतियाँ (1985) और लैंगिक समानता तथा विकास एवं शांति पर संयुक्त राष्ट्र महासभा सत्र द्वारा 21वीं शताब्दी के लिये अंगीकृत "बीजिंग डिक्लरेशन एंड प्लेटफार्म फॉर एक्शन को कार्यान्वित करने के लिये और कार्रवाइयाँ एवं पहलें" जैसी लैंगिक समानता की वैश्विक पहलों की अभिपुष्टि की है।
- 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं', 'वन स्टॉप सेंटर योजना', 'महिला हेल्पलाइन योजना' और 'महिला शक्ति केंद्र' जैसी योजनाओं के माध्यम से महिला सशक्तीकरण का प्रयास किया जा रहा है। इन योजनाओं के क्रियान्वयन के परिणामस्वरूप लिंगानुपात और लड़कियों के शैक्षिक नामांकन में प्रगति देखी जा रही है।
- आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हेतु मुद्रा और अन्य महिला केंद्रित योजनाएँ चलाई जा रही हैं।
- लैंगिक असमानता को दूर करने के लिये कानूनी प्रावधानों के अलावा किसी देश के बजट में महिला सशक्तीकरण तथा शिशु कल्याण के लिये किये जाने वाले धन आवंटन के उल्लेख को जेंडर बजटिंग कहा जाता है। दरअसल जेंडर बजटिंग शब्द विगत दो-तीन दशकों में वैश्विक पटल पर उभरा है। इसके ज़रिये सरकारी योजनाओं का लाभ महिलाओं तक पहुँचाया जाता है।

आगे की राह

- लैंगिक समानता के उद्देश्य को हासिल करना जागरूकता कार्यक्रमों के आयोजन और कार्यालयों में कुछ पोस्टर चिपकाने तक ही सीमित नहीं है। यह मूल रूप से किसी भी समाज के दो सबसे मजबूत संस्थानों - परिवार और धर्म की मान्यताओं को बदलने से संबंधित है।
- लैंगिक समानता का सूत्र श्रम सुधारों और सामाजिक सुरक्षा कानूनों से भी जुड़ा है, फिर चाहे कामकाजी महिलाओं के लिये समान वेतन सुनिश्चित करना हो या सुरक्षित नौकरी की गारंटी देना। मातृत्व अवकाश के जो कानून सरकारी क्षेत्र में लागू हैं, उन्हें निजी और असंगठित क्षेत्र में भी सख्ती से लागू करना होगा। जेंडर बजटिंग और समाजिक सुधारों के एकीकृत प्रयास से ही भारत को लैंगिक असमानता के बंधनों से मुक्त किया जा सकता है।

शहरीकरण से उपज़ते संकट

संदर्भ

संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में दुनिया की आधी आबादी शहरों में रह रही है। वर्ष 2050 तक भारत की आधी आबादी महानगरों व शहरों में निवास करने लगेगी। एक दूसरी संस्था ऑक्सफोर्ड इकॉनोमिक के अध्ययन के मुताबिक वर्ष 2019 से लेकर वर्ष 2035 के बीच सबसे तेज़ी से बढ़ने वाले सभी शीर्ष दस शहर भारत के ही होंगे। विश्व बैंक की वर्ष 2015 की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत का शहरीकरण 'Hidden And Messy' अर्थात अघोषित एवं अस्त-व्यस्त है। भारत का शहरी विस्तार देश की कुल आबादी का 55.3% है परंतु आधिकारिक जनगणना के आँकड़े इसका विस्तार केवल 31.2% ही बताते हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के मुताबिक भारत में 53 ऐसे शहर हैं जिनकी आबादी 10 लाख से अधिक है। इसके अलावा देश की राजधानी दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कोलकाता, बंगलूरू और हैदराबाद जैसे महानगर हैं जिनकी आबादी लगातार बढ़ रही है। लोग बेहतर भविष्य की तलाश में यहाँ पहुँचते और बसते रहते हैं।

शहरीकरण से संबंधित समस्याओं में चाहे बंगलूरू की प्रदूषित झीलें हों या गुरुग्राम का ट्रैफिक जाम और मुंबई की बारिश हो या फिर दिल्ली का वायु प्रदूषण। शहरीकरण का नकारात्मक प्रभाव अलग-अलग तरीके से हर जगह देखने को मिल रहा है।

इस आलेख में शहरीकरण के कारण, उससे संबंधित समस्याएँ तथा इन समस्याओं का समाधान तलाशने का प्रयास किया जाएगा।

नोट :

क्या है शहरीकरण ?

- शहरी क्षेत्रों के भौतिक विस्तार मसलन क्षेत्रफल, जनसंख्या जैसे कारकों का विस्तार शहरीकरण कहलाता है। शहरीकरण भारत समेत पूरी दुनिया में होने वाला एक वैश्विक परिवर्तन है। संयुक्त राष्ट्र संघ के मुताबिक़ ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का शहरों में जाकर रहना और वहाँ काम करना भी 'शहरीकरण' है।
- 'नवीन भारत (New India)' पहल को आगे बढ़ाने की दिशा में शहरी बुनियादी ढाँचों में सुधार के लिये शहरीकरण के प्रति समग्र दृष्टिकोण अपनाने की प्रक्रिया अपनाई जा रही है।

शहरी क्षेत्र के मानक

- भारतीय समाज में किसी क्षेत्र को शहरी क्षेत्र माने जाने के लिये आवश्यक है कि किसी मानव बस्ती की आबादी में 5000 या इससे अधिक व्यक्ति निवास करते हों।
- इस मानव आबादी में कम से कम 75% लोग गैर-कृषि व्यवसाय में संलग्न हों।
- जनसंख्या घनत्व 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. से कम नहीं होना चाहिये।
- इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विशेषताएँ मसलन उद्योग, बड़ी आवासी बस्तियाँ, बिजली और सार्वजनिक परिवहन जैसी व्यवस्था हो तो इसे शहर की परिभाषा के अंतर्गत माना जाता है।

भारत में शहरीकरण से संबंधित आँकड़े

- आँकड़ों के अनुसार, वर्ष 2001 तक भारत की आबादी का 27.81% हिस्सा शहरों में रहता था। वर्ष 2011 तक यह 31.16% और वर्ष 2018 में यह आँकड़ा बढ़कर 33.6% हो गया।
- वर्ष 2001 की जनगणना में शहर-कस्बों की कुल संख्या 5161 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 7936 हो गई।
- भारत की शहरी आबादी का लगभग 17.4% झुग्गी-झोपड़ी में रहता है।
- संयुक्त राष्ट्र की एक नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में विश्व की आधी आबादी शहरों में रहने लगी है और वर्ष 2050 तक भारत की आधी आबादी महानगरों और शहरों में रहने लगेगी।
- भारत में शहरीकरण तेज़ी से बढ़ रहा है और वैश्विक स्तर पर भी तब तक कुल आबादी का 70% हिस्सा शहरों में निवास करने लगेगा।

बढ़ते शहरीकरण का कारण

- शहरीकरण के बढ़ने का एक प्रमुख कारण बेरोज़गारी है। शहरों में आने वाले लोगों में अधिक संख्या नौकरी की तलाश करने वालों की है, न कि बेहतर नौकरी पाने वालों की तथा बाहर से आने वालों में बेरोज़गारी की दर अपेक्षाकृत कम है।
- गाँव से शहरों की ओर पलायन का मुख्य कारण वेतन-दर तो है ही इसके अलावा दो अन्य प्रमुख कारण है- जोत की कम भूमि और परिवार का बड़ा आकार, शहरी प्रवासन के लिये जाति-प्रथा भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है।
- द्वितीय विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप शहरी क्षेत्रों में तीव्र गति से सरकारी सेवाओं में विस्तार हुआ, जो गाँव से शहरों की ओर प्रवासन में एक प्रमुख उत्प्रेरक बना।
- औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरुप शहरी क्षेत्रों में भौतिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई।
- शहरी क्षेत्रों में बेहतर बुनियादी सुविधाएँ जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और परिवहन की सुगम व्यवस्था आदि।
- कृषि में होने वाले नुकसान की वज़ह से लोग कृषि छोड़कर रोज़गार की तलाश में शहर आते हैं। कृषि मंत्रालय के मुताबिक़ खेती पर निर्भर लोगों में से 40 फीसदी लोग ऐसे हैं जिनको अगर विकल्प मिले तो वे तुरंत खेती छोड़ देंगे। क्योंकि खेती करने में धन की लागत बढ़ती जा रही है।
- वर्ष 1990 के बाद निज़ी क्षेत्र का विकास हुआ। जिससे बड़े कारखाने व फ़ैक्टरियों का विकास शहरों तथा महानगरों में ही हुआ।
- ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में भारत के आर्थिक विकास के लिये शहरीकरण को लक्ष्य बनाया गया था।

शहरीकरण से संबंधित समस्याएँ

- अतिशहरीकरण- भारत के अधिकांश शहर अतिशहरीकरण के शिकार हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि जब शहरी आबादी इतना बढ़ जाए की शहर अपने निवासियों को अच्छा जीवनशैली देने में असफल हो जाए तो वह स्थिति अतिशहरीकरण कहलाती हैं।

नोट :

- आवास और गंदी बस्तियों की समस्या- शहरी जनसंख्या में हो रही वृद्धि ने अनेक समस्याओं को जन्म दिया है जिसमें आवास की समस्या प्रमुख है। यह समस्या आवास की गुणवत्ता और मात्रा दोनों में देखने को मिलती है।
- सामाजिक सुरक्षा का अभाव- ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों में आने वाले लोग अधिकतर गरीब होते हैं, उनके पास किसी भी प्रकार की सामाजिक सुरक्षा का अभाव होता है।
- पारिवारिक विघटन- शहरीकरण के परिणामस्वरूप बड़े परिवार छोटे परिवारों में विभक्त हो गए हैं। इसके अतिरिक्त परिवारों में विवाह-विच्छेद, विधवाओं का शोषण, वृद्धों के साथ दुर्व्यवहार की घटनाओं में वृद्धि हुई है।
- निर्धनता- ग्रामीण भारत गरीबी को छिपाने और उससे निपटने में ज़्यादा सक्षम है। जबकि शहरी भारत में ऐसा संभव नहीं हैं। शहरी गरीबी बढ़ती जा रही है, क्योंकि लोग रोज़गार की तलाश में अपना गाँव छोड़ रहे हैं।
- पर्यावरण समस्या- शहरी केंद्रों में जनसंख्या के लगातार बढ़ते रहने एवं औद्योगीकरण के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण तथा अवनयन की कई समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं। महानगरों और शहरों में प्रदुषण का मुख्य कारण वाहनों एवं औद्योगिक संस्थानों द्वारा निकला विषैला रसायन है।
- नृजातीय विविधता और सामुदायिक एकीकरण की समस्या- शहर की सामाजिक संरचना ऐसी होती है कि लोगों के एकीकृत होने की समस्या सदैव विद्यमान रहती है।
- आर्थिक असमानता- भारतीय शहरों में आर्थिक असमानता विकसित देशों की तुलना में अधिक है। महानगरों पर खर्च की गई आय ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक होती है। इस आर्थिक अंतर के परिणामस्वरूप ग्रामीण शहरों की ओर आकर्षित होते हैं।
- जनांकिकीय असंतुलन की समस्या- भारत में पश्चिमी देशों की तुलना में शहर प्रवास की प्रवृत्ति पुरुषों में ज़्यादा है। जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक पुरुष जनसंख्या में कमी आ रही है।

शहरीकरण का प्रभाव

- शहरीकरण की प्रक्रिया के चलते आज संयुक्त परिवार एकाकी परिवार में बदल रहे हैं। परिवार का आकार सिकुड़ रहा है तथा नातेदारी संबंध कमज़ोर हुए हैं।
- शहरीकरण ने जाति व्यवस्था पर भी प्रभाव डाला है। वर्तमान में जातीयता के प्रति कटुता में कमी आई है।
- शहरीकरण ने धार्मिक क्षेत्र पर भी प्रहार किया है। ध्यान देने वाली बात यह है कि शहरों में लोगों की धर्म से आस्था होती है लेकिन वे धर्म के नाम पर आडंबर पर विश्वास नहीं करते हैं।
- शहरीकरण की प्रक्रिया ने महिलाओं की सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों में व्यापक बदलाव किया है। महिलाओं की परिस्थिति ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शहरी क्षेत्रों में अधिक ऊँची है।

शहरीकरण की समस्या से निपटने के लिये सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयास

- सरकार द्वारा शहरों के ठीक प्रकार से नियोजन के लिये स्मार्ट सिटी मिशन की अवधारणा को अपनाया गया है।
- केंद्र सरकार ने मेट्रो, मोनोरेल और बस रैपिड टांजिट जैसे बड़े सार्वजनिक परिवहन गलियारों के पास बसने को बढ़ावा देने के लिये एक नीति तैयार की है, जिसका उद्देश्य शहरीकरण की चुनौतियों का निदान करना है।
- देश के आधे से अधिक लोगों का जीवन खेती पर निर्भर है, इसलिये यह कल्पना करना बेमानी होगा कि गाँव के विकास के बिना देश का विकास किया जा सकता है। ग्रामीण विकास के ज़रिये ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उत्थान के लिये सरकार ने इस बात को स्वीकार किया है कि आवास और बुनियादी सुविधाएँ आर्थिक विकास के मुख्य वाहक हैं।
- प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) के अंतर्गत अभिनव एवं आधुनिक निर्माण प्रौद्योगिकी के उपयोग की सुविधा प्रदान करने के लिये प्रौद्योगिकी सब-मिशन भी शुरू किया गया है।
- जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन के अंतर्गत शहरों का कायाकल्प करने का प्रयास किया जा रहा है।
- कायाकल्प और शहरी रूपान्तरण के लिये अटल मिशन यानी अमृत योजना के अंतर्गत शहरों की अवसंरचना को मज़बूत किया जा रहा है।

शहरीकरण का महत्व

- विश्व बैंक के आंकड़ों के मुताबिक़, दुनिया की 54% से अधिक आबादी अब शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। ये आबादी वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में 80% का योगदान करती है और दो-तिहाई वैश्विक ऊर्जा का उपभोग करती है, साथ ही 70% ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के लिये भी जिम्मेदार है।

नोट :

- शहरीकरण के कारण आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है।
- शहरीकरण और शिक्षा के विकास के कारण जाति-प्रथा जैसी व्यवस्थाएँ अब ध्वस्त हो रही हैं।
- प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी के चलते लोगों रहन-सहन का स्तर बेहतर होता है
- उत्पादकता को बढ़ाता है और विशेष रूप से मैन्युफैक्चरिंग और सेवाओं में रोजगार सृजन को प्रोत्साहित करता है।

आगे की राह

- शहरी क्षेत्रों का सतत, संतुलित एवं समेकित विकास सरकार की मुख्य प्राथमिकता एवं शहरी विकास का एक केंद्रीय विषय है। जिस तरीके से देश में 'शहरीकरण' की प्रक्रिया का प्रबंधन होगा, उसी से यह निर्धारित होगा कि किस सीमा तक शहरी अवस्थांतर का लाभ उठाया जा सकता हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार पैदा करने के साथ-साथ पलायन को कम करने के लिये ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था का विविधीकरण (Diversification) करने की ज़रूरत है। इस मामले में, मनरेगा ने गावों से शहरों की ओर पलायन कम करने में अहम भूमिका निभाई है।
- PURA और श्यामा प्रसाद मुखर्जी रूर्बन मिशन जैसे कार्यक्रमों के ज़रिए ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं का विकास पर ज़ोर देना होगा।
- पर्यावरणीय रूप से धारणीय शहरीकरण का बेहतर प्रबंधन, ग्रीन पैचेज का विकास, आर्द्रभूमि, उचित अपशिष्ट प्रबंधन करने का प्रयास करना चाहिये।

जनगणना कार्यक्रम का स्थगन: कारण व प्रभाव

संदर्भ

किसी भी देश की नीति निर्धारण के लिये देश के नागरिकों की सही संख्या का पता होना बेहद आवश्यक है। सामाजिक-आर्थिक जानकारी के सही आँकड़ों के आधार पर कमज़ोर से कमज़ोर व्यक्ति तक पहुँचा जा सकता है और प्रत्येक वर्ग के लिये सही नीति बनाई जा सकती है। विश्व में जनसंख्या के मामले में भारत, चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में प्रत्येक 10 वर्ष के अंतराल पर जनगणना का आयोजन किया जाता है। वर्ष 2021 में जनगणना का आयोजन दो चरणों में किया जाना है। इसके प्रथम चरण का आयोजन 1 अप्रैल, 2020 से प्रस्तावित था, परंतु वैश्विक महामारी COVID-19 के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिये किये गए लॉकडाउन के कारण जनगणना संबंधी गतिविधियाँ ठप्प हो गई हैं। इतना ही नहीं लॉकडाउन का व्यापक प्रभाव राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर के अद्यतनीकरण की प्रक्रिया पर भी पड़ा है। ध्यातव्य है कि राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर का अद्यतनीकृत डेटा जनगणना-2021 के प्रथम चरण के आँकड़ों के साथ प्रकाशित किये जाने का विचार था।

इस आलेख में जनगणना और राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर के अद्यतनीकरण की आवश्यकता व प्रक्रिया के साथ इनके महत्त्व और चुनौतियों पर विमर्श किया जाएगा। इसके साथ ही समाधान के संभावित उपायों पर भी चर्चा की जाएगी।

स्थगन के कारण

- वैश्विक महामारी COVID -19 मानव से मानव में स्थानांतरित होने वाली बीमारी है, जिसके कारण प्रत्यक्ष जनसंपर्क संभव नहीं है। जनगणना व राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर के अद्यतनीकरण की प्रक्रिया प्रत्यक्ष जनसंपर्क पर आधारित है, जो इस समय बीमारी के स्थानांतरण का कारण बन सकती है।
- इस वैश्विक महामारी से निपटने में केंद्र के साथ सभी राज्यों की पूरी प्रशासनिक मशीनरी व्यस्त है, जिससे मानव संसाधन की कमी का सामना करना पड़ सकता है।
- इस संकट से निपटने के लिये सरकार को बड़ी संख्या में धन की आवश्यकता है। जनगणना करने व राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर के अद्यतनीकरण की प्रक्रिया में तकरीबन 13,000 करोड़ रूपए खर्च होंगे। जो इस समय सरकार पर अनावश्यक वित्तीय दबाव उत्पन्न करेगा।
- जनगणना कार्यक्रम के क्रियान्वयन से सरकार के द्वारा इस महामारी के रोकथाम हेतु की गई लॉकडाउन की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो सकती है।

नोट :

जनगणना से तात्पर्य

- जनगणना वह प्रक्रिया है, जिसके तहत एक निश्चित समयांतराल पर किसी भी देश में एक निर्धारित सीमा में रह रहे लोगों की संख्या, उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन से संबंधित आँकड़ों को इकट्ठा कर, उनका अध्ययन किया जाता है तथा संबंधित आँकड़ों को प्रकाशित किया जाता है।
- भारत अपनी विविधता के लिये जाना जाता है। जनगणना देश के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, जनसंख्या आदि से संबंधित आँकड़ों के माध्यम से नागरिकों को देश की विविधता और इससे जुड़े अन्य पहलुओं का अध्ययन करने का अवसर प्रदान करती है।

राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर

- यह 'देश के सामान्य निवासियों' की एक सूची है जो नागरिकता अधिनियम 1955 के प्रावधानों के तहत स्थानीय, उप-ज़िला, ज़िला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर बनाई जाती है।
- कोई भी व्यक्ति जो 6 महीने या उससे अधिक समय से भारत में रह रहा है या अगले 6 महीने या उससे अधिक समय तक यहाँ रहने का इरादा रखता है, उसे राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर में अनिवार्य रूप से पंजीकरण कराना होता है।
- राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर को नागरिकता कानून, 1955 और नागरिकता (नागरिकों का पंजीकरण और राष्ट्रीय पहचान-पत्र जारी करना) नियम, 2003 के प्रावधानों के अनुसार तैयार किया गया है।
- देश के नागरिकों की पहचान का डेटाबेस एकत्र करने के लिये वर्ष 2010 में इसकी शुरुआत की गई थी।
- राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर में पंजीकरण कराना भारत के प्रत्येक 'सामान्य निवासी' के लिये अनिवार्य है।
- राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर को अद्यतन करने के लिये 21 बिंदुओं के आधार पर डेटा एकत्रित किया जाएगा, जबकि वर्ष 2010 का राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर 15 बिंदुओं के आधार पर एकत्रित आँकड़ों के अनुसार तैयार किया गया था।

ऐतिहासिक कालक्रम

- प्राचीन साहित्य 'ऋग्वेद' में 800-600 ई०पू० में जनगणना का उल्लेख किया गया है।
- कौटिल्य के अर्थशास्त्र (लगभग 321-296 ई०पू०) में कराधान के उद्देश्य से जनगणना को राज्य की नीति (State Policy) में शामिल करने पर बल दिया गया है।
- मुगल काल में अकबर के शासन के दौरान प्रशासनिक रिपोर्ट 'आईन-ए-अकबरी' में जनसंख्या, उद्योगों और समाज के अन्य पहलुओं से संबंधित विस्तृत आँकड़ों को शामिल किया जाता था।
- भारत में पहली जनगणना गवर्नर-जनरल लॉर्ड मेयो के शासनकाल में वर्ष 1872 में की गई थी। हालाँकि देश की पहली जनगणना प्रक्रिया को गैर-समकालिक (देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग समय पर) रूप से पूर्ण किया गया। वर्ष 1881 में पहली बार पूरे देश में एक साथ जनगणना कराई गई।
- जनगणना-2021 अब तक की 16वीं व स्वतंत्रता के बाद से 8वीं जनगणना होगी।

जनगणना की प्रक्रिया

- जनगणना में शामिल प्रश्नावली इस प्रक्रिया का प्राथमिक और सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। इस प्रश्नावली में नाम, लिंग, जन्मतिथि, शिक्षा, आय व आय के साधन, वैवाहिक स्थिति जैसे मूलभूत प्रश्न शामिल किये जाते हैं।
- इसमें शामिल प्रश्नों की सहायता से सरकार नागरिकों के जीवन से जुड़ी अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ एकत्र करती है। यदि इन प्रश्नों में नागरिकों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के विभिन्न पहलुओं को अच्छी तरह से शामिल किया जाए तो ये प्रश्न जनसंख्या से जुड़े आँकड़ों की विश्वसनीयता और गुणवत्ता को और अधिक बढ़ा देते हैं।
- जनगणना-2021 की प्रक्रिया का निष्पादन दो चरणों में किया जाएगा:
  - पहला चरण: जनगणना के पहले चरण में जनगणना कर्मियों को 1 अप्रैल 2020 से सितंबर माह के बीच घर-घर जाकर घरों और उनमें उपलब्ध सुविधाओं से संबंधित जानकारी एकत्रित करना था, परंतु COVID-19 महामारी के कारण इस चरण को कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया गया है।
  - दूसरा चरण: जनगणना के दूसरे चरण में 9-28 फरवरी, 2021 तक पूरे देश में लोगों की गिनती का कार्य संपन्न किया जाएगा।

नोट :

जनगणना 2021 की विशेषताएँ

- डिजिटल प्रक्रिया: देश की जनगणना के इतिहास में पहली बार जनगणना के आँकड़ों को मोबाइल एप के माध्यम से डिजिटल रूप में एकत्र किया जाएगा। यह एप बिना इंटरनेट के ऑफलाइन भी काम करेगा। इस व्यवस्था से जनगणना प्रक्रिया में होने वाले विलंब की समस्या को दूर किया जा सकेगा और जनगणना के परिणाम तुरंत प्राप्त किये जा सकेंगे। जबकि पिछले वर्षों में हुई जनगणना के आँकड़ों के मूल्यांकन और इससे जुड़ी रिपोर्ट को प्रकाशित करने में वर्षों लग जाते थे।
- जनगणना निगरानी और प्रबंधन पोर्टल: जनगणना की प्रक्रिया को आसान बनाने एवं इसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिये जनगणना निगरानी और प्रबंधन पोर्टल की व्यवस्था की जाएगी। इस पोर्टल के माध्यम से जनगणना में लगे कर्मचारियों और पदाधिकारियों को कम समय तथा अलग-अलग भाषाओं में जानकारी उपलब्ध कराई जा सकेगी।
- जाति आधारित जनगणना नहीं: आगामी जनगणना में जातिगत जानकारी नहीं मांगी जाएगी। यद्यपि जनगणना-2011 के सामानांतर ही सामाजिक-आर्थिक जातिगत जनगणना (Socio-Economic Caste Census-SECC) भी की गई थी परंतु इससे प्राप्त आँकड़ों/जानकारी को अभी सार्वजनिक नहीं किया गया है।
- ट्रांसजेंडर की पहचान: जनगणना-2021 में पहली बार ट्रांसजेंडर समुदाय के लोगों की जानकारी, उनकी पहचान के साथ दर्ज की जाएगी, पूर्व की जनगणना में केवल महिला या पुरुष का ही विकल्प शामिल किया गया था।

चुनौतियाँ

- जनगणना से संबंधित किसी भी प्रक्रिया में दो प्रकार की त्रुटियों की संभावना होती है- 1. कवरेज से संबंधित, 2. आँकड़ों से संबंधित। अत: जनगणना के दौरान ऐसी त्रुटियों पर ध्यान देना अति आवश्यक है।
- कई बार अनेक भ्रांतियों, अशिक्षा के कारण या सरकारी योजनाओं का लाभ न मिलने के भय से (जैसे-वर्तमान में नागरिकता से जुड़ा भ्रम) लोग जनगणना में सही जानकारी नहीं दर्ज कराते हैं। उदाहरण के लिये बहुत से लोगों के मन में स्कूल न जाने वाले बच्चों के संबंध में जानकारी जुटाने को लेकर कुछ आशंकाएँ थीं और कई मौकों पर लोगों ने सर्वेक्षणों में इस संदर्भ में उत्तर नहीं दिये।
- जनगणना की प्रक्रिया में बड़ी संख्या में कर्मचारियों के योगदान की आवश्यकता के साथ ही प्रक्रिया के सफल संचालन के लिये सरकार द्वारा करोड़ों रुपए का आवंटन किया जाता है। सरकारी अनुमान के अनुसार, जनगणना-2021 की प्रक्रिया को पूरा करने में लगभग 9000 करोड़ रूपए का खर्च आएगा।
- जनगणना प्रक्रिया में आँकड़े एकत्र करने के लिये डिजिटल माध्यम के प्रयोग से जनगणना के दौरान प्राप्त आँकड़ों के मूल्यांकन में अवश्य ही तेज़ी आएगी, परंतु डिजिटल प्रक्रिया की भी अपनी सीमाएँ और चुनौतियाँ हैं। अत: जनगणना के दौरान प्राप्त आँकड़ों की सुरक्षा और इसके भंडारण तथा बैकअप पर भी विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता होगी।

समाधान

- जनगणना प्रक्रिया में शामिल प्रगणकों व अन्य कर्मचारियों के उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये। साथ ही प्रगणकों को जनगणना हेतु प्रेरित/उत्साहित करने के लिये उन्हें समय पर उचित पारिश्रमिक का भुगतान किया जाना चाहिये। क्योंकि प्रगणक ही पूरी जनगणना प्रक्रिया का केंद्र बिंदु होते हैं अत: किसी भी प्रगणक के असंतुष्ट होने की स्थिति में डेटा की गुणवत्ता में बाधा आ सकती है।
- जनगणना कार्यक्रम की पहुँच और प्राप्त डेटा में त्रुटियों को कम करके डेटा की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है। इससे न सिर्फ जनगणना में एकत्र आँकड़ों की विश्वसनीयता में वृद्धि होगी बल्कि इससे सरकार को योजनाओं में अपेक्षित बदलाव करने में भी मदद मिलेगी।
- समाज में जनगणना के महत्त्व के प्रति लोगों को जागरूक करने के लिये बड़े पैमाने पर जन-जागरूकता अभियानों का आयोजन किया जाना चाहिये।
- लोगों को जनगणना के महत्त्व के प्रति जागरूक और शिक्षित करने के लिये जन-जागरूकता अभियानों में स्थानीय राजनीतिक और धार्मिक नेताओं, छात्रों आदि को शामिल किया जाना चाहिये। साथ ही जनगणना के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाने के लिये विभिन्न कार्यक्रमों जैसे- नुक्कड़ नाटक आदि का आयोजन किया जा सकता है।

नोट :

महत्त्व

- जनगणना बृहत् स्तर पर आँकड़े एकत्र करने की एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसके तहत देश के जनसांख्यिकीय लाभांश के बारे में जानकारी इकट्ठा की जाती है। जो देश के नीति निर्माण के साथ कई अन्य उद्देश्यों के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
- जनगणना के माध्यम से एकत्र किये गए आँकड़ों का प्रयोग शासन, प्रशासन, योजनाओं और नीतियों के निर्माण तथा उनके प्रबंधन के साथ सरकार,स्वयंसेवी संस्थाओं, निजी एवं व्यावसायिक निकायों द्वारा चलाए गए विभिन्न कार्यक्रमों के मूल्यांकन आदि में होता है।
- जनसांख्यिकी, अर्थशास्त्र, मानव विज्ञान, और कई अन्य क्षेत्रों के विद्वानों तथा शोधार्थियों के लिये भारत की जनगणना से प्राप्त आँकड़े का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत रहा हैं। जनगणना से प्राप्त आँकड़े ज़मीनी स्तर पर प्रशासनिक अधिकारियों के लिये उपलब्ध होते हैं, जिससे क्षेत्र विशेष के विकास हेतु आवश्यक निर्णय लिये जा सकते हैं।
- वित्त आयोग राज्यों के लिये अनुदान का निर्धारण जनसंख्या के आधार पर करता है। ऐसे में जनगणना से प्राप्त जनसंख्या संबंधी ये आँकड़े राज्यों को दिये जाने वाले अनुदान के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- जनगणना के आँकड़ों के आधार पर ही लोकसभा, विधानसभा एवं स्थानीय निकायों के निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन किया जाता है।

दृष्टि The Vision

नोट :

आंतरिक सुरक्षा

नक्सलवाद: कारण और निवारण

संदर्भ

इस समय भारत कोरोना वायरस के संकट से जूझ रहा है। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (Indian Council of Medical Research-ICMR) के अनुसार, कोरोना वायरस के कारण देश में अभी तक 12 लोगों की मृत्यु हो चुकी है। इस भीषण संकट की घड़ी में बरबस ही एक खबर ने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। यह खबर छत्तीसगढ़ के सुकमा में स्पेशल टास्क फोर्स और डिस्ट्रिक्ट रिज़र्व गार्ड के जवानों पर हुए जानलेवा नक्सल हमले से संबंधित थी। इस घातक हमले में 17 जवान शहीद हो गए और 14 जवान घायल हुए हैं।

निश्चित ही आज यह प्रश्न विचारणीय है कि नक्सलवाद मूल रूप से कानूनी समस्या है या विषमता से उत्पन्न लावा है। विचारकों का एक वर्ग जहाँ नक्सलवाद को आतंकवाद जैसी गतिविधियों से जोड़कर इसे देश की आतंरिक सुरक्षा के लिये सबसे बड़ी चुनौती मानता है तो दूसरा वर्ग इसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विषमताओं एवं दमन-शोषण की पीड़ा से उपजा एक स्वत: स्फूर्त विद्रोह समझकर इसका पक्षपोषण करता है।

"हाँ, अब हमने उठा ली हैं तुम्हारे खिलाफ बंदूक
तुम जो समझते हो तमंचों की भाषा"

इस आलेख में नक्सलवाद, नक्सलवाद के कारण व उससे उपजी परिस्थितियों का विश्लेषण करने का प्रयास किया जाएगा। इसके साथ ही इस समस्या से निपटने में सरकार के द्वारा किये जा रहे प्रयासों की भी समीक्षा की जाएगी।

नक्सलवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि

- भारत में नक्सली हिंसा की शुरुआत वर्ष 1967 में पश्चिम बंगाल में दार्जिलिंग ज़िले के नक्सलबाड़ी गाँव से हुई थी। नक्सलबाड़ी गाँव के नाम पर ही उग्रपंथी आंदोलन को नक्सलवाद कहा गया।
- ज़मींदारों द्वारा छोटे किसानों पर किये जा रहे के उत्पीड़न पर अंकुश लगाने के लिये भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ नेता सामने आए। इन नेताओं में चारू मजूमदार, कानू सान्याल और कन्हाई चटर्जी का नाम प्रमुख है।
- कुछ कम्युनिस्टों द्वारा गुरिल्ला युद्ध के ज़रिये राज्य को अस्थिर करने के लिये हिंसा का इस्तेमाल किया जाता है। इसे ही नक्सलवाद कहा जाता है। भारत में ज़्यादातर नक्सलवाद माओवादी विचारधाराओं पर आधारित है। इसके ज़रिये वे मौजूदा शासन व्यवस्था को उखाड़ फेंकना चाहते हैं और लगातार युद्ध के ज़रिये 'जनताना सरकार' लाना चाहते हैं।
- भारत में जहाँ वामपंथी आंदोलन पूर्व सोवियत संघ से प्रभावित था वहीँ आज का माओवाद चीन से प्रभावित है। ये मौजूदा माओवाद हिंसा और ताकत के बल पर समानांतर सरकार बनाने का पक्षधर है। इसके अलावा अपने उद्देश्य के लिये ये किसी भी प्रकार की हिंसा को उचित मानते हैं।
- इसके साथ ही इन दिनों शहरी नक्सलवादी गतिविधियाँ भी देखने को मिल रही हैं।

शहरी नक्सलवाद

- विगत कुछ वर्षों में शहरी नक्सलवाद या अर्बन नक्सलिज़्म शब्द बड़ी तेजी से सामने आया है। शहरी नक्सलवाद से मतलब, उन शहरी आबादी में रहने वाले लोगों से हैं जो प्रत्यक्ष तौर पर तो नक्सलवादी नहीं है, लेकिन वो नक्सलवादी संगठनों के प्रति और उनकी गतिविधियों के प्रति सहानुभूति रखते हैं।
- कई बार इन पर नक्सलियों के लिये युवाओं की भर्ती मदद करने का भी आरोप लगता रहा है।

नोट :

नक्सलवाद के चरण

- प्रथम चरण- वर्ष 1967 से 1980 तक का समय नक्सलवादी गतिविधियों का प्रथम चरण था। इसका प्रथम चरण मार्क्सवादी-लेनिनवादी-माओवाद पर आधारित था, अर्थात यह 'वैचारिक और आदर्शवादी' आंदोलन का चरण रहा है। इस चरण में नक्सलवादियों को 'ज़मीनी अनुभव तथा अनुमान की कमी' देखने को मिली। इस चरण में नक्सलियों को ''राष्ट्रीय पहचान" अवश्य मिली।
- द्वितीय चरण- वर्ष 1980 से 2004 तक का समय ज़मीनी अनुभव, ज़रुरत और आवश्यकता के आधार पर चलने वाला क्षेत्रीय नक्सली गतिविधियों का दौर था। इस चरण में नक्सलवाद का व्यवहारिक विकास हुआ।
- तृतीय चरण- वर्ष 2004 से वर्तमान में ज़ारी इस चरण में नक्सलियों का 'राष्ट्रीय स्वरूप' उभरा और 'विदेशी संपर्क' बढ़े, जिससे अब नक्सलवाद राष्ट्र की 'सबसे बड़ी आंतरिक चुनौती' बनकर उभरा।

नक्सलवाद की उत्पत्ति के कारण

- नक्सलियों का कहना है कि वे उन आदिवासियों और गरीबों के लिये लड़ रहे हैं, जिनकी सरकार ने दशकों से अनदेखी की है। वे ज़मीन के अधिकार एवं संसाधनों के वितरण के संघर्ष में स्थानीय सरोकारों का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- माओवाद प्रभावित अधिकतर इलाके आदिवासी बहुल हैं और यहाँ जीवनयापन की बुनियादी सुविधाएँ तक उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन इन इलाकों की प्राकृतिक संपदा के दोहन में सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की कंपनियों ने कोई कमी नहीं छोड़ी है। यहाँ न सड़कें हैं, न पीने के लिये पानी की व्यवस्था, न शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ और न ही रोज़गार के अवसर।
- नक्सलवाद के उभार के आर्थिक कारण भी रहे हैं। नक्सली सरकार के विकास कार्यों के कार्यान्वयन में बाधा उत्पन्न करते हैं। वे आदिवासी क्षेत्रों का विकास नहीं होने देते और उन्हें सरकार के खिलाफ भड़काते हैं। वे लोगों से वसूली करते हैं एवं समांतर अदालतें लगाते हैं।
- प्रशासन तक पहुँच न हो पाने के कारण स्थानीय लोग नक्सलियों के अत्याचार का शिकार होते हैं।
- अशिक्षा और विकास कार्यों की उपेक्षा ने स्थानीय लोगों एवं नक्सलियों के बीच गठबंधन को मज़बूत बनाया है।
- सामाजिक विषमता ही वर्ग संघर्ष की जननी है। आज़ादी के बाद भी इस विषमता में कोई कमी नहीं आयी। नक्सलियों के लिये यह एक बड़ा मानसिक हथियार है।
- शासन की जनहित के लिये बनने वाली योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन में गंभीरता, निष्ठा व पारदर्शिता का अभाव रहता है जिससे वंचितों को भड़काने और नक्सलियों की नई पौध तैयार करने के लिये इन माओवादियों को अच्छा बहाना मिल जाता है।
- आम जनता को अब यह समझ में आने लगा है कि सत्ता के केंद्र में बैठे लोगों में न तो सामाजिक विषमतायें समाप्त करने, न भ्रष्टाचार को प्रश्रय देना बंद करने और न ही नक्सली समस्या के उन्मूलन के प्रति लेशमात्र भी राजनीतिक इच्छाशक्ति है। आर्थिक घोटालों के ज्वार ने नक्सलियों को देश में कुछ भी करने की मानसिक स्वतंत्रता प्रदान कर दी है।

सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयास

- आमतौर पर कानून-व्यवस्था राज्य सूची का विषय होता है यानी राज्य में कानून और व्यवस्था बनाए रखने का काम संबंधित राज्य का होता है। लेकिन नक्सलवाद की विकटता को देखते हुए वर्ष 2006 में तत्कालीन प्रधानमंत्री ने इसको राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा के लिये सबसे बड़ी चुनौती बताया। उसके बाद गृह मंत्रालय में नक्सलवाद की समस्या से निपटने के लिये एक अलग प्रभाग बनाया गया।
- सरकार वामपंथी चरमपंथ से प्रभावित क्षेत्रों में बुनियादी ढाँचे, कौशल विकास, शिक्षा, ऊर्जा और डिजिटल कनेक्टिविटी के विस्तार पर काम कर रही है।
- सरकार वामपंथी अतिवाद से प्रभावित क्षेत्रों में सड़कें बनाने की योजना पर तेज़ी से काम कर रही है और वर्ष 2022 तक 48,877 किमी. सड़कें बनाने का लक्ष्य रखा गया है।
- वर्ष 2013 में आजीविका योजना के तहत 'रोशनी' नामक विशेष पहल की शुरूआत की गई थी ताकि सर्वाधिक नक्सल प्रभावित ज़िलों में युवाओं को रोज़गार के लिये प्रशिक्षित किया जा सके।
- वर्ष 2017 में नक्सल समस्या से निपटने के लिये केंद्र सरकर ने आठ सूत्रीय 'समाधान'नाम से एक कार्ययोजना की शुरुआत की है।

नोट :

समाधान पहल

ऑपरेशन 'समाधान' भारत में नक्सली समस्या को हल करने के लिये गृह मंत्रालय द्वारा शुरू की गई एक पहल है। समाधान से तात्पर्य है-

- S-Smart leadership (कुशल नेतृत्व)
- A-Aggressive strategy (आक्रामक रणनीति)
- M-Motivation and training (अभिप्रेरणा एवं प्रशिक्षण)
- A-Actionable intelligence (अभियोज्य गुप्तचर व्यवस्था)
- D-Dashbord based key performance indicators and key result area (कार्ययोजना आधारित प्रदर्शन सूचकांक एवं परिणामोन्मुखी क्षेत्र)
- H-Harnessing technology (कारगर प्रौद्योगिकी)
- A-Action plan for each threat (प्रत्येक रणनीति की कार्ययोजना)
- N-No access to financing (नक्सलियों के वित्त-पोषण को विफल करने की रणनीति)
- सर्वाधिक नक्सल प्रभावित 30 ज़िलों में जवाहर नवोदय विद्यालय और केंद्रीय विद्यालय संचालित किये जा रहे हैं।
- हिंसा का रास्ता छोड़कर समर्पण करने वाले नक्सलियों के लिये सरकार पुनर्वास की भी व्यवस्था करती है।

नक्सल समस्या के समाधान में आने वाली चुनौतियाँ

- दरअसल नक्सलवाद सामाजिक-आर्थिक कारणों से उपजा था। आदिवासी गरीबी और बेरोज़गारी के कारण एक निचले स्तर की जीवनशैली जीने को मज़बूर हैं। स्वास्थ्य-सुविधा के अभाव में गंभीर बीमारियों से जूझते इन क्षेत्रों में असामयिक मौत कोई आश्चर्य की बात नहीं।
- आदिवासियों का विकास करने के बजाय, उन्हें शिक्षा, चिकित्सा सेवा और रोजगार देने के बजाय उन्हें परेशान करने के नए-नए कानून बनाए जाते हैं।
- आर्थिक असमानता, भ्रष्टाचार, खेती की दुर्दशा अभी भी जस की तस बनी हुई है। यकीनन इस तरह की समस्यायों में हमेशा असंतोष के बीज होते हैं, जिनमें विद्रोह करने की क्षमता होती है।
- इन्हीं असंतोषों की वजह से ही नक्सलवादी सोच को बढ़ावा मिल रहा है। इससे बड़ी विडंबना ये है कि हमारी सरकारें शायद इस समस्या के सभी संभावित पहलुओं पर विचार नहीं कर रही।
- इसके साथ ही बुनियादी ढाँचे का अभाव तथा प्रशिक्षित मानव संसाधनों और संचार सुविधाओं की कमी है।
- नक्सलियों द्वारा अंतर्राज्यीय सीमा का लाभ उठाया जाना तथा केंद्र और राज्यों तथा अन्य राज्यों के बीच आपसी समन्वय का अभाव।

आगे की राह

- एक तरफ जहाँ इस समस्या की वजह आर्थिक और सामाजिक विषमता समझी जाती रही है, वहीं दूसरी ओर इसे अब एक राजनीतिक समस्या भी समझा जाने लगा है। यही कारण है कि जानकारों की नज़रों में नक्सलवाद सियासी दलों का एक 'चुनावी तवा' है जिस पर मौका मिलते ही रोटी सेंकने की कोशिश की जाती है।
- ऐसा इसलिये भी कहा जाता है क्योंकि, हमारी सरकारें लगातार संविधान की पाँचवीं अनुसूची को तरजीह देने से कतराती रही हैं। गौरतलब है कि इस अनुसूची में अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण से जुड़े मामले आते हैं।
- पाँचवीं अनुसूची के तहत अनुसूचित क्षेत्रों में Tribes Advisory Council की स्थापना की बात की गई। दरअसल, इन क्षेत्रों में Advisory Council एक तरह की पंचायत है जो आदिवासियों को अपने क्षेत्रों में प्रशासन करने का अधिकार देती है। इस कौंसिल में अधिकतम 20 सदस्य होते हैं जिनके तीन-चौथाई सदस्य वे होते हैं जो संबंधित राज्य की विधान सभा में अनुसूचित क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- यह सार्वभौमिक सत्य है कि हिंसा से प्राप्त की हुई व्यवस्था ज्यादा दिन तक चल नहीं पाती और अंतत: टूट जाती है। दूसरी ओर सरकार को भी कानून-व्यवस्था की समस्या से ऊपर उठकर इनकी मूलभूत समस्याओं को दूर करने के प्रयास करने चाहिये।

नोट :